तन्त्र-विद्या

साधना सिद्धि और सैक्स

आचार्य सत्यानन्द

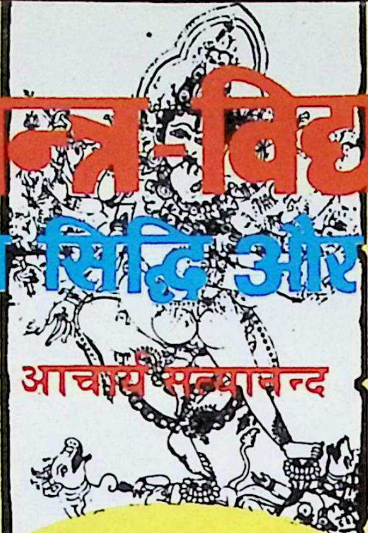

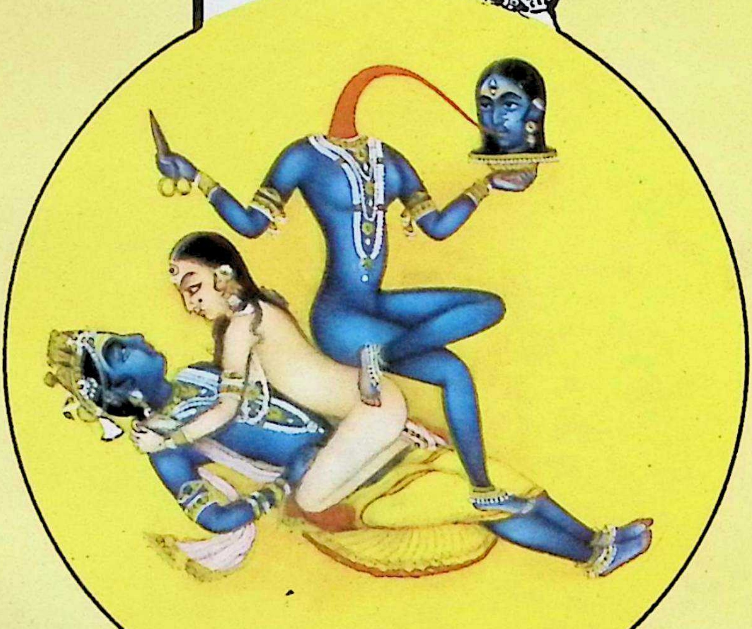

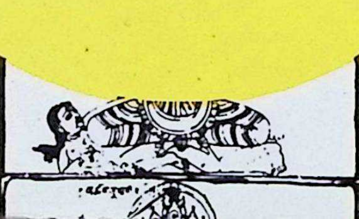

तन्त्र-विद्या

तन्त्र-मार्ग के अनुसार ऐश्वर्य-भोग-सम्भोग और इन्द्रिय सुख भोग से तृप्त हुआ मनुष्य पूर्ण विश्वास से आगे बढ़ता है। जो काम-तृप्त नहीं होता, कामवासना उस पर छाई रहती है। सब प्रकार के कुकर्म, हिंसा और अनिष्ट कामवासना की अतृप्ति के कारण होते हैं; अतः तन्त्र-मार्ग काम-तृप्ति की पूरी छूट देता है, परन्तु जो काम-तृप्ति पर ही रुक जाता है तथा उपासना और साधना की अगली सीढ़ी पर नहीं चढ़ता; तन्त्र में उसे पशु कहा गया है।

साधना द्वारा साधक को जब सिद्धि प्राप्त हो जाती है तो वह वशीकरण; मारण, दृष्टिबन्ध, प्रेत-विद्या, सर्प-विद्या, भविष्य-ज्ञान, मोहन-मन्त्र आदि अनेक विद्याओं द्वारा अपनी इच्छानुसार कार्य-सिद्धियां करने के योग्य हो जाता है। इस पुस्तक में तन्त्र-विद्या : साधना, सिद्धि और सेक्स को बड़े कौशल तथा बारीकी से प्रस्तुत किया गया है।

तंत्र-विद्या

साधना, सिद्धि और सेक्स

आचार्य सत्यानन्द

आनंद पेपरबैक्स
दिल्ली • बम्बई

[सर्वाधिकार सुरक्षित। यह पुस्तक, या इसका कोई भी भाग लेखक या प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना, इलैक्ट्रॉनिक या यांत्रिक (जिसमें फोटोकॉपी, रिकार्डिंग भी सम्मिलित है) विधि से या सूचना संग्रह तथा पुनः प्राप्ति-पद्धति (रिट्रायबल) द्वारा किसी भी रूप में पुनः प्रकाशित, अनूदित या संचारित नहीं किया जा सकता। —प्रकाशक]

संस्करण 1993

तंत्र-विद्या : साधना, सिद्धि और सैक्स

© विज़न बुक्स प्रा. लि.

आनन्द पेपरबैक्स
मदरसा रोड, कश्मीरी गेट, दिल्ली-110 006
द्वारा प्रकाशित

कोणार्क प्रेस दिल्ली-110 006, द्वारा मुद्रित

कवर मुद्रण : रविन्द्र प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली-110 006

Tantra Vidya
by Acharya Satyanand

विषय-सूची

१. तान्त्रिक साधना में काम-पूजा . . ९-२९

भैरवी-चक्र, भैरवी-चक्र के प्रकार, तन्त्र-मार्ग में दीक्षा, पूजन के मन्त्र, शक्ति उपासना, शिव-शक्ति संगम, उपासना और आनन्द का संगम, नवयोनि-पूजन ।

२. तन्त्र के विषय . ३०-६३

तन्त्र-साधना की रीतियां, देवियां, मन्त्र जपने की दिशाएं, मन्त्र जपने के समय, मालाएं, मालाओं के डोरे, मालाओं के दानों की गिनती, जाप-उंगली, विशेष दिशाएं, मन्त्र-जाप के प्रकार, सामग्रियां, मुद्राएं, मंत्र-महिमा, मंत्र-साधना, मंत्र-सिद्धि के लक्षण, तंत्र-मार्ग के मंत्र तथा यन्त्र, अर्थ मंत्र तान्त्रिक मुद्राएं ।

३. तन्त्र-मार्ग में गुरु का स्थान ६४-७०

गुरु की महिमा, चोली मार्ग, तन्त्र-मार्ग में गुरु पूजा, शिष्य के लक्षण, तन्त्र-सिद्धि से लाभ, साधना का आधार ।

४. तन्त्र-विद्या : गुप्त विद्या ७१-९७

तंत्र साहित्य, बहिरंग साधना, तन्त्र के तीन मुख्य मार्ग, शक्ति की सत्ता, महाशक्ति के रूप, अर्धनारीश्वर, तन्त्र में योनि-पूजन की महिमा, तन्त्र-मार्ग में मैथुन, तान्त्रिक क्रियाएं, तन्त्र-दीक्षा, साधिका के साथ व्यवहार, तान्त्रिक साधना की स्थितियां, तन्त्र-साधना में ध्यान, साधिका क्या करे ?

५. कामवासना का स्वरूप ९८-१११

कामवासना का रहस्य, कामवावासना के विषय में तन्त्र का मत, तन्त्र-मार्ग में स्त्री-पुरुष की समानता, आनन्द का स्रोत ।

६. रज और वीर्य ११२-१२७

मनुष्य-शरीर के मुख्य तत्त्व, नारी स्वभाव ।

७. स्तम्भन तथा वाजीकरण १२८-१४४

साधक क्या करे ? पुरुष की स्तंभन-शक्ति, स्तम्भन और योनि-संकोचन आदि, लिंग का स्थूलीकरण, योनि-शोधन तथा संकोचन, स्तनों को कठोर करने के उपाय, योनि-संस्कार, स्त्रियों को स्खलित करने की औषधियां, तंत्र-साधना में त्याज्य नवयुवक साथी, तन्त्र-साधना में त्याज्य नवयुवती साथिन ।

८. कुण्डलिनी सिद्धि १४५-१५१

कुण्डलिनी को जगाना, अष्ट सिद्धि ।

९. **प्रेम-क्रीड़ा के विविध प्रकार** १५२-१७१

प्रेम, दर्शन, स्पर्श, प्रश्न, वशीकरण मन्त्र, सुगन्ध, रंग और प्रकाश, आलिंगन के भेद, संभोग-समय के आलिंगन, संवाहन, चुंबन, स्त्री को कामोत्तेजित करने की बाहरी क्रियाएं, स्त्री को उत्तेजित करने की भीतरी क्रियाएं, घर्षण की दस विधियां, स्त्री ऊपर होने पर घर्षण के भेद, पुरुष का अभिनय किनके लिए मना है ? तन्त्र के अनुसार स्त्रियों के कामोत्तेजना के स्थान।

१०. **संभोग के विविध आसन** १७२-१८८

विविध आसनों के कारण, पुरुषों की श्रेणियां, स्त्रियों की श्रेणियां, संभोग की स्थितियां, विचित्र संभोग, जल के अन्दर संभोग, पुरुषायित किसे कहते हैं ? पुरुषायित के कई कारण हो सकते हैं।

११. **संभोग या संगम** १८९-१९६

कामावेग के आधार पर संभोग के प्रकार, संभोग के आनन्द में स्त्री का योगदान, चरम सीमा के बाद, तन्त्र-विद्या में काम और संभोग।

१२. संज्ञाशून्यता की स्थिति में संभोग १९७-२०३

१३. तन्त्र और उपासना २०४-२१०

१४. तन्त्र-विद्या और विश्वास २११-२२०

१

तान्त्रिक साधना में काम-पूजा

एक बहुत बड़े कमरे में १५० सुन्दरियां, जिनमें कुछ कुंवारी भी थीं और १५० पुरुष एकत्र हुए थे। इतने मेंकौलाचार्य वहां आया। उसने व्याघ्र-चर्म शरीर पर लपेट रखा था। उसका सिर उस्तरे से मुंडा हुआ था। चेहरे पर लाली थी। माथे पर त्रिपुण्ड्र था। सिर के पीछे लम्बी चोटी लटक रही थी। यह तन्त्रमार्गियों का आध्यात्मिक गुरु था। वह अपने हाथ की बनाई देवी की एक मिट्टी की मूर्ति लाया था। भक्तों ने उस मूर्ति को बड़ी श्रद्धा से हीरे-मोतियों के गहने पहनाए।

कौलाचार्य की आज्ञा पाकर तन्त्र साधक भक्ति के गीत गाने लगे। फिर तान्त्रिक आचार्य एक-एक सुन्दरी के पास जाकर उसे सिर से पांव तक देखने लगा। उनमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र—चारों वर्णों की कुमारियां भी थीं। इनके अतिरिक्त पांच शक्तियां कही जाने वाली कुमारियां थीं—यवनी, योगिनी, रजकी (धोबी की लड़की), श्वपची (चाण्डाली) और कैवर्तकी (मल्लाह की लड़की)।

वसन्त ऋतु थी। रविवार था। रात्रि का आरम्भ था। कौलाचार्य ने एक सोलह वर्ष की सुन्दरी का हाथ पकड़ा और उसे एक ऊंचे मंच पर, जो इसी पूजन के लिए बनाया गया था, ला खड़ा किया। इस सुन्दरी का शरीर सुडौल था। कद ऊंचा था। कमल जैसे नयन थे, जिनमें लाल डोरे थे। सुन्दर हाथ थे। उसके कपोलों पर लाली थी। ओंठ सुर्ख थे। कौलाचार्य ने उस सुन्दरी के मस्तक

पर दोनों भौंहों के बीच सिंदूर से टीका लगाया। यह टीका आंख के आकार का था जिसे तीसरा नेत्र माना जाता है। देवी ने वरदान के रूप में अपना दायां हथ ऊंचा उठाया। कौलाचार्य ने मन्त्र बोलने आरम्भ किए—

आनन्द-भैरवीं देवीं वराभयलसत्कराभ्।
घोररूपां वरारोहां त्रिनेत्रां रक्तवाससम्॥
रक्तवर्णां महारौद्रीं सहस्र-भैरवान्विताम्।
ब्रह्म-विष्णु-महेशाद्यैः स्तूयमानां शिवां भजे॥

[आनन्दमयी भैरवी देवी को नमस्कार करता हूं जिसका सुन्दर हाथ अभय-दान देने की मुद्रा में उठा हुआ है। देवी घोर रूपवती है। इसके तीन नयन हैं। इसका कद सुन्दर रूप में ऊंचा है। इसके वस्त्र लाल हैं। इसका मुखड़ा लाल है। यह देवी बहुत भयंकर है। इसमें हजारों भैरव हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि सभी देवता इसकी स्तुति करते हैं।] इसके बाद कौलाचार्य ने मन्त्र बोला—

सह् क्ष म ल व र यीं आनन्द-भैरव्यै वौषट्।

और फिर 'गन्धं समर्पयामि' कहकर उस देवी पर इत्र छिड़का।
'पुष्पं समर्पयामि' कहकर पुष्प चढ़ाए।
'अक्षतं समर्पयामि' कहकर चावल चढ़ाए।
'धूपं समर्पयामि' कहकर धूप जलाई।
'दीपं समर्पयामि' कहकर दीप जलाया।

इसके बाद कौलाचार्य ने पुरुषों में से एक युवक ब्रह्मचारी को मंच पर ला खड़ा किया। युवक स्वस्थ, तरुण, ऊंचे कद का था। उसका पूजन इस मंत्र से किया—

रक्तवर्णं चतुर्बाहुं त्रिनेत्रं वरदं शिवम्।
जटाजूटधरं देवं वासुकी-कण्ठभूषितम्॥

कौलाचार्य ने पिटारी में से एक सांप निकाला और उस युवक के गले में माला की भांति डाल दिया। फिर गन्ध, अक्षत, धूप दीप से उसका पूजन किया। फिर वहां उपस्थित साधकों से कहा—

आनन्द-भैरव और आनन्द-भैरवी की एकता का ध्यान करो।

साधकों ने आंखें मूंदकर ध्यान करना और भजन बोलना आरम्भ किया। तब तक कौलाचार्य ने भैरवी को सारे वस्त्र उतार देने के लिए कहा। वस्त्र उतारकर अब वह बिल्कुल नग्न हो चुकी थी। उसके बाद कौलाचार्य ने भैरव को भी सारे वस्त्र उतारने को कहा।

साधकों ने आंखें खोलीं। उनके सामने भैरवी और भैरव बिल्कुल नग्न थे। धूप, अगरबत्ती के धुएं और दीप के प्रकाश में देव और देवी का तेज झलमला रहा था।

कौलाचार्य ने अपना व्याघ्रचर्म एक ओर फेंक दिया और फिर सभी साधकों से अपने-अपने वस्त्र उतार कर एक ओर रख देने को कहा। अब सभी साधक वस्त्रहीन हो गए थे।

इसके अनन्तर कौलाचार्य ने श्लोक बोला—

मद्यं मांसं च मीनं च मुद्रा मैथुनमेव च।
एते पंच मकाराः स्युः मोक्षदाः हि युगे युगे॥

[मद्य, मांस, मछली, मुद्रा और मैथुन—ये पांच मकार युग-युग में मोक्ष देनेवाले हैं।]

इतना कहकर कौलाचार्य ने भूमि पर सूखे आटे से नव-योन्यात्मक यन्त्र बनाया—

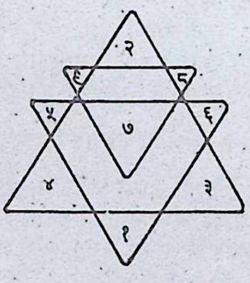

इस यन्त्र के ऊपर साधकों ने शराब का मटका लाकर रख दिया। कौलाचार्य ने उसमें से गिलास भरकर पहले भैरवी को पिलाया और फिर भैरव को। उसके बाद उसमें से एक गिलास शराब भरी। आधा गिलास पीकर बाकी आधी शराब उसी मटके में डाल दी। अब साधक बारी-बारी से आकर उस मटके में से शराब पीने लगे। मांस और मछली का भोग भैरवी और भैरव को लगाने के बाद कौलाचार्य ने कुछ भाग खाकर जूठा आधा भाग प्रसाद के थालों में डाल दिया, फिर साधकों को उसमें से प्रसाद बांटा। प्रसाद खा-खाकर साधक मटके में से शराब पीते जाते थे।

रात बीतती जा रही थी। साधकों को नशा चढ़ता जा रहा था। कौलाचार्य ने रोली लेकर भैरवी की योनि से मस्तक पर बनी तीसरी आंख तक एक रेखा खींची और उसके बाद सिंदूर लेकर भैरव के लिंग से लेकर मस्तक के टीके (तीसरी आंख) तक एक सीधी लकीर खींची। यह साधकों के लिए कुण्डलिनी में ध्यान लगाने का संकेत था। स्त्रियां भैरव के लिंग के चुंबन से और पुरुष भैरवी की योनि के चुंबन से उसका पूजन कर रहे थे।

कौलाचार्य मटके में से शराब भर-भरकर भैरवी और भैरव के गले पर बारी-बारी से उड़ेलने लगा। शराब भैरवी के स्तनों से बहती हुई नीचे योनि तक पहुंचती और साधक ओंठ लगाकर उस बहती हुई सुरा की कुछ बूंदें पी रहे थे। स्त्रियां (साधिकाएं) पुरुष के अंगों से बहती हुई सुरा को अपने अधर लगाकर पी रही थीं।

फिर एक भैंसे की, एक बकरे की और एक मुर्गे की बलि दी गई। चारों ओर खून बहने लगा। यह संकेत था संभोग का। पुरुष स्त्रियों को और स्त्रियां पुरुषों को विविध मुद्राएं दिखाने लगे। और जोड़े-जोड़े होकर अपने साथी के सामने मन्त्र पढ़ने लगे—

'अहं भैरव त्वं भैरवी, ह्यावयोरस्तु संगमः'

[मैं भैरव हूं, तुम भैरवी हो, आओ हमारा-तुम्हारा संगम हो।]

फिर वे काम-क्रीड़ा और मैथुन करने लगे। कौलाचार्य और कुछ साधक स्वर में स्वर मिलाकर मंत्र, श्लोक और गीत गाने लगे।

भजन के ऊंचे स्वर में मैथुन का स्वर, यौन-क्रियाओं और कामुक चेष्टाओं का स्वर मिल रहा था। हवनकुण्ड में मैसूरी चन्दन डाला जा रहा था, जिसकी सुगन्ध चारों ओर फैल रही थी।

कौलाचार्य ने भयंकर गरजती हुई आवाज में कहा कि मैथुन क्रिया साधकों द्वारा भैरवी और भैरव को प्रसन्न करने की एक क्रिया है।

स्त्री-पुरुष कामोन्मत्त होकर काम-क्रीड़ाएं और सम्भोग कर रहे थे। वे हर्ष और उन्माद के कारण अपनी सुध-बुध खो रहे थे। कौलाचार्य ने कहा—'ये काम-क्रीड़ाएं और सम्भोग एक धार्मिक कृत्य हैं। इसमें स्त्री-पुरुष अपने-अपने व्यक्तिगत रूप को भुलाकर भैरवी और भैरव—पार्वती और शिव रूप हो जाते हैं। प्रेम और सम्भोग में तन्मय होकर वे अभिन्न हो जाते हैं। परन्तु सब अपने पर पूरी तरह नियन्त्रण रखो, क्योंकि इस उपासना में वीर्य-पतन करना सबसे उत्तम है। जो अपने को वश में रख सकें, वे इसके लिए पूरा प्रयत्न करें। जो काम-वासना के आवेग की तीव्रता के कारण अपने को न रोक सकें, वे देवी के चरणों के पास रखे प्याले में अपना स्राव डालें।

जब यह प्याला ऊपर तक भर गया तो साधिकाएं और साधक बारी-बारी से जाकर उस प्रसाद को ओठों से लगाकर उसे देवी का चरणामृत समझकर पीने लगे। इस समय कौलाचार्य लगातार देवी से प्रार्थना करता रहा कि वह भक्तों पर अपने वरदान की वर्षा करे।

मांस, मछली, शराब और मैथुन देवी की निष्काम पूजा सम्बन्धी धार्मिक कृत्य थे जिन पर पूरी तरह विश्वास रखनेवाले साधक ही शामिल हो सकते थे। रात-भर कामक्रीड़ा और संभोग का चक्र चलता रहा। तांत्रिक उपासना में संभोग का बहुत महत्त्व माना जाता है और इसमें सभी मानवों को समान समझा जाता है। साधक भक्तों और साधिकाओं को इसमें कोई विचित्रता या कौतूहल नहीं अनुभव होता। कौलाचार्य ने उन्हें पहले ही उपदेश दे रखा है—

मद्यं मांसं च मीनं च मुद्रा मैथुनमेव च।
एते पंच मकाराः स्युः मोक्षदाःहि कलौ युगे ॥ (काली तन्त्र)

[इस कलियुग में मद्य, मछली, मांस, मुद्रा और मैथुन—इन पांचों की साधना मोक्ष की ओर ले जाती है।]

पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा यावत् पतति भूतले।
पुनरुत्थाय वै पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥

(महानिर्माण तन्त्र)

[शराब पिए, पीता रहे, बार-बार पिए, जब तक साधक ज़मीन पर न गिर पड़े, तब तक पीता रहे। वह उठे और उठ-उठकर पुनः पिए। इसके उपरान्त वह पुनर्जन्म के बंधन से मुक्त हो जाता है।]

कौलाचाराः सुरमकठिनः योगिनामप्यगम्यः। (कुलार्णव तन्त्र)

[कौल-मार्ग बहुत ही कठिन है। इसमें पारंगत होना इन्द्रियों के लिए भी परम गम्य है।]

प्रवृत्ते भैरवी-चक्रे सर्वे वर्णाः द्विजातयः।
निवृत्ते भैरवी चक्र सर्वे वर्णाः पृथक् पृथक् ॥

(कुलार्णव तन्त्र)

[भैरवी-चक्र आरम्भ होने पर सभी वर्णों के लोग द्विजाति (ब्राह्मण-क्षत्रिय) के बराबर हो जाते हैं और भैरवी-चक्र के समाप्त होने के बाद सभी वर्ण फिर अलग-अलग हो जाते हैं।]

इस प्रकार तन्त्र-मार्ग में जाति, वर्ण, वर्ग, धन्धे आदि का भेद-भाव नहीं किया जाता। छूतछात (अस्पृश्यता) के विचार को तन्त्र-मार्ग में पाप समझा जाता है। साधारणतः रजस्वला (माहवारी-वाली) औरत के साथ मैथुन नहीं किया जाता, परन्तु तन्त्र-मार्ग में इसका भी कोई निषेध नहीं। उनका मन्त्र है—

रजस्वला पुष्करं तीर्थं, चांडाली तुमहाकाशी।
चर्मकारी प्रयागः स्यात् रजकी मथुरा मता॥
अयोध्या पुक्कसी प्रोक्ता'''। (रुद्रयामल तन्त्र)

[(तन्त्र-मार्ग में नारी मात्र पवित्र है—) मासिक धर्म वाली पुष्कर तीर्थ के समान है, चांडाल की कन्या या स्त्री महान् काशी के समान, चमारिन प्रयाग के समान, धोबिन मथुरा के समान और पुक्कसी अयोध्या के समान संगम के लिए पवित्र हैं।]

तन्त्र-पूजन के उपकरण हैं—गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप, दीप, मद्य, मांस, मीन, मुद्रा, पात्राधार, योनि, लिंग और मैथुन।

तन्त्र-मार्ग में गुप्त भाषा खूब चलती है। इसके यहां तीर्थ का अर्थ है—शराब। पुष्प का अर्थ है मांस। तृतीया का अर्थ है—मछली—इसे जलतुम्बिका भी कहते हैं। चतुर्थी का अर्थ है-मुद्रा। पंचमी का अर्थ है-मैथुन यानी संभोग।

तन्त्र-मार्ग में गुरु के नाम हैं—कौलाचार्य, वामकौलेधर कौलिक, आर्द्र-वीर आदि।

शिष्य या साधक को शाम्भव, गण, भैरव आदि कहा जाता है।

शिष्या को सम्भवी, भैरवी, देवी आदि नाम दिए जाते हैं।

यदि कोई अन्य व्यक्ति इनकी सभा में आ जाए, तो संकेत से दूसरों को बताकर उसे बाहर निकाल दिया जाता है। बाहर निकालने के लिए स्पष्ट नहीं कहा जाता—केवल कंटक, विमुख, दुर्मुख या शुष्कपशु कहने से ही दूसरे साधक समझ लेते हैं कि वह बाहर का व्यक्ति आ गया है।

तन्त्र-मार्गी लोग अपनी साधना और अपने तन्त्र-ग्रन्थों को वेद, शास्त्र, पुराणों से अधिक मानते हैं। उनका मत है—

वेदशास्त्रपुराणानि सामान्य-गणिका इव।
एकैव शाम्भवी मुद्रा गुप्त कुलवधूरिव॥
(ज्ञानसंकलनी तंत्र)

[वेद, शास्त्र तथा पुरांण पुस्तकें सामान्य वेश्या के तुल्य हैं। एक

शाम्भवी मुद्रा ही सुरक्षित कुलवधू के समान पवित्र है।]

भैरवी-चक्र के समय संभोग से पूर्व वे संगम के लिए चुने संगी से कहते हैं—

अहं भैरव त्वं भैरवी ह्यावयोरस्तु संगमः।

[मैं भैरव हूं, तुम भैरवी हो, आओ हमारा-तुम्हारा संगम हो जाए।]

परन्तु जब बाहर के व्यक्ति के सम्मुख कहना हो तो 'पञ्चर्मा' कहकर संकेत देंगे, "मैं मैथुन के लिए तैयार हूं" और बाहर के व्यक्ति के पल्ले कुछ नहीं पड़ता।

भैरवी-चक्र

भैरवी-चक्र में कौलाचार्य भूमि. पट्ट या चौकी पर एक बिन्दु, त्रिकोण, चतुष्कोण आदि चक्र बनाकर उसपर मद्य का घड़ा रखकर उसकी पूजा करते हैं। फिर मंत्र पढ़ते हैं—

ब्रह्मशापं विमोचय।

[ब्रह्म शाप को दूर करो।]

इसके साथ धूप, अगुर्वतिका एवं दीप जलाते हैं। दीप भिन्न-भिन्न आकार के होते हैं—

तन्त्र-मार्ग में स्त्री-पुरुष सहवास को शास्त्र-रूढ़ि-समाज अर्थात् लोकबन्धनों से मुक्ति का एकमात्र साधन माना जाता है। उनका मत है—

पाशबद्धो भवेज्जीवः पाशमुक्तः सदाशिवः।

[(कामवासना की वर्जना के) पाश में बंधा हुआ मनुष्य (साधारण) जीव (पशु-तुल्य) रह जाता है और जो इस बंधन से मुक्त हो जाता है, वह सदा-शिव हो जाता है।]

पद्मनाभ पुरम का दीप (भित्ति चित्र)
१८ वीं सदी

उनका कथन है कि सप्ताह में पांच बार तथा उन्मुक्त रूप से मैथुन करनेवाले स्त्री-पुरुष अन्य व्यक्तियों की तुलना में अधिक सहज, अधिक स्वस्थ तथा अधिक बुद्धिमान होते हैं। काम-वासना का हृदय तथा मस्तिष्क के साथ सीधा सम्बन्ध है। मैथुन से मस्तिष्क का तथा हृदय का खेद दूर होता है।

खेदात् स्त्रीपु प्रवृत्तिर्भवति

[खेद से स्त्रियों में प्रवृत्ति होती है।]

खेद दूर होने पर मन तथा मस्तिष्क शान्त हो जाते हैं। यौन-संबंधों में पूर्ण कामी व्यक्तियों के हृदय तथा मस्तिष्क रोगी नहीं होते। प्रायः लोग सप्ताह में चार बार मैथुन करते हैं परन्तु जो हृदय को उल्लसित रखना चाहता है, मस्तिष्क को शान्त रखना चाहता है, सुषुप्ति (गहरी निद्रा) का पूर्ण आनन्द प्राप्त करना चाहता है, तो उसे चाहिए कि संभोग में वृद्धि करे,तभी उसकी बुद्धि तीव्र होगी और कर्मों में कुशलता होगी।

किन्तु पाशमुक्त. होने का उपाय भैरवी-चक्र ही है। भैरवी-चक्र में सम्मिलित होनेवाले का हृदय विशाल हो जाता है, बुद्धि प्रखर हो जाती है।

तन्त्र में सबसे अधिक सम्मान नारी को दिया जाता है। जहां रूढ़िवादी नारी को 'नरक का द्वार' कहते हैं, वहां तन्त्र-मार्ग में उसको न केवल पुरुष के बराबर अधिकार दिया जाता है बल्कि उसे देवी का पद दिया जाता है, और किसी भी कुल की नारी को हेय नहीं माना जाता। कामशास्त्रों में नारी को संभोग की सहभागिनी भी स्वीकार किया जाता है। वह मैथुन में सक्रिय भाग ले, यह वांछनीय है परन्तु विवाह से पूर्व कौमार्य व ब्रह्मचर्य की भावना का नियन्त्रण नारी के मस्तिष्क पर ऐसा कठोर रहता है कि वह विवाह के बाद भी नहीं खुलती। संकोच, लज्जा तथा कुंठा में ही उसका जीवन व्यतीत हो जाता है। तन्त्र-मार्ग उसे प्रत्येक प्रकार के पाश से मुक्त करता है। स्त्री की काम-असंतुष्टि से उसे कई प्रकार की व्याधियां—श्वेत प्रदर, रक्त प्रदर, उन्माद आदि हो जाया करते हैं। भैरवी चक्र में सम्मिलित होनेवाली किसी नारी को ये रोग नहीं हो सकते। ऐसा कौलाचार्यों का मत है। भैरवी-चक्र में सम्मिलित होनेवाले स्त्री-पुरुषों का मस्तिष्क ही तीव्र नहीं होता, उन्हें चिरस्मरणीय आनन्द भी प्राप्त होता है। मनुष्य उदास और बुझा-बुझा नहीं रहता। भैरवी-चक्र में सम्मिलित होनेवाली नारी की कटुता दूर हो जाती है। फिर वह बात-बात पर काटने को नहीं दौड़ती। तन्त्र मार्गी एक नारी का कथन है—"मैं समझती हूं काम-वासना हमारे जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। ब्रह्मचर्य का विचार मस्तिष्क में बद्धमूल होने के कारण पुरुष

तथा कौमार्य की रक्षा की भावना हृदय में बद्धमूल होने के कारण स्त्री विवाह के बाद भी विवाह-पूर्व की भावना के पाश में बंधे रहते हैं। मैथुन का अर्थ केवल संतान की उत्पत्ति ही नहीं है। प्रकृति ने मनुष्य को जो अन्य जीवों व पशु-पक्षियों से अधिक वरदान दिए हैं, उनमें मैथुन की इच्छा व सम्भोग-शक्ति भी है। काम-क्रीड़ा और सम्भोग को पूजन का रूप देने के कारण शारीरिक ही नहीं, मानसिक तृप्ति भी मिलती है। प्रथम बार भैरवी चक्र में सम्मिलित होने के उपरान्त मनुष्य को एक विलक्षण आनन्द का अनुभव होता है। वह सोचता है कि लज्जा के कारण वह आनन्द के भंडार से अब तक कितना दूर रहा। आचार्य वात्स्यायन अत्यन्त बुद्धिमान थे। मैं उनकी प्रशंसक हूं। उन्होंने जीवन के उस महान् पक्ष को न केवल विस्तार से समझाया, अपितु मानव-मन की गहराइयों का विश्लेषण करने का प्रयत्न किया। परन्तु तन्त्र ने शारीरिक स्तर पर न लेकर कामवासना को आध्यात्मिक स्तर पर लिया है। मैं पहले अध्ययन में, सिलाई-बुनाई में, घर के कामों में, अपने बच्चे में बहुत अधिक व्यस्त रहा करती थी और अनुभव करती थी कि जल्दी ही बूढ़ी होती जा रही हूं, किन्तु एक बार भैरवी-चक्र में सम्मिलित होने के उपरान्त समझती हूं कि मेरे जीवन में भी वह क्षण आया और मैंने काम-तृप्ति का आध्यात्मिक महत्त्व समझा। अब मैं प्रसन्न हूं। मेरे पति महोदय मुझसे प्रसन्न रहते हैं क्योंकि हम हर रात सम्भोग करते हैं—जहां पहले महीना-महीना बीत जाता था। इससे हमारा स्वास्थ्य ठीक रहने लगा है और लगता है कि मस्तिष्क की गन्दगी धुल गई है। मैं उन्हें चाहती हूं—वह मुझे चाहते हैं और हम रचनात्मक योजनाएं बनाते हैं। क्या यह अद्भुत आश्चर्यजनक नहीं?"

भैरवी-चक्र के प्रकार

भैरवी-चक्र अनेक प्रकार के बनाए गए हैं। मुख्य प्रकार हैं—

१. राजचक्र—इसमें ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र—चारों वर्णों की कुमारियों का पूजन होता है। ये सभी सुन्दर तथा सुलक्षणा होनी चाहिए। इनके अतिरिक्त पांच शक्तियां यवनी, योगिनी, रजकी,

श्वपची (चाण्डाली) और कैवर्तकी पूज्या हैं।

२. महाचक्र—इस चक्र में माता, भगिनी, पुत्री, वीरपत्नी तथा गुरुपत्नी—ये पांच शक्तियां पूज्य हैं। पूजा-द्रव्य हैं—मद्य, मुर्गे का मांस, रोहित (रोहू), मछली, माष (उड़द) के बने पदार्थ। लाल चन्दन, कनेर पुष्प से पूजन किया जाता है और यह गुरुवार या शुक्रवार तथा चतुर्थी को किया जाता है। इसमें काम-पूजन नहीं होता।

३. देवचक्र—इसमें रजकीर (धोबिन), चर्मकारी (चमारिन), रजस्वला, मातंगी और मधुमत्ता (शराब पीकर मतवाली हुई कुंवारी) ये छः शक्तियां पूज्य हैं। इसका यजन रहस्यपूर्ण है। इसमें कामपूजन, योनिपूजन, लिंगपूजन आदि स्थान-देश-काल-पात्र के अनुसार सब चलता है। कहते हैं कि इससे राजसूय यज्ञ के समान फल मिलता है।

४. वीरचक्र—इसमें वेश्या, कौलाचार्य की पत्नी-बहन-कन्या, भांजी-भतीजी आदि, नर्तकी तीर्थ-वासिनी शक्ति, किसी भी जाति की कुमारी कन्या आदि शक्तियां पूज्य हैं। चमेली के फूल, चन्दन, कस्तूरी, इत्र आदि से पूजन होता है। अष्टमी-चतुर्दशी, नवमी सोमवार या मंगलवार को यह होता है। सफेद, पीले, लाल फूल पूजा में काम आते हैं। पशु-पक्षियों के मांस का यजन होता है।

५. पशुचक्र—इसमें मांस भोजन के बाद मद्यपान किया जाता है। आनंदपूर्वक भोगविलास किया जाता है। एकत्र हुए सभी व्यक्ति एक-दूसरे के सम्मुख लज्जा त्याग करके पशुवत् मैथुन करते हैं और स्त्री-पुरुष बदलकर पुनः सम्भोग करते हैं। इसमें शक्ति-पूजन या आध्यात्मिक भावना नहीं रहती, अतः इसे नरक का द्वार, भेद-भाव का नाश तन्त्र-ग्रन्थों में कहा गया है—

म्लेच्छेन श्वपचेनापि किरातेनापि हूणुना।
आमं पक्वं यदानीतं वीरहस्तार्पितं शुचि॥

[म्लेच्छ ने, चाण्डाल ने, किरात ने अथवा हूण ने भी कच्चा व पक्का जो भोज्य पदार्थ या भोजन लाकर वीर साधक के हाथ में रख दिया हो, वह तुरन्त पवित्र हो जाता है।]

इस तरह किसी भी प्रकार के तान्त्रिक चक्र में भक्ष्य-अभक्ष्य या भेदभाव का लेश नहीं रह जाता। चक्र में सम्मिलित सभी उपासक-उपासिकाएं भैरव और भैरवियां बन जाते हैं, कारण यह है कि उनमें देहाभिमान तनिक भी नहीं रह जाता। अतः देह-भेद यानी जाति-भेद का लेश भी नहीं रह जाता। चक्रार्चन के बाहर वर्णाश्रम कर्म का पालन अवश्य करना चाहिए।

तान्त्रिक चक्रों में सम्मिलित व्यक्ति की योग्यता के विषय में भी बहुत कुछ कहा गया है। 'निर्वाण-तन्त्र' में लिखा है—

नात्राधिकारः सर्वेषां ब्रह्मज्ञान् साधकान् विना।
परब्रह्मोपासकाः ये ब्रह्मज्ञाः ब्रह्मतत्पराः॥
शुद्धान्तःकरणाः शान्ताः सर्वप्राणिहिते रताः।
निर्विकाराः निर्विकल्पाः दयाशीलाः दृढव्रताः॥
सत्यसंकल्पकाः ब्राह्मास्त एवात्राधिकारिणः॥

[चक्र में सम्मिलित होने का अधिकार हर एक को नहीं है। जो ब्रह्म को जानने वाला साधक है, उसके सिवाय इसमें कोई शामिल नहीं हो सकता। जो ब्रह्म के उपासक हैं, जो ब्रह्म को जानते हैं, जो ब्रह्म को पाने के लिए तत्पर हैं, जिनके मन शुद्ध हैं, जो शान्तिचित्त हैं, जो सब प्राणियों की भलाई में लगे रहते हैं, जो विकार से रहित हैं, जो विकल्प (दुविधा) से रहित हैं, जो दयावान् हैं, जो प्रण पर दृढ़ रहनेवाले हैं, जो सच्चे संकल्प वाले हैं, जो अपने को ब्रह्ममय मानते हैं, वे ही तान्त्रिक चक्र में भाग लेने के अधिकारी हैं।]

तन्त्र-मार्ग में दीक्षा

तन्त्र-मार्ग में गुरु द्वारा शिष्य को दीक्षा दिए जाने का बहुत महत्त्व है। 'शारदा-तिलक तन्त्र' में लिखा है—

दिव्यं ज्ञानं यतो दद्यात् कुर्यात पापस्य संक्षयः।
तस्मात् दीक्षेति संप्रोक्ता देशिकैस्तन्त्र-वेदिभिः॥

[यह दिव्य ज्ञान देती है और पाप का नाश करती है इसलिए तन्त्र

के ज्ञानी विद्वान इसे दीक्षा कहते हैं।]

तान्त्रिक विधि के अनुसार गुरु द्वारा शिष्य को जो दीक्षा दी जाती है, उसके द्वारा शिष्य के जीवन का पूर्ण विकास होता है। इस दीक्षा के (अर्थात् शिष्य के जीवन-विकास के) आठ सोपान हैं—(१) शाक्ताभिषेक (२) पूर्णाभिषेक (३) क्रमदीक्षाभिषेक (४) साम्राज्याभिषेक (५) महासाम्राज्याभिषेक (६) योगदीक्षाभिषेक (७) पूर्णदीक्षाभिषेक (८) महापूर्णदीक्षाभिषेक।

पूजन के मन्त्र

संकल्प करते हुए देवी का ध्यान करना चाहिए। योनि मुद्रा का प्रदर्शन करते हुए भगवती को प्रणाम करना चाहिए। मूल नावार्णव मन्त्र से काष्ठ के मंच (चौकी) पर आधारशक्ति (मिट्टी की बनाई मूर्ति) की स्थापना करके शापोद्धार किया जाता है।

पहला मन्त्र (शापनाशन)

ॐ ह्रीं क्लीं श्रों क्रां क्रीं चण्डिका देव्यै शापनाशानुग्रहं कुरु स्वाहा।

—इस मन्त्र का आदि और अन्त में सात बार पाठ किया जाता है।

दूसरा मन्त्र (उत्कीलन)

ॐ श्रीं क्लीं ह्रीं चण्डिके उत्कीलनं कुरु कुरु स्वाहा।

—इस मन्त्र का पाठ आदि और अन्त में इक्कीस-इक्कीस बार किया जाता है।

तीसरा मन्त्र (मृतसञ्जीवनी विद्या जप)

ॐ ह्रीं ह्रीं वं वं ऐं ऐं मृतसञ्जीवनी विद्ये मृतमुत्थापयोत्थापय क्रीं ह्रीं वं स्वाहा।

—इस मन्त्र का पाठ आदि और अन्त में सात-सात बार होता है।

अन्तिम (चौथा) मन्त्र (शापविमोचन)

ॐ श्रीं श्रीं क्लीं हूं ॐ ऐं क्षोभय मोहय उत्कीलय उत्कीलय उत्कीलय ठं ठं।

—इस पाठ का आरम्भ में ही एक सौ आठ बार जाप किया जाता है, अन्त में नहीं।

नवशक्ति नमस्कार का श्लोक—

जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥

[जयन्ती, मंगला, काली, भद्रकाली, कपालिनी, दुर्गा, क्षमा, शिवा और धात्री—इन नव रूपों वाली हे शक्ति, तुझे स्वाहा, स्वधा, और नमस्कार हो।]

सिद्धि मन्त्र—

(१) ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे। ॐ ग्लौं हुं क्लीं जूं सः ज्वालय ज्वालय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ऐं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ज्वल हं सं सं क्षं फट् स्वाहा।

(२) अं कं चं टं तं पं यं शं वीं दुं ऐं वीं हं क्षं।
धिजाग्रं धिजाग्रं त्रोटय दीप्तं कुरु कुरु स्वाहा ॥

मांस और अन्न की बलि का मन्त्र—

मूलं निर्वाणेश्वरि महात्रिपुरसुन्दरि इदं पूजा-बलिं गृहाण गृहाण गृह्णापय गृह्णापय सर्वविघ्नान् नाशय नाशय सर्वमनोरथान् पूरय पूरय मह्यं ऋद्धिसिद्धं प्रयच्छ प्रयच्छ त्रिजगच्चैतन्यरूपिणि हूं फट् स्वाहा।

शक्ति उपासना

तन्त्र-मार्ग में पराम्बा शक्ति की उपासना प्रधान है। दक्षिण

भारत के मन्दिरों में अनेकों मूर्तियां ऐसी हैं जिनमें मैथुन की विभिन्न स्थितियां दृष्टिगोचर होती हैं। मद्य, मांस, मीन, मुद्रा और मैथुन इन पंचमकारों से शक्ति की पूजा की जाती है। तन्त्र के अनुसार यह संसार शक्ति का ही नर्तन है। यह नर्तन हर समय हो रहा है। शक्ति का शिव से मिथुन भी इसका एक अंश है। दोनों का मिथुन—द्वित्व ही सृष्टि है। स्त्री-पुरुष उसी द्वित्व के लघु-सांसारिक—दृश्य रूप हैं। स्त्री-पुरुष का मिथुन शक्ति-शिव के मिथुन का प्रतीक है। त्रिकोण का युगल—एक ऊर्ध्वशिरा और दूसरा अधःशिरा त्रिकोण-मिथुन है जो शिवा-शिव के चिरन्तन संयोग का प्रतीक है। स्त्री शक्ति का और पुरुष शिव का प्रतिनिधित्व करते हैं, अतः तंत्र-मार्ग में इनका मैथुन पूजन का प्रधान अंग है।

ऊर्ध्वमुखी त्रिकोण पुरुष के लिंग का और अधोमुखी त्रिकोण स्त्री की योनि का प्रतीक है।

त्रिकोण युगल

श्री गोविन्दशास्त्री ने अपने 'तन्त्र विज्ञान' में लिखा है—

शक्ति एवं तान्त्रिक दृष्टि से हड्डियां, चर्बी, खून, मांस व मेद शक्तिमूलक हैं। मज्जा, शुक्र, प्राण व जीव शिवमूलक हैं। ये पांच और चार नौ प्रतीक, चक्र के नौ कोणों के माध्यम से व्यक्त किए जाते हैं। पिण्ड में क्षुद्र रूप में विद्यमान ये तत्त्व ब्रह्माण्ड की अनन्तता में पांच तत्त्व शक्तिमूलक हैं, माया, शुद्धविद्या, सदाशिव व परमेश्वर चार तत्त्व शिवमूलक हैं। श्रीचक्र की आकृति पिण्ड और ब्रह्माण्ड का साम्य उपस्थित करती है जिनको तान्त्रिक मार्गदर्शन के रूप

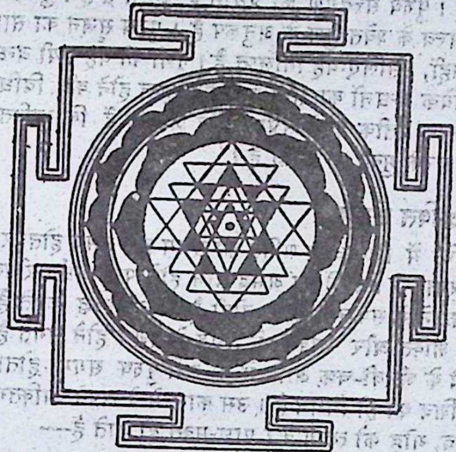

मान सकते हैं। आशय यह है कि तन्त्र के विस्तार को पार करता हुआ व्यक्ति तत्त्व और ब्रह्म के भेद को मिटाकर आत्मलाभ करे। तत्त्वों के आवरण को भेदता हुआ माया, शुद्धविद्या के सोपानों को

पार करता हुआ सदाशिव का साक्षात्कार परमशिव के साथ सायुज्य लाभ करें। यही श्रीचक्र का प्रतिपाद्य है।

"लौकिक दृष्टि से स्त्री और पुरुष भी शिव और शक्ति का प्रतीक हैं। दोनों ही सामान्य स्थिति में गुणात्मक सीमा में हैं। गुण विषम स्थिति में होते हैं, इसलिए संसार और सांसारिक माया की सीमा में हैं, माया के प्रतीक हैं। नारी रजोगुण की प्रतीक है अथवा नारी में रजोगुण अधिक प्रबल होता है। नारी के रजस्वला होने में रजोगुण ही प्रकट होता है अथवा रजोगुण सृजन करता है, इसलिए रजस् प्रवृत्ति के पश्चात् ही नारी सृजन करने की क्षमता प्राप्त करती है। पुरुष सत्त्वगुण का प्रधान है, निर्लिप्त है। पुरुष का शुक्र (वीर्य) सत्त्व के श्वेत गुण के अनुरूप है। पुरुष सृजन का साधक है, धारक नहीं, इसलिए वह निर्लिप्त है। गुणों की यह त्रयी बन्धन है। तन्त्र मायिक बन्धनों का ज्ञान कराकर मुक्त होने की विधि बताते हैं। तान्त्रिक प्रतीक इतने सप्राण और जीवन्त हैं कि व्यक्ति उनकी साधना करके मुक्त हो जाता है।"

शिव-शक्ति संगम

सृष्टि में शिव और शक्ति का संगम हर समय होता रहता है। वह चिरन्तन है। दोनों का अभेद ज्ञान होने पर 'अर्धनारीश्वर' का ध्यान करने में सफलता प्राप्त होती है, इसे सिद्धि कहते हैं। तब शिव में शक्ति और शक्ति में शिव के दर्शन होने लगते हैं। तन्त्र-मार्गियों के भैरवी-चक्र आदि में जो स्त्री-पुरुष संगम होता है, वह शक्ति-शिव का ही मिथुन है। उस काल में वे अपने व्यक्तिगत नाम, रूप, पद, मोह को त्याग कर पाश-मुक्त हो जाते हैं—

पाशबद्धो भवेत्जीवः, पाशमुक्तः सदाशिवः।

[पाश में बंधा जीव रहता है, पाश से मुक्त सदाशिव हो जाता है।]
तभी तो साधक कहता है—

अहं भैरवः त्वं भैरवी, ह्यावयोरस्तु संगमः।

[मैं भैरव हूं, तुम भैरवी हो, हम दोनों का संगम हो।]

उपासना और आनन्द का संगम

तान्त्रिक आचार्यों का मत है कि तन्त्र-मार्ग शक्ति और शिव का, कर्म और ज्ञान का, स्त्री और पुरुष का, उपासना और आनन्द का संगम है। तान्त्रिकों का मत है कि दोष पांच प्रकार के होते हैं (१) सहजदोष—काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार। (२) किसी देश-काल में किए गए नाना प्रकार के पाप। (३) लोक में भक्ष्य (खानें योग्य) और अभक्ष्य (न खाने योग्य) तथा वेद में बताए धैर्य, क्षमा, अचौर्य, इन्द्रियनिग्रह, सत्यादि। (४) संयोगज दोष—अर्थात् बुरे मनुष्य के संग से चोरी, जारी, गम्या (संभोग के योग्य) या अगम्या (संभोग के अयोग्य) से मैथुन करना (५) स्पर्शज—अर्थात् अस्पृश्यों (अछूतों) को स्पर्श करना—तन्त्र-मार्ग वाले इन पांच दोषों को नहीं मानते और यथेष्टाचार—सहज-स्वाभाविक आचरण में विश्वास रखते हैं। जो इन दोषों से दूर रहने का उपदेश देते हैं, उन्हें तन्त्र-मार्गी 'पाखण्डी' और 'झूठा' कहते हैं। तंत्र-मार्गियों का मत है कि लौकिक कल्याण और मोक्ष के लिए तन्त्रमत से बढ़कर कोई मत या मार्ग नहीं है। तन्त्र-मार्गी चेले आचार्य को बिना समर्पण किए कोई भी पदार्थ न भोगें। इसलिए आचार्य के चेले अपनी स्त्री, कन्या, पुत्रवधू और धन आदि पदार्थों को कौलाचार्य के समर्पण करते हैं। समर्पण का नियम यह है कि जब तक आचार्य जी की चरण सेवा में समर्पित न हो जाए तब तक स्वामी अपनी स्त्री को स्पर्श न करे। साधक समर्पण के पश्चात् अपने पदार्थ का भोग करें, क्योंकि स्वामी के भोग करने के पश्चात् समर्पण नहीं हो सकता। इसलिए सर्वप्रथम सब कामों में सब वस्तुओं का समर्पण करें—क्योंकि आचार्य को समर्पण करने का अर्थ है—ब्रह्मार्पण करना। सब वस्तुओं का समर्पण करके सबके बीच में ब्रह्म बुद्धि करे। उसके पश्चात् जैसे गंगा में अन्य जल मिलकर गंगा रूप हो जाते हैं, वैसे ही अपने मत में सम्मिलित होकर—तन्त्र-मार्गी बनकर तन्त्र-रूप हो जाना चाहिए। अपने मत में गुणों का वर्णन किया करें। अपना मत सब मतों से अधिक अपने प्रयोजनों को सिद्ध करने वाला है।

नवयोनि-पूजन

इसमें नौ योनियों की पूजा की जाती है। इसमें कौलाचार्य अपने हाथ से बनाई मिट्टी की मूर्ति को तरह-तरह के रंगों से रंगकर, हीरे-मोती के गहने पहनाकर उसकी पूजा करता है। इसमें देवी के भोग के लिए पशु-पक्षियों का मांस लाया जाता है। शराब के मटके लाकर रखे जाते हैं। साधक शक्ति का गुणगान करते और भजन गाते हैं। कौलाचार्य हवन-कुण्ड में अग्नि प्रज्वलित करता है। देवी के आगे धूप, अगरबत्ती, दीप जलाता है। हवन-कुण्ड में सामग्री, घी, अनाज आदि की आहुतियां देता है। मांस की आहुतियां देकर फिर सब वस्तुओं की एक-एक आहुति साधक भक्तों से दिलाई जाती है। हवन-कुण्ड में अग्नि जलती रहती है। इसके अनन्तर हर एक साधक को देवी का प्रसाद दिया जाता है। तरह-तरह की तेज़ मदिरा मिलाकर, अन्न और मांस के साथ सबको प्रसाद के रूप में दी जाती है। दो घंटे तक शराब पीने का दौर चलता है। जब साधकों को नशा चढ़ चुकता है तो कौलाचार्य की आज्ञा से नौ कुंवारी युवतियों को लाया जाता है जिनकी उम्र बारह से सोलह वर्ष तक होती है। युवतियों में—योगिनी, साधुनी, रजकी (धोबी की लड़की), श्वपची (चाण्डाल की लड़की), कैवर्तकी (मल्लाह की लड़की), चर्मकारी (चमार की लड़की), पहली बार रजस्वला बाला, कौलाचार्य की पुत्री-भतीजी या भांजी, नर्तकी (नाचने वाली) तीर्थ-वासिनी शक्ति—ये नौ लड़कियां होती हैं, जिन्हें नशे में चूर और नंगी करके लाया जाता है। साधिकाएं और साधक इन नौ कुमारियों का पूजन करते हैं। उधर कौलाचार्य ऊंचे स्वर में भजन गाता रहता है और साधक उसके पीछे-पीछे बोलकर स्वर को दोहराते रहते हैं। स्वर ज़ोर पकड़ता है, वेग तीव्र होता है और तब कौलाचार्य पुरुषों और स्त्रियों को आज्ञा देता है कि वे एकदम नंगे होकर देवी के सामने मैथुन करें। साधक तान्त्रिक कृत्यों के धार्मिक पक्ष से इतने प्रभावित रहते हैं कि ऐसे अवसरों पर वहां और कोई सम्बन्ध नहीं रहता और स्त्री तथा पुरुष का ही सम्बन्ध शेष रह जाता है। स्त्री को शक्ति का प्रतीक और पुरुष को शिव का प्रतीक मानकर दोनों के संगम से

'अभेद' स्थापित किया जाता है और इसे आध्यात्मिक उन्नति का सर्वोत्तम उपाय माना जाता है। स्त्री-पुरुष की रति-क्रिया या सम्भोग-कर्म का अपने-आप में कोई महत्त्व नहीं, उसे तो साधकों-साधिकाओं द्वारा देवी को प्रसन्न करने की एक क्रिया माना जाता है। उधर नशे में चूर स्त्री-पुरुष कामोन्मत्त होकर कामुक आचरण, काम-क्रीड़ा और मैथुन में लीन होते हैं, उधर भक्ति के मद में मस्त साधक नृत्य और गान में लीन रहते हैं। चन्दन, अगर, हवन-सामग्री, घी, अन्न, मांस और सुरा की आहुतियां हवन-कुण्ड में डालना जारी रहता है और सुगन्धि चारों ओर फैलती रहती है। नवयोनि-पूजन में केवल वे ही व्यक्ति सम्मिलित हो सकते हैं, जो विधि के अनुसार दीक्षा ले चुके हों तथा जिनकी भली भांति परीक्षा ली जा चुकी हो। अपरिचित या कुपात्र को नवयोनि-पूजन में सम्मिलित होने का अधिकार नहीं होता।

तन्त्र-मार्ग के ग्रन्थों का मत है कि मनुष्य की सृष्टि के उद्देश्य से धार्मिक कर्मकाण्ड के रूप में स्त्री-पुरुष को मैथुन की व्यवस्था है। आपस में मैथुन-लीन स्त्री-पुरुष वास्तव में ईश्वर की आज्ञा का ही अनुसरण करते हैं और तल्लीनता, तन्मयता के उस परम आनन्द की अवस्था में स्वयं ब्रह्म रूप हो जाते हैं। उस समय कौलाचार्य यह मंत्र पढ़ता है—

ह्लीं आनन्दः प्राणदश्चैव प्राणश्चान्येन जायते।
कालि कालि महाकालि चरुभक्षिणि हुं स्वाहा।
ऊं फट् नमः स्वाहा॥

[यह आनन्द प्राणों में शक्ति भरने वाला है। अन्य के संगम में प्राण-शक्ति बढ़ती है। हे कालि, हे कालि, हे महाकालि! हे चरु (अन्न-मांस-मदिरा की बलि) खाने वाली! यह तुम्हारे अर्पण है। मैं ऊं (ईश्वर का नाम लेकर) तुम्हें नमस्कार करता हूं और तुम्हारी स्तुति का गान करता हूं।]

२

तन्त्र के विषय

तन्त्र-साधना करने की रीतियां

तन्त्र, मन्त्र, यन्त्र साधना करने की छः रीतियां हैं—

१. शान्तिकर्म—रोगों और ग्रहों की शान्ति के उपाय।

२. वशीकरण—(मोहन) राजा, प्रजा, पशु, हर एक स्त्री तथा पुरुष को वशीभूत करना।

३. स्तम्भन—वीर्य को जल्दी स्खलित होने से रोकना, चलते हुए मनुष्य को खड़ा कर देना या किसी काम को करने से रोकना।

४. विद्वेषकर्म—दो मनुष्य मिलकर साधक का अपकार कर रहे हों तो उन दोनों में वैर पैदा कर देना।

५. उच्चाटन—किसी को उसके स्थान, पद, अधिकार या देश से उखाड़ देना।

६. मारण—अपने प्राणों के अन्त का संकट आने पर शत्रु को मारने की विधि।

देवियां

(१) शान्तिकर्म—इसकी देवी 'अधिका' कहलाती है। (२) वशीकरण—इसकी देवी सरस्वती है। (३) स्तम्भन कर्म—इसकी देवी लक्ष्मी है। (४) विद्वेषकर्म—इसकी देवी ज्येष्ठा है। (५) उच्चाटन-कर्म—इसकी देवी दुर्गा है। (६) मारण कर्म की

देवी भद्रकाली है। जो कर्म करना हो, उसी की देवी की पूजा करनी चाहिए।

मन्त्र जपने की दिशाएं

१. शान्तिकर्म में ईशान दिशा, (२) वशीकरण में उत्तर दिशा, (३) स्तम्भन कर्म में पूर्व दिशा, (४) विद्वेषण कर्म में नैऋत्य दिशा, (५) उच्चाटन कर्म में वायव्य दिशा, (६) मारण कर्म में आग्नेय दिशा में बैठकर जाप करना चाहिए।

ऋतुओं के नाम—(तन्त्र-विद्या के अनुसार) सूर्योदय से लेकर हर एक रात-दिन में दस-दस घड़ी वसन्त ऋतु होती है। मध्याह्न काल (दोपहर) में ग्रीष्म ऋतु होती है। मध्याह्न के बाद वर्षा ऋतु होती है। सायंकाल (सांझ को) शिशिर ऋतु होती है। रात के बारह बजे से शरद ऋतु होती है। उसके बाद से प्रातः-काल के पहले तक हेमन्त ऋतु होती है।

मंत्र जपने के समय

दोपहर से पूर्व वशीकरण, मध्याह्न में विद्वेषण, उच्चाटण और शान्तिकर्म, तीसरे पहर सम्भन और सायंकाल मारण कर्म किया जाता है।

मालाएं

वशीकरण में मोतियों की या हीरों की माला, आकर्षण (मोहन) में राजमुक्ता की माला, विद्वेपण और उच्चाटण में वहेड़े (विभीतक) की माला, मारण कर्म में गधे के दांतों की माला फेरते हुए जाप करना चाहिए। धर्मकार्यों, परोपकार के कार्यों तया सबकी सेवा के कार्यों की सिद्धि के लिए शंख की माला फेरनी चाहिए। सब कार्यों की सिद्धि के लिए रुद्राक्ष की माला फेरनी चाहिए। काम-वासना में परिपूर्ण तृप्ति के लिए रुद्राक्ष की माला फेरनी चाहिए।

मालाओं के डोरे

शान्तिकर्म में कमल के डोरे डाले जाते हैं। स्तम्भन में भी

कमल के डोरे डाले जाते हैं। आकर्षण और उच्चाटन में घोड़े की पूंछ के बाल डाले जाते हैं। मारण कर्म में मनुष्य की नसों के डोरे डाले जाते हैं। बाकी में साधारण धागे के डोरे डाले जाते हैं।

मालाओं के दानों की गिनती

बहेड़े की माला पन्द्रह दाने की होती है। मोतियों की माला सत्ताइस दानों की होती है। रुद्राक्ष की माला एक सौ आठ दानों (मनकों) की होती है।

जाप-उंगली

वशीकरण मंत्र का जाप अंगूठे और बीच की उंगली (मध्यमा) से किया जाता है। आकर्षण का जाप अंगूठे और अनामिका (सबसे छोटी उंगली के साथ वाली उंगली) से किया जाता है। उच्चाटन का जाप तर्जनी उंगली (अंगूठे की साथ वाली उंगली) से किया जाता है। मारण कर्म का जाप कनिष्ठा (सबसे छोटी उंगली) और अंगूठे के बीच किया जाता है।

विशेष दिशाएं

अधिकारी (अफसर), पति या पत्नी को वश में करना हो तो पूर्व की ओर मुंह करके जाप करना चाहिए। लक्ष्मी (धन) की कामना हो तो पश्चिम की ओर मुंह करके जाप करना चाहिए। शांतिकर्म, गृह-प्रवेश या मकान की नींव धरनी हो तो उत्तर की ओर मुंह करके जाप करना चाहिए। किसी स्त्री या पुरुष को अपनी ओर आकर्षित करना हो तो दक्षिण दिशा की ओर मुंह करके जाप करना चाहिए।

मंत्र-जाप के प्रकार

मंत्र तीन प्रकार के होते हैं—

१. वाचिक—जिसे ऊंचे स्वरों से बोला जाता है और लोग सुनते हैं।

माधव 'संकोची'

२. उपांशु—जिस मंत्र को कोई न सुने और होंठ हिलते रहें, उसे उपांशु कहा जाता है।

३. समान—जिस मंत्र के उच्चारण करने में न होंठ हिलें न दांत—उसे समान कहते हैं।

विद्वेषण, उच्चाटन और मारण में 'वाचिक' की विधि से मंत्र का जाप करना चाहिए। शान्ति और वशीकरण में 'उपांशु' की विधि से जाप करना चाहिए। स्तम्भन-कर्म में 'समान' विधि द्वारा जाप करना चाहिए।

सामग्रियां

१. शांति कर्म—इसमें दूध, तिल, घी, पीपल की लकड़ी से हवन किया जाता है। पीपल के स्थान पर आम की लकड़ी को भी जलाकर खीर का सामग्री के रूप में प्रयोग किया जाता है।

२. स्तम्भन में बेलपत्र, चमेली के फूल, काले तिल, चन्दन का चूरा, जौ,कमलगट्टा,दही, घी, अन्न आदि से हवन किया जाता है।

३. धन-सम्पत्ति की वृद्धि—इसके लिए घी, बेलपत्र और तिल का हवन किया जाता है।

४. आकर्षण—इसके लिए चिरौंजी और बेलपत्र का हवन किया जाता है।

५. वशीकरण—इसमें राई और नमक का हवन किया जाता है।

६. उच्चाटन—इसमें कौए के पंखों का हवन किया जाता है।

७. मोहन—इसमें धतूरे के फलों का हवन किया जाता है।

८. मारण—इसमें लहू में मिले हुए विष का हवन किया जाता है।

प्रत्येक यंत्र, मंत्र, तंत्र की विधि अलग-अलग होती है।

मुद्राएं

मुद्राएं अनेक प्रकार की हैं । मुद्रा के द्वारा दी गई आहुति ही फलदायक होती है, अन्यथा निष्फल होती है। जिस क्रिया में हाथ सिकोड़कर मुद्रा दी जाती है, उसे सकरी मुद्रा कहते हैं। जिस क्रिया द्वारा कनिष्ठा उंगली को छोड़कर आहुति देते हैं उसे हंसिनी मुद्रा कहते हैं। कनिष्ठा (सबसे छोटी) तथा तर्जनी (अंगूठे के साथ वाली) उंगली से जो आहुति दी जाती है, उसे मृगी मुद्रा कहा जाता है।

मंत्र-महिमा

गौतमीय तन्त्र में कहा गया है—

मंत्राक्षराणि चित् शक्तौ प्रोतानि परिभावयेत् ।
तामेव परम-व्योम्नि परमानन्द-वृद्धये ॥

[मन को एकाग्र करके मंत्र के अक्षर-अक्षर पर लगाए (और सुषुम्ना नाड़ी द्वारा ब्रह्मरंध्र में भावना द्वारा ओतप्रोत करे) तभी साधक की आत्मा में परम आनन्द की वृद्धि हो सकती है।]

मंत्रार्थ-देवना-रूपं चिन्तनं परमेश्वरि ।
वाच्यवाचक-भावेन अभेदो मंत्रदेवयोः ॥

[शिवजी पार्वती से कह रहे हैं कि हे देवि ! मंत्र का जाप और देवता के रूप का चिन्तन एक साथ अभिन्न होना चाहिए। जैसे वाच्य (व्यक्ति या वस्तु) तथा उसका वाचक (नाम) अभिन्न है, उसी प्रकार मन्त्र तथा देवता भी अभिन्न हैं। 'दुर्गा देवी' और 'दुर्गा' यह नाम परस्पर अभिन्न हैं। इसलिए जाप करते हुए मन्त्र तथा देवता को एक रूप मानना चाहिए।]

मंत्र-साधना

मन्त्र को देवी से अलग न समझें और उसमें पूर्ण विश्वास रखें। जब यह दृढ़ विश्वास हो जाए, तो मन्त्र को जगाना आरम्भ

कर दें। अर्थात् मूलमन्त्र के आगे और पीछे 'ई' बीजाक्षर लगा दें। फिर मन-ही-मन सात बार मन्त्र का जाप करें। इस प्रकार मन्त्र को जगाकर साधना करता हुए हृदय में इस बात का ध्यान रखें कि मूलाधार चक्र के भीतर 'स्वयं' साढ़े तीन लपेट लगाए कुण्डलिनी में बैठा हुआ है। साधक जपते समय अपने को मन्त्राक्षर की कुण्डलिनी में गुथा हुआ ध्यान करे और निःश्वास होकर (श्वास बाहर छोड़कर) दम-दम पर पूरक श्वास भरते हुए, कुण्डलिनी को ऊपर उठाए और सहस्त्र दल कमल की कणिका के बीच परमानन्द के साथ खींचे और रेचक (वायु बाहर निकालने) के समय कुण्डलिनी को ठीक उसके स्थान पर पहुंचा दे। इस क्रिया को करते हुए जहां तक हो सके जाप करता जाए और क्षण-क्षण पर श्वास को रोकता रहे। जब साधक कुण्डलिनी को उसके स्थान पर पहुंचा दे तो उसको मूलाधार चक्र की ओर ले जाए। यह क्रिया करने से सुषुम्ना नाड़ी में एक प्रकार का दिव्य प्रकाश दिखाई देने लगेगा। इस प्रकार जाप करने से साधक को शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त होती है।

गौतमीय तन्त्र के अनुसार ऊपर लिखी क्रिया करने से मनुष्य में हर काम में सफलता प्राप्त करने की, लोगों को वश में करने की, विरोधियों को हराने की और समर्थकों को प्रसन्न करने की शक्ति आ जातीं है।

ऊपर लिखी साधना जरा कठिन है, परन्तु किसी श्रेष्ठ गुरु से सीखने पर सरल हो जाती है।

मन्त्र-सिद्धि के लक्षण

जब मन्त्र सिद्ध हो जाता है, तब साधक का अंग-अंग कमल के समान खिल जाता है। हृदय के कपाट खुल जाते हैं। नयनों से आनन्द का स्रोत उमड़ता प्रतीत होने लगता है। हर्ष से रोंगटे खड़े होने लगते हैं। वाणी में शक्ति आ जाती है। सोची हुई और कही हुई बात पूरी हो जाती है। जिस प्रियजन को मिलने की इच्छा हो, वह आकर मिलता है। कार्यों के बीच में आनेवाली बाधाएं दूर हो जाती हैं। मुखड़े पर दिव्य प्रकाश झलकने लगता

है। सभा-समाज में सम्मान बढ़ता है। प्रेम-पात्र पूर्णतया आकृष्ट हो जाता है। किसी-किसी साधक को कानों में इष्ट देवी-देवता की वाणी की झंकार सुनाई देने लगती है। मन्त्र-सिद्धि के बिना तन्त्रमार्ग में सिद्धि प्राप्त करना कठिन है।

तन्त्र-मार्ग के मन्त्र तथा यन्त्र

दुर्लभ सावर तन्त्र के कुछ यन्त्र इस प्रकार हैं—

सुख-प्रसव यन्त्र बनाकर गर्भवती के गले में डाल दिया जाए तो उसे बिना कष्ट के ही बच्चा पैदा होगा।

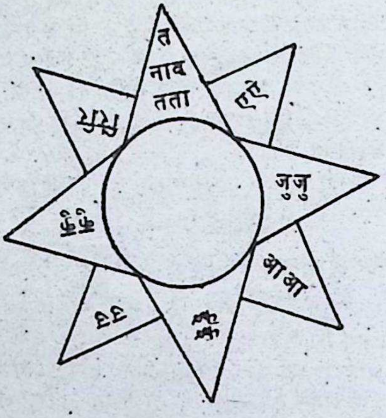

सुख-प्रसव रस

धनप्राप्ति यन्त्र—इसकी साधना के लिए वैशाख, ज्येष्ठ, कार्तिक, मार्गशीर्ष तथा माघ मास सबसे उत्तम हैं। तिथियां—द्वितीया, पंचमी, सप्तमी, नवमी, द्वादशी, त्रयोदशी श्रेष्ठ हैं। वार—बुध, बृहस्पति, शुक्र सबसे अच्छे हैं। नक्षत्र—रोहिणी, पुनर्वसु, हस्त, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी तथा रेवती शुभ हैं। स्थान—नदी तट, देवी मन्दिर, पहाड़ की गुफा, झरने का किनारा। सामग्री—कुंकुम, अबीर, गुलाल—

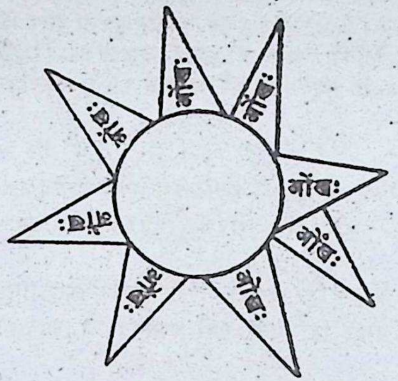

धनप्राप्ति का यन्त्र

लाल, पीले, हरे, नीले, सफेद रंगों की, मौली, सुपारी, साबुत गोला, केशर, बताशे, दूध, प्रसाद (बूंदी, बर्फी आदि), कपूर, छोटी इलायची, यज्ञोपवीत (जनेऊ), नारियल, अक्षत (चावल),

बादाम, अगरबत्ती, लौंग, काली मिर्च, शहद, फल, इत्र, दीपक, दही, घी, शुद्ध शक्कर, पान, भोजपत्र, पुष्प, गंगाजल, कूए का जल (शुद्ध), कमलगट्टे, तांबे का कलश (गागर)।

विधि—स्थान को साफ करके गाय के गोबर से लीपें। फिर यह चक्र अंकित करें (भिन्न-भिन्न रंगों के गुलाल से)। इसके बीच में खाली स्थान पर अपना नाम लिखें। निर्मल जल से भरकर तांबे का कलश इसपर रख दें। तांबे के कलश पर लक्ष्मी की मूर्ति स्थापित करें। यह पूजन कम-से-कम पांच दिन और अधिक-से-अधिक इक्कीस दिन तक करें। पहले गणपति की पूजा करें। फिर इस यन्त्र की पूजा करें। फिर कलश-पूजन, नवग्रह-पूजन, और षोडश मातृ का पूजन करें। फिर आम की लकड़ी जलाकर ऊपर लिखी सामग्री में हवन करते हुए एक सौ आठ बार निम्नलिखित मन्त्र का पाठ करें—

ओ३म् श्रीं ह्रीं श्रीं-कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद।
श्रीं ह्रीं श्रीं ओ३म् महालक्ष्म्यै नमः ॥

ओ३म् हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्।
चन्द्रां हिरण्मयीं देवीं जातवेदो म आवह ॥

दारिद्रय-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या।
सर्वोपकारकरणाय सदार्दचित्ता ॥

ओ३म् श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद।
श्रीं ह्रीं श्रीं ओ३म् महालक्ष्म्यै नमः ॥

मोहिनी यन्त्र

९	१६	२	७
६	३	१३	१२
१५	१०	८	१
४	५	११	१४

मोहिनी यन्त्र बनाकर एक सौ आठ वार नीचे लिखे मन्त्र का जाप करें। जिस स्त्री या पुरुष को अपनी मोहिनी से मुग्ध करना चाहें, कर सकते हैं। वह व्यक्ति चुपचाप आज्ञा का पालन करेगा।

मन्त्र : आ अं आं इ ईउं ऊं ऋ ऋधं फट्

काम-यन्त्र

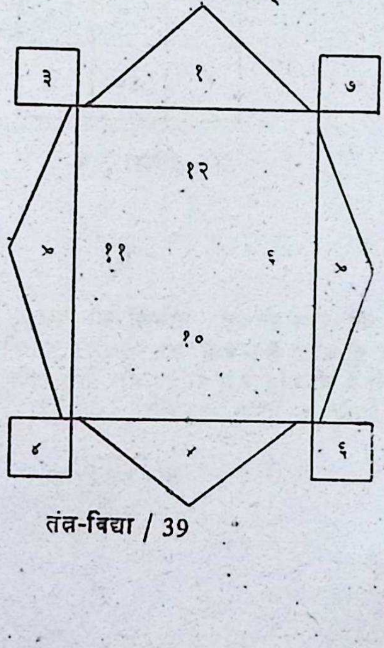

भोजपत्र या कागज पर इस यन्त्र को बनाकर बीचोबीच अपना नाम लिखें। फिर इसे जेब में या सिरहानें के नीचे रखकर सम्भोग करें, तो जितनी देर चाहें, स्खलित नहीं होंगे। काम की पूर्ण संतुष्टि होगी और अपूर्व आनन्द की प्राप्ति होगी। साथ में नीचे लिखा मन्त्र सम्भोग-काल में जपते रहें—

जृंभणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा।
कामी कलानिधिः कान्तः कामिनी व सकृत्वशी ॥

१६	६	८
२	१०	१८
१२	१४	४

तीसरा यन्त्र

यह यन्त्र लिखकर गर्भिणी को दिखाने से बिना कष्ट के प्रसव हो जाता है। इसी को लिखकर तावीज़ में डाल गर्भिणी के गले में भी बांध देना चाहिए और उसके तकिए के नीचे भी रखा देना चाहिए।

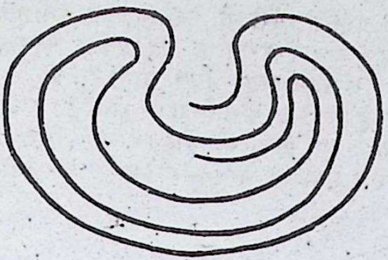

चक्रव्यूह यन्त्र

इस यन्त्र को कांसी की थाली में लिखकर बाद में उसे पानी से धोकर पिलाने से गर्भ ठहर जाता है और प्रसव से पूर्व पिलाने से प्रसव सुखपूर्वक होता है।

खाकी		बादी					आबी			आतिशी	
९	१	६	३	७	२	२	६	४	४	३	९
३	५	७	१	५	९	७	५	३	८	५	१
४	८	२	८	३	४	६	१	८	२	७	६

पन्द्रह का यन्त्र

इस यन्त्र से वैरी भी वैर छोड़कर वशीभूत हो जाता है। जो प्रतिकूल चेष्टाएं करता था, वह सर्वथा अनुकूल चेष्टाएं करने लगता है। खोई हुई वस्तुएं मिल जाती हैं। शरीर का रोग-कष्ट दूर होता है। स्त्री का कष्ट निवारण होता है।

विधि: इस यन्त्र को भोजपत्र पर लिखकर पन्द्रह-पन्द्रह यन्त्र आग में जलाएं। मन्त्र—ओ३म् ह्रीं सूं क्लीं चामुण्डादैव्यै स्वाहा।

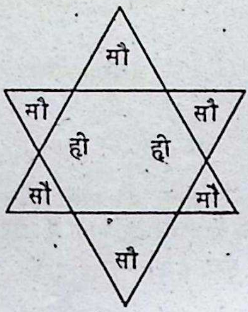

आकर्षण यन्त्र

जिस स्त्री-पुरुष को अपनी ओर आकर्षित करना चाहते हों, और वह आकर्षित न हो, तो उसका उपाय यह यन्त्र है।

भोजपत्र लाकर उसपर गोरोचन की स्याही बनाकर कलम से यह यन्त्र बनाइए। फिर इसे शुद्ध घृत में डुबो दीजिए। उसके अनन्तर इसे घृत से मिलाकर धूप, दीप, नैवेद्य, अगरबत्ती से इस यन्त्र का पूजन कीजिए। साथ में निम्नलिखित मन्त्र का प्रतिदिन पांच सौ एक बार जाप करें—

आकर्षण महादेव, त्वया दत्ता मम प्रिया।
त्रिपुरारि देव देवेश, नमस्तुभ्यं नमो नमः॥

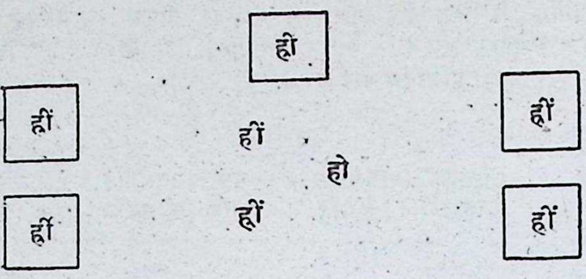

देह रक्षा का यन्त्र

इस यन्त्र को वनाकर बीचोवीच अपना नाम लिखें। फिर इस यन्त्र को सामने रखकर निम्नलिखित मन्त्र का पाठ करें—

मन्त्र

शूलेन पाहि नो देवि, पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि, चापज्यानिः स्वनेन च ॥

५	१५	२	७
६	३	११	१२
१४	६	८	१
४	५	१०	१३

सर्व कार्य सिद्धि करने का यन्त्र

इस यन्त्र को कागज़ पर हल्दी से लिखें। इसके नीचे अपनी कामना भी लिख दें। फिर इसे मोड़कर दीपक पर जलाएं। सात रविवार ऐसा करने के उपरान्त हल्दी की माला से इस मंत्र का २२ माला प्रतिदिन जाप करें।

मन्त्र

सर्वबाधा-विनिर्मुक्तो, धनधान्यसुतान्वितः।
त्वत् प्रसादेन हे देवि, भविष्यामि न संशयः॥

अ	आ	इ	ई
उ	ऊ	ऋ	ॠ
ऌ	ॡ	ए	ऐ
ओ	औ	अं	अः
क्र	क्रा	हो	क्रो

गर्भ-भय नाशक यन्त्र

इस यन्त्र को स्त्री के गले में पहना दें। उसके बाद उसे विश्वास दिलाएं कि मैथुन से उसे गर्भ नहीं होगा। यन्त्र का यह प्रभाव है। सम्भोग के तुरन्त बाद तिल के तेल में सेंधे नमक की पोटली बनाकर योनि में रखें तो स्त्री के गर्भ नहीं होगा।

नं			रं					नं		पं
ते	ते	ते	ते	ते	दे		बे	दे	दे	दे
हे	हे	हे	हे	हे			हे	यं	यं	यं
डे	डे	डे	डे		पे	पे	पे	पे	पे	
ये	ये	ये	ये		से	से	से			

ह्रीं

मनचाही सुलक्षणा पत्नी-प्राप्ति यन्त्र

कांसे के वर्तन को मांजकर चमेली की कलम से, लाल चन्दन की स्याही बनाकर उसपर इस यन्त्र को लिखें। इसी यन्त्र को भोजपत्र पर लिख कर धूप, दीप से पूजन करके तावीज़ वनाकर गले में बांध लें। फिर नीचे लिखे मन्त्र को प्रतिदिन एक सौ आठ बार पढ़ें। यदि आप युवक हैं तो जिस युवती को चाहें, पत्नी रूप में मिलेगी।

मन्त्र

पत्नीं मनोरमां देहि, मनोवृत्तानुसारिणीम्।
तारिणीं दुर्गसंसार-सागरस्य कुलोद्भवाम्॥

८	२	१५	८
१०	१२	३	७
१	१	९	१
११	१०	६	४

सर्व सिद्धि यन्त्र

चन्दन को पानी में घिसकर उसका गाढ़ा घोल तैयार करें। फिर उससे तांबे की थाली में बांस की कलम से यह यन्त्र लिखें। फिर इसे पुष्प, धूप, दीप से पूजें और नीचे लिखा मन्त्र पढ़ें। ऐसा इक्कीस दिन करें।

मन्त्र

स्यां सम्मतः जनपदेषु धनानि च स्युः।
मे शुभयशांसि न सीदतु धर्मवर्णः ॥
वश्युः भवन्तु सर्वात्मजभृत्यदाराः।
भव मे सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥

६८	७५	२	८
७	३	७२	७१
७४	६७	६	१
४	६	७०	१

घर से भागा हुआ व्यक्ति वापस आवे

चौराहे से धूल लाएं। उसे पानी में घोलकर कागज पर इस यन्त्र को बनाएं। इसे भागे हुए व्यक्ति के बिना धुले कपड़े में रखें। फिर इस यन्त्र को भारी पत्थर से दबाकर एकान्त स्थान पर रख दें। सवेरे-शाम इस कपड़े को कोड़े या छड़ी से पीटें। घर से भागा हुआ व्यक्ति वापस लौट आएगा।

प्रातः-साय २२ बार इस मंत्र का पाठ भी करें।

मन्त्र

ओम् सदव्यक्तवेगेन आकर्षय आकर्षय
मणिभद्र स्वाहा।

७९	७६	२	७
६	३	८३	८४
८५	८०	८१	१
४	५	८१	८४

विद्वेषण यन्त्र

दो व्यक्तियों, राजाओं या राज्यों में संधि हो और उनसे खतरा हो, तो विद्वेषण यन्त्र का प्रयोग बताया गया है। उल्लू का पंख लेकर कुम्हार के आवें में से निकले ठीकरे के ऊपर इस यन्त्र को लिखें। फिर इसे शत्रु के घर में डाल दें तो शत्रु और उसके मित्र में कलह हो जाएगी। वे आपस में विद्वेष करने लगेंगे। फिर मिलकर आक्रमण नहीं कर सकेंगे।

९	२	७	९
४	६	८	२७
५	१०	३	१

तिजारी का ज्वर दूर हो

इस यन्त्र को रविवार या मंगल के दिन भोजपत्र अथवा पीपल के पत्ते पर अष्टगंध से लिखकर रोगी की दाहिनी बांह पर बांधने से तिजारी (तृतीयक ज्वर=वारी का बुखार) ज्वर दूर हो जाता है।

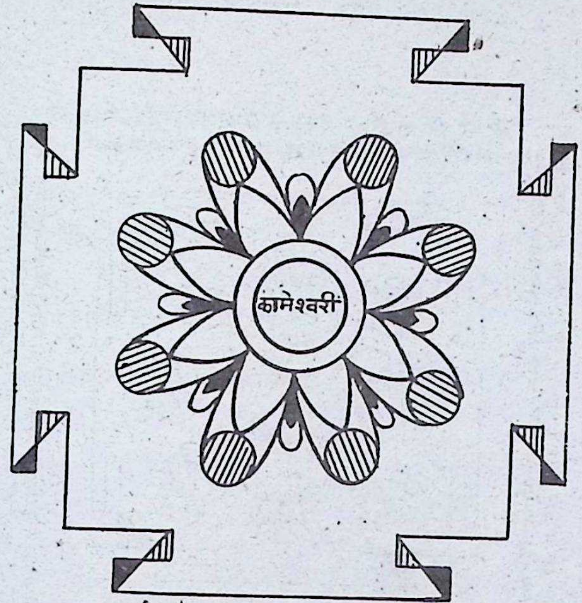

कामेश्वरी पूजन यन्त्र

सब प्रकार के मनोरथों, इच्छाओं, कामनाओं और वासनाओं की पूर्ति के लिए इस मन्त्र को बनाकर सामने रखें। फिर

नीचे लिखे मन्त्र का प्रतिदिन १८० बार सवेरे-शाम जाप करें।

मन्त्र

देहिसौभाग्यमारोग्यं, देहि मे परमं सुखम् ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जाहि ॥

सर्वमंगल गल्ये शिवे सर्वार्धसाधिके ।
शरण्येत्र्यंबके गौरि, नारायणि नमोऽस्तुते ॥

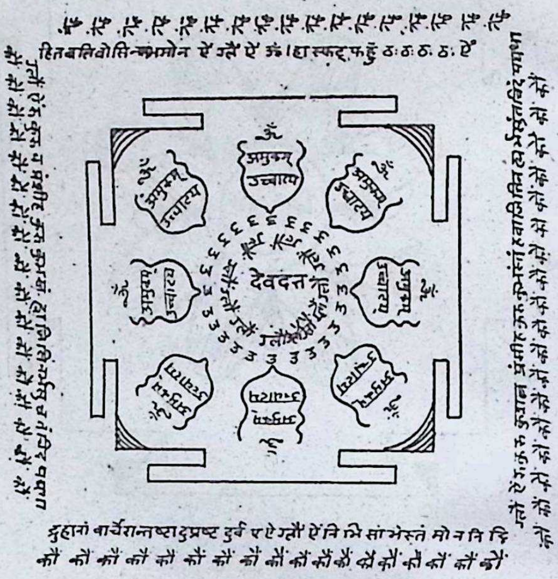

यदि किसी ने पद से हटा दिया हो, नौकरी से हटवा दिया हो व्यापार में मुकाबिले में हटा दिया हो; नगरपालिका, नगरनिगम, विधान सभा या पार्लियामेंट के चुनाव में हरा दिया हो, या सदस्यता अथवा मन्त्रिपद से हटा दिया हो तो अपना पद आदि पुनः प्राप्त करने के लिए यह अद्भुत यन्त्र बहुत काम का है। जहां देवदत्त या अमुक लिखा है, वहां विरोधी का नाम लिखना चाहिए। फिर नीचे लिखे मन्त्र का पांच सौ बार प्रतिदिन प्रातः (ब्रह्ममुहूर्त में) पाठ करना चाहिए। एक मास में ही विरोधी की हार और पुरश्चरण करनेवाले की जीत होगी।

उपासना

नमस्ते रुद्ररूपिण्यै नमस्ते मधुमर्दिनी।
नमः कैटभहारिण्यै नमस्ते महिषार्दिनी॥

नमस्ते शुम्भहन्त्र्यै च निशुम्भासुरघातिनि।
जाग्रतं हि महादेवि, जपं सिद्धं कुरुष्व मे॥

ऐंकारी सृष्टिरूपायै ह्रींकारी प्रतिपालिका।
क्लींकारी कामरूपिण्यै वीजरूपे नमोऽस्तु ते॥

चामुण्डा चण्डघाती च यैकारी वरदायिनी।
विच्चे चाभयदा नित्यं नमस्ते मंत्र रूपिणी॥

धां धीं धूं धूर्जटेः पत्नी वां वीं वूं वागधीश्वरी।
क्रां क्रीं क्रूं कालिका देवि शां शीं शूं मे शुभं कुरु॥

हुं हुं हुंकाररूपिण्यै जं जं जं जम्भनादिनी।
भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवी भद्रे भवान्यै ते नमो नमः॥

अं कं चं टं तं पं यं शं वीं दुं ऐं वीं हं क्षं।
धिजाग्रं धिजाग्रं त्रोटय त्रोटयं दीप्तं कुरु कुरु स्वाहा॥

पां पीं पूं पार्वती पूर्णा खां खीं खूं खेचरी तथा।
मां सीं सूं सप्तशतीदेव्या मन्त्रासिद्धिं कुरुव मे ।।

—रुद्रयामल गौरीत

अथ मन्त्र

ऊं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे। ऊं ग्लौ हुं क्लीं जूं स
ज्वालय ज्वालय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ऐं ह्रीं चामुण्डा
विच्चे ज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा।

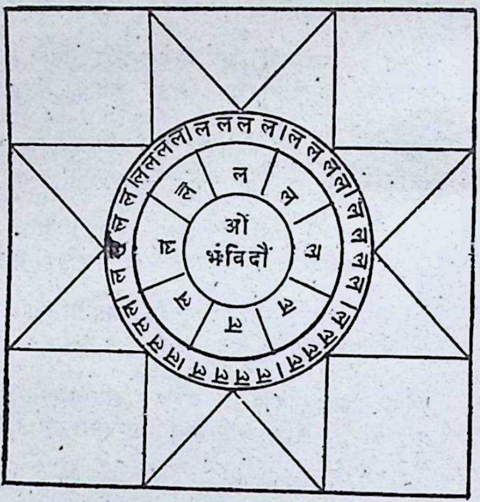

शत्रुनाशक यन्त्र

इस यन्त्र के बीचोबीच उस शत्रु का नाम लिखें जिससे प्राणों का भय हो। सेना के सैनिक इस यन्त्र को तावीज में बन्द करके युद्ध पर जाएं तो विजय होगी। इस यन्त्र का प्रयोग विशेष परिस्थिति में ही करना चाहिए।

'उड्डीस तन्त्र' में स्पष्ट लिखा है कि किनके लिए इस यन्त्र का प्रयोग करना चाहिए—

मारणं न वृथा कार्यं यस्य कस्य कदाचन।
प्राणान्तसङ्कटे जाते, कर्त्तव्यं भूतिमिच्छता॥

[मारण प्रयोग किसी के ऊपर कभी भी व्यर्थ नहीं करना चाहिए। इसका प्रयोग अपने प्राणों पर संकट आ पड़े, तभी करना उचित है, जबकि प्राण जाने की आशंका सामने हो।]

मूर्खेण तु कृतं तन्त्र स्वस्मिन्नेव समापयेत्।
तस्मात् रक्ष्यं सदात्मानं मारणं न क्वचित चरेत्॥

[मूर्ख द्वारा किया हुआ प्रयोग स्वयं उसी को नष्ट कर देता है। ऐसी अवस्था में जो सर्वदा अपनी रक्षा करना चाहे, उसे भूलकर भी कभी मारण का प्रयोग नहीं करना चाहिए।]

मृत्यु को सामने देखकर उससे अपने बचाव के लिए यह यन्त्र बनाकर साथ में इस मन्त्र का पाठ करना चाहिए। खाली स्थान पर शत्रु का नाम लगा लेना चाहिए।

मन्त्र

ॐ नमः काल-संहाराय······हन् हन् फट् स्वाहा।

विधि—मारण की विधि बहुत कठिन है। यह भयंकर भी है और व्यय-साध्य भी। फिर भी तन्त्र-विद्या के जिज्ञासुओं की जानकारी के लिए यहां दी जा रही है। यह विधि लंकेश रावण-कृत 'उड्डीश तन्त्र' में इस प्रकार दी गई है—

निम्बकाष्ठ समादाय, चतुरंगुलमानतः।
शत्रुकेशान् समालिप्य ततो नाम समालिखेत्॥

[चार अंगुल नाप की नीम की लकड़ी लाकर उसपर शत्रु के सिर के बाल लपेटें। उसी लकड़ी से शत्रु का नाम लिखें।]

चिताङ्गारे च तन्नाम्ना धूपं दद्यात समाहितः।
त्रिरात्रं सप्तरात्रं वा यस्य नाम उदाहृतम्॥

[श्मशान में जाकर उस नाम को सावधानी से चिता के अंगारे की धूप देवें। इस प्रकार तीन रात अथवा सात रात तक। जिसके नाम पर इस (मारण) प्रयोग को करें (उसका नाम बोलता जाए)।]

कृष्णाष्टम्यां चतुर्दश्यां चाष्टोत्तरशतं जपेत्।
प्रतिगृहणाति तच्छीघ्रं मन्त्रेणानेन मन्त्रवित्॥

[कृष्ण पक्ष की अष्टमी को, एक सौ आठ बार निम्नलिखित मंत्र का जाप करें तो मंत्र की शक्ति को जानने वाला साधक शीघ्र ही अपने मन्त्र के बल से अपने शत्रु को बांध लेता है।]

मन्त्र

ॐ नमो भगवते भूताधिपतये विरूपाक्षाय घोरदष्ट्रिने
विकरालिने ग्रहयक्षभूतनाथ शङ्कर '............'
हन् हन्, दह दह, पच पच, गृहण् गृहण् हुं फट् ठः ठः।

इसी मंत्र का एक सौ आठ बार जाप करना चाहिए और खाली स्थान पर शत्रु का नाम रख देना चाहिए।

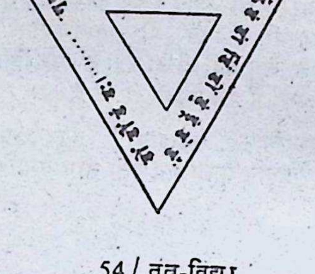

श्मशान की चिता में से मनुष्य की हड्डी की कील लेकर एक हज़ार बार मंत्र से अभिमंत्रित करके, किसी खोपड़ी से छुआकर, जिसके नाम से चिता में गाड़ दें वह ज्वर से पीड़ित होकर मर जाता है।

तंत्र-मार्ग के षट् कर्म—ये षट् कर्म हैं—

१. शांतिकर्म, २. वशीकरण ३. स्तम्भन, ४. विद्वेषण, ५. उच्चाटन, ६. मारण।

छः कर्मों के अन्तर्गत तन्त्र-मार्ग के ३४ प्रयोग इस प्रकार हैं—१. मारण, २. मोहन, ३. स्तम्भन, ४. विद्वेषण, ५. उच्चाटन, ६. वशीकरण, ७. आकर्षण, ८. यक्षिणी-साधन, ९. रसायन क्रिया, १०. भूताकर्षण, ११. उन्माद, १२. गांव का उच्चाटन, १३. जल-स्तम्भन, १४. सर्वस्तम्भन, १५. अंधकिरण, १६. मूकीकरण, १७. मात्रसंकोच, १८. वधिरीकरण, १९. मूलकरण, २०. भूतज्वरकरण, २१. मेघ-स्तम्भन, २२. दधिआदिनाश, २३. मत्तकरण, २४. उन्मत्त-करण, २५. हस्ति-गजप्रकोपन, २६. वेतालसिद्धि, २७. पादुकासिद्धि, २८. भंजनसिद्धि, २९. इन्द्रजाल कौतुक, ३०. गुटिका सिद्धि, ३१. रौद्रविद्या, ३२. शून्यमार्ग में जाना, ३३. मृतसंजीवनी विद्या, ३४. औषधि द्वारा गुप्त कार्य।

तान्त्रिक मुद्राएं

तन्त्र-विद्या में मुद्रा का बहुत महत्त्व है। मुद्रा अनेक प्रकार की हैं। एक का अंक (१) लिंग की मुद्रा या प्रतीक है। शून्य (०) योनि की मुद्रा है। दस का अंक (१०) समस्त विश्व की मुद्रा (प्रतीक) है।

विश्व में ॐ सबसे प्राचीन मुद्रा (प्रतीक) है जो 'सोऽहम्' (वहीं मैं हूं—मैं ब्रह्म हूं) का लघु (संक्षिप्त) रूप है। तान्त्रिकों का मत है कि ॐ वास्तव में ब्रह्माण्ड का प्रतीक है—जो पिण्ड (शरीर) में है, वही ब्रह्माण्ड में है।

वास्तव में यह लिंग और योनि का जुड़ा हुआ रूप है। यदि इसे उल्टा कर दिया जाए तो यह प्रार्थना करते हुए साधक का प्रतीक है, जिसने उपासना में दोनों हाथ ऊपर किए हुए हैं।

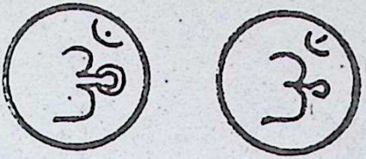

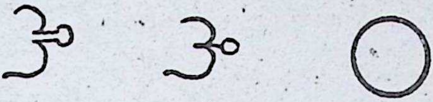

तन्त्र-विद्या में योनि को अधोमुखी त्रिकोण द्वारा व्यक्त किया गया है। नीचे के कोण से ऊपर एक रेखा दिखलाई जाती है, जो योनि के ऊपर वालों का सूचक है।

पुरुष के लिंग का प्रतीक है ऊर्ध्वमुखी त्रिकोण। इसमें यदि नीचे की रेखा से ऊपर की ओर एक रेखा दिखाई गई हो तो, वह लिंग के इर्द-गिर्द वालों का सूचक है।

अनेक गुप्त मुद्राएं वास्तव में तान्त्रिक भापा का निर्माण करती हैं। इनका उपयोग इसलिए किया जाता है कि तन्त्र-मार्गी तो उसे समझ लें, लेकिन अन्य (वाहरी लोग) उसे न समझ सकें। तन्त्र-मार्गी इन मुद्राओं को वाहर के लोगों से छिपाकर रखते हैं।

(चित्र १)
मैदान साफ है। आ जाओ।

(चित्र २)
इस समय मुझसे मत बोलो।

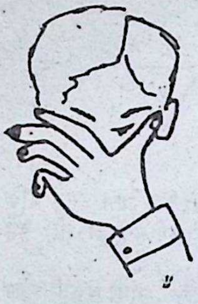

(चित्र ३)
मैं तुमसे एकान्त में बातचीत करना चाहता हूं।

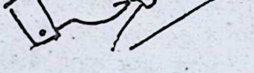

(चित्र ४)
मैं तैयार हूं, पूरी तरह उत्तेज़ित।

(चित्र ५)
आज रात को।

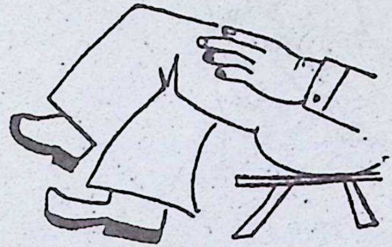

(चित्र ६)
भैरवी-चक्र होनेवाला है।

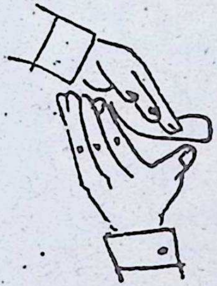

(चित्र ७)
हम काली की पूजा करें।

(चित्र ८)
मैं साधक तथा
सदस्य हूं।

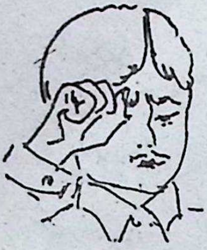

(चित्र ९)
मैं पुजारी हूं।

(चित्र १०)
चुप रहो।

(चित्र ११)

पुरुषत्रिक (एक लिंग व दो अण्डकोष।

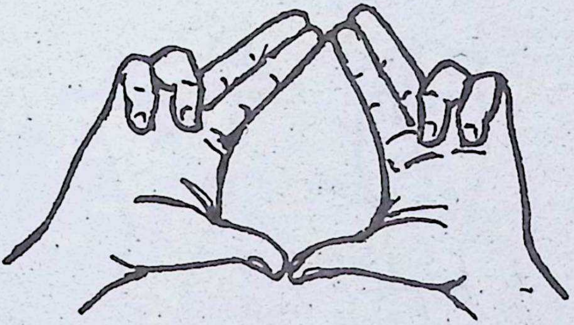

(चित्र १२)

योनि की तान्त्रिक मुद्रा।
इसमें से साधक-साधिका उपास्य या पवित्र
वस्तु को देखते हैं।

(चित्र १३)

पुरुष व स्त्री मुद्रा [अंगूठे और तर्जनी द्वारा योनि को प्रकट किया गया है और उसके ऊपर की तीन उंगलियां पुरुषत्रिक (एक लिंग व दो अंडकोष) की मुद्रा (प्रतीक) हैं।]

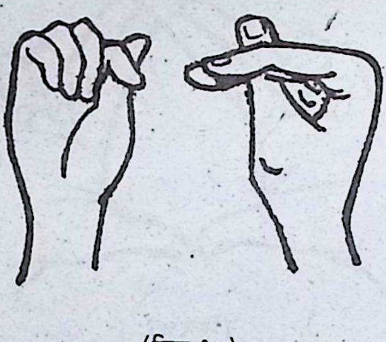

(चित्र १४)

पुरुप द्वारा स्त्री को सम्भोग का आग्रह करने के लिए दिखाई गई मुद्रा।

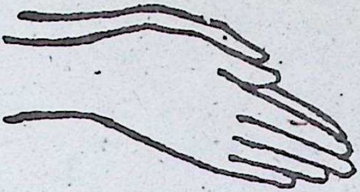

(चित्र १५)
पुरुष द्वारा स्त्री से सम्भोग का आग्रह करने की मुद्रा ।

चित्र १६)
स्त्री द्वारा पुरुष से किए गए मैथुन के आग्रह की मुद्रा ।

३

तन्त्र-मार्ग में गुरु का स्थान

गुरु की महिमा

तन्त्र-मार्ग में गुरु का बहुत महत्त्व माना जाता है। भैरवी-चक्र का संचालन भी गुरु ही करता है। तन्त्र का मत है—

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः॥

[गुरु ही ब्रह्मा है, गुरु ही विष्णु है, गुरु ही देवाधिदेव महादेव है। गुरु ही परम् ब्रह्म है—उस श्री गुरुदेव को मेरा नमस्कार।]

गुरु के शिष्य साधक-साधिका गुरु के चरण धोकर पीना, गुरु जैसी आज्ञा करें—वैसा करना, ये अपना धर्म समझते हैं। इन्हें शिक्षा दी जाती है कि गुरु यदि लोभी हो तो उसे वामन के समान समझें (जिसने राजा बलि को छला था), क्रोधी हो तो नरसिंह के समान समझें (जिसने हिरण्यकशिपु को मारकर प्रह्लाद को बचाया था), गुरु यदि मोही हो तो उसे राम के समान समझना चाहिए (जो सीता के मोह में वन में रोते थे) और कामी हो तो कृष्ण के समान समझना चाहिए (जो गोपियों के साथ रास रचाया करते थे)। गुरु के पास अनेक चेलियां आया करती हैं। वे लम्बी लेटकर गुरु को प्रणाम करती हैं। वे गुरु को अपने हाथों से मल-मल कर स्नान कराती हैं। गुरु अपने चेले-चेलियों को अपना जूठा खिलाते हैं।

एकान्त में गुरु से लीला होती है। नववधू को सुहागरात से पहले एक रात गुरु के पास पवित्र करने के लिए भेजा जाता है। एकान्त में प्रेमलीला और सम्भोग करके वे उसे शुद्ध करके वापस भेज देते हैं।

तान्त्रिक गुरु कहते हैं—(१) काम-क्रोध आदि को रोकना प्रकृति-विरुद्ध है—काम-क्रोधादि के वेग को नहीं रोकना चाहिए।

वेगांन् न रोधयेत् प्राज्ञः।

[बुद्धिमान को चाहिए कि (छींक, उबासी, मल, मूत्र के वेग के समान ही) काम तथा क्रोध के वेग को न रोके।] (२) 'भक्ष्याभक्ष्य' का विचार नहीं करना चाहिए। (३) हर एक स्त्री के साथ (अवसर मिलने पर) सम्भोग कर लेना चाहिए। (४) किसी को अस्पृश्य (अछूत) नहीं मानना चाहिए। (५) भैरवी-चक्र में सम्मिलित होना चाहिए। ये पांच नियम हैं।

कभी-कभी गुरु के पास अनेक चेलियां आती हैं। वे सभी वस्त्र उतार कर नग्न हो जाती हैं। गुरु नग्न होकर उनके साथ प्रेमक्रीड़ा और संभोग करते हैं। इसे 'ब्रह्मसम्बन्ध' कहा जाता है। 'ब्रह्मसम्बन्ध' में नशा पीना, झूमना, लड़ना (प्रेम-लड़ाई करना), खाना, सोना, झांझ पीटना, घंटा-घड़ियाल बजाना, शंख बजाना, धूनी रमाना, नहाना-धोना, घूमना और संगम—ये ब्रह्मसम्बन्ध के विविध कृत्य हैं। गुरु अपने तूंबे में दूध के कुल्ले करता है और इसे पवित्र प्रसाद समझा जाता है। गुरु कहा करते हैं—

जल पवित्तर स्थल पवित्तर और पवित्तर कुआं।
शिव कहे सुन पार्वती, तूंबा पवित्तर हुआ॥

भैरवी-चक्र के लिए गुप्त स्थान में जहां साधकों के सिवाय कोई नहीं जा सकता, वहां स्त्री-पुरुष इकट्ठे होते हैं। चक्रार्चन के लिए जिन्हें निमन्त्रण मिलता है, वे ही उसमें भाग ले सकते हैं। चक्रार्चन में जो साधक आचार्य चक्रार्चन बनता है, वह अपने सम्प्रदाय और गुरु परम्परा के अनुसार अर्चन करता है। जिसके किसी अंग में

कोई चोट हो, जो ज्वर से पीड़ित हो, जो अपस्मार (मिर्गी, हिस्टीरिया आदि) रोग से ग्रस्त हो, जो सूतक में या पातक दशा में हो, या किसी प्रायश्चित कर्म में लगा हो, उसे चक्रमण्डल में प्रवेश करने का अधिकार नहीं होता। जिसका शरीर अपवित्र हो (स्नान न किया हो), जो भोजन कर चुका हो, (मुंह जूठा हो), उसे भी चक्र-पूजन में सम्मिलित होने का अधिकार नहीं होता।

नहा-धोकर, स्वच्छ-पवित्र वस्त्र पहनकर, तिलक-सुगंध लगाकर, देवी का ध्यान करते हुए भक्तिपूर्वक प्रणाम करके आचार्य की अनुमति से चक्रमण्डल में प्रवेश करना चाहिए। वहां एक स्त्री को नंगी करके देवी का रूप दे दिया जाता है। उसकी योनि को चूमते व पूजते हैं। इसी प्रकार एक मनुष्य को नग्न करके उसके लिंग को चूमते व पूजते हैं।

फिर सभी साधक गोलाकार बैठते हैं। बीच में कौलाचार्य विराजमान होते हैं। साधक न तो गुरु की बराबरी पर बैठता है, न उनके आगे और उनके पीछे। साधक गुरु की आज्ञा के विपरीत स्थान पर नहीं बैठ सकता। फिर कौलाचार्य अपने स्थान से खड़े होकर अपने साधक शिष्यों को हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं। फिर पात्र ग्रहण करते हैं। फिर आचार्य पात्र लेकर एक-एक साधक के आगे जाकर हर एक साधक की पूजा करते हैं। पात्र पहले अच्छी तरह मांजा हुआ होना चाहिए। उसमें सुरा भरने के उपरान्त उसके गले में पुष्पमाला डालनी चाहिए (परमानन्द तन्त्र)।

पात्र को देर तक हाथ में लेकर रुका न रहे। हाथ में पात्र लेकर बातचीत कभी न करे। पात्र से पैर का स्पर्श न होने दे। न पात्र में से एक बिन्दु भी भूमि पर गिरने पावे। न तो पात्र को दूसरे पात्र से टकरावे, न उसे भूमि पर गिरावे। आधार के सहित, पात्र को उठावे नहीं और बिना आधार उसे रखे नहीं। पात्र को न रिक्त करे और न तो उसे घुमाए, न उसका उल्लंघन करे। चक्र-पूजन के बाद पात्र को भली-भांति धोकर सुरक्षित रखे (कुलार्णव तन्त्र)।

पुनः कोई भी स्त्री किसी भी पुरुष के साथ मद्य पात्र में भरकर

मांस और (दाल के) बड़े आदि एक थाली में रखते हैं। तब मद्य के प्याले को हाथ में लेकर कौलाचार्य बोलता है—

भैरवोऽहम् शिवोऽहम्।

[मैं भैरव हूं, मैं शिव हूं।]

इस प्रकार कहता हुआ वह उस पात्र में से मद्य पी जाता है। थोड़ी बची हुई मदिरा उसी पात्र में डाल देता है। तब उसीं जूठे पात्र से सभी सुरा-पान करते हैं। फिर किसी अत्यन्त सुन्दरी कन्या, स्त्री या वेश्या को नंगी करके तथा उसका नाम देवी रखकर किसी पुरुष को नंगा करते हैं और उसका नाम महादेव रखते हैं। स्त्री की योनि की पूजा पुरुष करते हैं और पुरुष के लिंग की पूजा स्त्रियां करती हैं। तब उस देवी तथा शिव को मद्य का प्याला पिलाकर उसी जूठे पात्र से सब एक-एक प्याला पीते हैं। फिर बार-बार पी-पीकर उन्मत्त होते हैं। और फिर चाहे किसी स्त्री के साथ काम-क्रीड़ा व सम्भोग करते हैं और इस मंत्र का उच्चारण करते हैं—

पाशबद्धो भवेज्जीवः।
पाशमुक्तः सदाशिवः॥ (ज्ञानसंकलनी तन्त्र)

इसका अर्थ यह कहते हैं कि जो लोकलज्जा, शास्त्रलज्जा कुललज्जा, देशलज्जा आदि पाशों में बंधा है, वह जीव है और जो सब प्रकार की लज्जा छोड़कर तन्त्रमार्ग पर चलकर उन्मुक्त काम-वासना की तृप्ति करे, वह शिव होता है।

'उड्डीस तन्त्र' में लिखा है कि एक घर में चारों ओर आलय हों। उनमें मद्य की बोतलें भरकर रख दें। भैरवी-चक्र के समय एक स्त्री-पुरुष नग्न हो जाएं। फिर एक आलय से बोतल लेकर पिए और दूसरे आलय पर जावे, दूसरे से तीसरे पर इसी तरह पीता-पीता फिर पहले आलय पर आ जावे। सभी इसी प्रकार एकके-पीछे दूसरा चलते-चलते पीते जाएं और पीते-पीते अगर नशे में गिर जाएं तो फिर उठकर पिएं।

तन्त्र-मार्गी धार्मिक-साम्प्रदायिकता में विश्वास नहीं रखता।

वह सभी सम्प्रदायों को एक समान मानता है। उसका विश्वास है कि सभी धर्म एक ही सच्चाई को बतलाते हैं। धार्मिक संकीर्णता या द्वेषभाव उचित नहीं। सब ठीक है, सबके विधि-विधान अलग हो सकते हैं, परन्तु कौल (तन्त्र-मार्गी) सबके साथ प्रेम करता है—

अन्तःशाक्ताः बहिःशैवाः सभामध्ये च वैष्णवाः।
नाना रूपधराः कौलाः विचरन्ति महीतले॥

[मन के अन्दर तथा घर के भीतर तंत्र-मार्गी शक्ति (शक्ति का उपासक) है, घर के बाहर शैव (शिव का उपासक) है। सभी में वह वैष्णव है। कौल (तन्त्र-मार्गी) नाना रूप धारण किए धरती-तल पर विचरण करते हैं।]

चोली मार्ग

तन्त्र-मार्गियों के विविध सम्प्रदायों में एक चोली मार्ग है। एक गुप्त स्थान में स्त्री-पुरुष एकत्र होते हैं। वहां एक स्त्री को नग्न करके देवी मानते हैं और एक पुरुष को नग्न करके देवता मानते हैं। फिर स्त्री के गुप्त अंग की पूजा सब पुरुष करते हैं और पुरुष के गुप्त अंग की पूजा सब स्त्रियां करती हैं। देवी का नाम दुर्गा, शक्ति, चामुण्डा, कपालिनी आदि करते हैं और पुरुष देव का नाम शिव, शंकर, कपाली आदि करते हैं। सब मिल-मिलाकर मांस खाते, मद्य पीते हैं। मद्य पी-पी के उन्मत्त होते हैं तो सब स्त्रियां अपनी-अपनी छाती के वस्त्र जिसे चोली कहते हैं, उतारकर मिट्टी की एक बड़ी नांद में वस्त्र मिलाकर रख देते हैं। फिर सब स्त्री-पुरुष मिलकर झूमते, नाचते, गाते, गोलाकार चक्कर काटते हैं। जब कौलाचार्य कहता है, 'जाओ', तो नांद की तरफ दौड़ते हैं। जिस पुरुष के हाथ में जिस स्त्री की चोली आवे, उस समय के लिए वह उसकी स्त्री हो जाती है। वे वहां सभी सबके सामने-सामने सम्भोग करते हैं। बीज-मार्गी स्त्री-पुरुष समागम करके जल में वीर्य मिलाकर पीते हैं। इनका मत है—

मातृ-योनि परित्यज्य विहरेत् सर्वयोनिषु।

[माता की योनि को छोड़कर और सब योनियों में विहार करें।]

तन्त्र-मार्ग में गुरु पूजा

तन्त्र-मार्ग में गुरु की महिमा अपरम्पार मानी जाती है। इसमें कहा जाता है—

यो गुरुः स शिवः प्रोक्तः, यः शिवः स गुरुः स्मृतः।
उभयोरन्तरं नास्ति गुरोरपि शिवस्य च ॥

[जो गुरु है, वही शिव है। जो शिव है, वही गुरु है। गुरु और शिव—इन दोनों में कोई अन्तर नहीं है।]

गुरुदेवः जगत् सर्वं ब्रह्मा-विष्णु-शिवात्मकम्।
गुरोः परतरं नास्ति तस्मात् सपूजयेत् गुरुम् ॥

[गुरुदेव में ही ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव समेत सारा जगत् समाया हुआ है। गुरु से परे कोई भी नहीं है अर्थात् उससे बढ़कर कोई नहीं है, अतः गुरु की भलीभांति पूजा करनी चाहिए।]

शिष्य के लक्षण

शिष्यः कुलीनः शुद्धात्मा पुरुषार्थपरायणः।
त्यक्ताभिमानो गुरुषु जातिविद्याधनादिभिः ॥

[शिष्य सम्मानित वंश का, शुद्ध आत्मावाला, पुरुष के उद्योग में लीन रहनेवाला और गुरुओं के सम्मुख जाति, विद्या, धन आदि के अभिमान से रहित होना चाहिए।]

तन्त्र-सिद्धि से लाभ

तन्त्र-ग्रन्थों में तन्त्र-सिद्धि के अनेक लाभ गिनाए गए हैं। उनमें से मुख्य इस प्रकार हैं—

लघुत्वमारोग्यमलोलुपत्वम्
वर्णप्रसादं स्वरसौष्ठवं च।
गन्धः शुभो मूत्रपुरीषमल्पम,
योगप्रवृत्तिं प्रथमां वदन्ति।

[तन्त्र-मार्ग का अनुसरण करने से शरीर हल्का, चुस्त, नीरोग होता है। मन से लोभ-लालच दूर होता है। मुखड़े का रंग निखरकर तेजस्वी हो जाता है। वाणी-स्वर मधुर हो जाता है। शरीर तथा सांस से सुगन्ध आने लगती है। टट्टी-पेशाव अल्प हो जाते हैं (और वारम्बार नहीं जाना पड़ता) और योग (चित्तवृत्ति को वश में तथा एकाग्र करने) में सलफता प्राप्त होती है।]

साधना का आधार

तन्त्र में साधना का आधार है नारी। 'गुह्य समाज तन्त्र' में लिखा है– हे साधक! तुझे जीव वध करना चाहिए। स्त्रियों के साथ रमण करना चाहिए।...दुष्कर यम-नियमों से जो सिदि्ध नहीं होती, वह नारी के संग से प्राप्त हो सकती है। धोवी की पुत्री को लाकर वज्रसत्व के प्रयोग से साधना करनी चाहिए। वज्रसत्व है—साधक का वीर्य।

सिद्ध अनंगवज्र ने 'प्रज्ञोपाय विनिश्चय तन्त्र' में लिखा है—मुक्ति की इच्छा वाले साधक प्रज्ञापारमिता का सेवन करें। प्रज्ञापारमिता नारी-रूप में सर्वत्र सुलभ है। ब्राह्मण से लेकर शूद्र तक किसी भी कुल में उत्पन्न स्त्री के साथ तत्त्वयोगपूर्वक साधना करनेवाले को शीघ्र सिद्धि की प्राप्ति होती है।

'ज्ञानसिद्धि' में लिखा है—भक्ष्य-अभक्ष्य का कोई विचार नहीं करना चाहिए, पेय-अपेय का कोई विचार नहीं करना चाहिए। गम्या-अगम्या (स्त्री) का कोई विचार नहीं करना चाहिए। तभी साधक को सिद्धि प्राप्त होती है। साधक का कर्त्तव्य है कि चाण्डाल कुल में जन्मी या डोम कुल में जन्मी या किसी भी नीच कुल में जन्मी स्त्री के साथ सहवास करे। पुरुष का वीर्य ही परमवज्रोदक या वैरोचन कहा जाता है। स्त्री की योनि पद्म है तथा पुरुष का लिंग वज्र है।

४

तन्त्र-विद्या : गुप्त-विद्या

तन्त्र-साहित्य—तन्त्र-साहित्य अत्यन्त विशाल है। इसमें एक विभाग तत्त्व-ज्ञान है, दूसरा विभाग तन्त्र-साधना का। तन्त्र-साधना दो प्रकार की है—

१. बहिरंग साधना—इसमें बाहरी कार्यों पर, आचार-व्यवहार पर और पूजा के विधि-विधान पर जोर दिया जाता है।

२. अन्तरंग साधना—इसमें क्रिया की आन्तरिकता अर्थात् ध्यान आदि पर जोर दिया जाता है।

तन्त्र में तीन मार्ग मुख्य हैं—(क) वाम-मार्ग, (ख) भैरव-मार्ग, (ग) कौल-मार्ग।

आधुनिक काल में आर्थर अवलन, प्रबोधचन्द्र बागची, चिन्ताहरण, चक्रवर्ती, महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री, डा० गोपीनाथ कविराज आदि ने तन्त्र-विद्या पर अनेक ग्रन्थों की रचना की है।

तन्त्र-मार्ग में दो प्रकार की दीक्षा मानी गई है—(अ) होत-दीक्षा (यज्ञ-हवन आदि प्रधान)। (ब) योजनिका-दीक्षा (अन्य क्रिया प्रधान)।

तान्त्रिक साहित्य में, शाक्त दृष्टि के मूल में जो शक्ति है, वह चिद्रूपा है। माया रूपी शक्ति अचिन्त्य है—शब्दों से उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। वह इष्ट कामनाओं को पूर्ण करनेवाली है। उसके लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। एक के बहुत होने में इसी

शक्ति की क्रिया है, अतः मनचाही रमणी या सन्तान की प्राप्ति इसकी प्रसन्नता से शीघ्र ही सिद्ध हो जाती है। संसार में किसी प्रकार की सिद्धि (सफलता) प्राप्त करनी हो तो इस महामाया को प्रसन्न करना चाहिए।

यह शिव से अभिन्न होकर भी भिन्न है। जैसे कस्तूरी की सुगन्धि कस्तूरी से अभिन्न होते हुए भी भिन्न है। विश्व की सृष्टि के मूल में यही शक्ति कार्य करती है और तन्त्र-विद्या में, इसे प्रसन्न करना परम सिद्धि माना गया है। इस शक्ति का परिणाम (अन्त) नहीं होता, किन्तु विस्तार और संकोच होता है। शक्ति ही जगत् का रूप लेकर प्रकट होती है। भोगने योग्य भी वह है और भोगने वाली भी वही है। दोनों शक्ति के तन्त्र में उसे 'विश्वसिद्धि हेतु' कहा गया है—संसार में सब प्रकार के कार्यों का संचालन वही करती है। वही अभिनय करती है और वही अभिनय देखती है। तटस्थ जीव द्रष्टा (देखनेवाला), माया में बंधा जीव भोक्ता (भोगने वाला) और किंचित जागृत (कुछ जागा हुआ) जीव अभिनेता होता है। पूर्ण जागरण के अन्त में जीव शिव रूप हो जाता है। उस समय पूर्व शक्ति उसी की निज शक्ति हो जाती है। सबसे अन्त में कुलाकुल के अतीत जो कुछ है, वह एकमात्र अखण्ड सत्ता है, जिसे वाणी से वर्णन नहीं किया जा सकता, मन से समझा नहीं जा सकता।

महाशक्ति स्वतन्त्र चिति-शक्ति है। वह परम शिव के साथ अभिन्न रूप से विराजमान है। इस अवस्था में शिव और शक्ति दोनों सम-रस रहते हैं। जब शक्ति का रूप स्फुरित होता है, तब उसमें कर्तृत्व-सृजन (निर्माण) की प्रेरणा आ जाती है। तब उसका प्रचण्ड प्रकाश अज्ञान के मल को दग्ध करने में समर्थ होता है। पुण्य-पाप की वासना से जिस मल का जन्म होता है, उसका नाम कार्मण मल है। ज्ञेय (जाने योग्य) वस्तु को अपने से भिन्न समझना माया मल है। अपने को अपूर्ण समझना आणव मल है। अग्नि की उष्णता, चन्द्र की शीतलता, शय्या की कोमलता, पत्थर की कर्कशता, साधारण मनुष्य का मोह और योगी का ज्ञान यह सब शिव की स्वतन्त्र क्रीड़ा मात्र है। शाक्त मत वाले तान्त्रिक परम प्रकाश

को निष्क्रिय (क्रिया से रहित) नहीं मानते। इनका मत है कि तन्त्र साधक जब परम स्थिति को प्राप्त होता है, तो उसमें शिव के समान ही कर्म की शक्ति अपनी इच्छा मात्र से कुछ भी करने की सामर्थ्य उत्पन्न हो जाती है।

तन्त्र में पांच कृत्य माने गए हैं—जन्म, पालन, निग्रह, अनुग्रह और संहार। मन के उपशान्त होने पर जीवात्मा विशुद्ध ज्ञाता की स्थिति प्राप्त कर लेता है। यही कैवल्य है। यही विशुद्ध विज्ञान कैवल्य है। महाशक्ति के परम अनुग्रह के बिना इस आत्म-शक्ति के आगे कोई नहीं बढ़ सकता। जो इससे आगे बढ़ जाता है, वह परम शिव भाव को पा लेता है। वह परम तत्त्व हैं।

तन्त्र-विद्या दो प्रकार की है—

१. **समना** (ज्ञान युगपद्) अर्थात् इसमें एकदम ज्ञान होता है।

२. **उन्मना** : इसमें ज्ञान क्रमिक (क्रम-क्रम से—धीरे-धीरे) प्राप्त होता है। इस ज्ञान में विश्व के आभास, अवभास, निर्वाण आदि अनन्त विचित्रता-भरी अवस्थाएं रहती हैं। यह उन्मना ज्ञान शक्ति ही शाक्तों (शक्ति के उपासकों) की दृष्टि में **परा विद्या** के नाम से प्रसिद्ध है।

शक्ति की सत्ता : शक्ति की सत्ता अखण्ड प्रकाश रूप है अर्थात् चिद्‌रूप है। यह सत्ता परम् स्वतन्त्र है। सत् ही चित् है और चित् ही सत् है। सत् और चित् का परम् बोध ही आनन्द है। जहां दूसरा नहीं है और दूसरे की अपेक्षा भी नहीं है, वही स्वातन्त्र्य हैं। वहां स्वरूप स्वभाव से ही आनन्दमय है। यही 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' है।

शक्ति के प्रति-प्रसारण में एक ओर उसका आश्रय और दूसरी ओर उसके विषय की विभक्त सत्ता है। दोनों को जोड़नेवाला सेतू (पुल) प्रकाश है। इस त्रिपुटी का भान अविभक्त (न बंटे हुए) महाप्रकाश में ही होता है। ज्ञान, भाव और क्रिया—सभी क्षेत्रों में यही होता दिखाई देता है। इसीका नाम महाशक्ति का उल्लास या महामाया का खेल है।

महाशक्ति के रूप—महाशक्ति के चार रूप हैं—खेचरी, गोचरी, दिक्चरी, भूचरी।

खेचरी का कार्य—यह आत्मा की सब कुछ करने की सामर्थ्य, सब कुछ जानने की योग्यता, नित्यता, व्यापकता तथा आप्त-कामत्व (सब कामनाओं की पूर्ति होने की अवस्था) को संकुचित करती है।

गोचरी शक्ति—अन्तःकरण के अभेद निश्चय को, अभेद अभिमान को, अभेद विकल्प वाले परमार्थ स्वरूप का लोप कर देती है।

दिक्चरी—इन्द्रियों के अभेद ज्ञान को ढक लेती है और भेद विचार तथा भेद प्रथा को प्रकट कर देती है।

भूचरी—यह भावना के स्तर पर सर्वात्मता (सब अपने ही आत्मरूप हैं) को ढक लेती है।

ऊपर लिखे चारों रूप पशुओं को मोहित करते हैं। तन्त्र-ज्ञान से रहित मनुष्य पशु के समान है। तन्त्र-विद्या से आत्मा को ऊंचे उठाकर **शिव-भूमि** तक ले जाया जाता है। तब ऊपर लिखी चारों शक्तियां साधक के शिव हृदय को कमल के समान विकसित कर देती हैं। उस समय ये खेचरी आदि शक्तियां ही आत्मा की पूर्ण कर्तृत्व-शक्ति (सब कुछ कर सकने की सामर्थ्य) को प्रकाशित कर देती है। तब ये शक्ति चिद्‌गगनचरी (चैतन्य गगन में विहार करने-वाली), अभेद निश्चय गोचरी (अभिन्नता के निश्चय का प्रत्यक्ष ज्ञान करानेवाली), अभेदालोचनात्मक दिक्चरी (अभेद की आंखों से दिखानेवाली और अंग-प्रत्यंग (शरीर के अणु-अणु) में शिव रूप प्रकट करनेवाली भूचरी के रूप में प्रकाशमान होती है।

ये शक्तियां जब जागृत होकर खेल खेलने लगती हैं तब-तब वे समान रूप से शिव-भूमि में भी खेलती हैं और जीव-भूमि में भी खेलती हैं। पहले जो शक्तियां जीव के ज्ञान तथा क्रिया को संकुचित करती थीं, वे ही उसे शिव अप्रतिहत ज्ञान (बाधा-रहित ज्ञान) से सम्पन्न बनाती हैं। जो जीव के देखने, सुनने, छूने, सूंघने तथा रस चखने में भेदभाव उत्पन्न करती थीं, वे ही शक्तियां जीव के शिव रूप होने पर उसमें अभेद भाव उत्पन्न करती हैं।

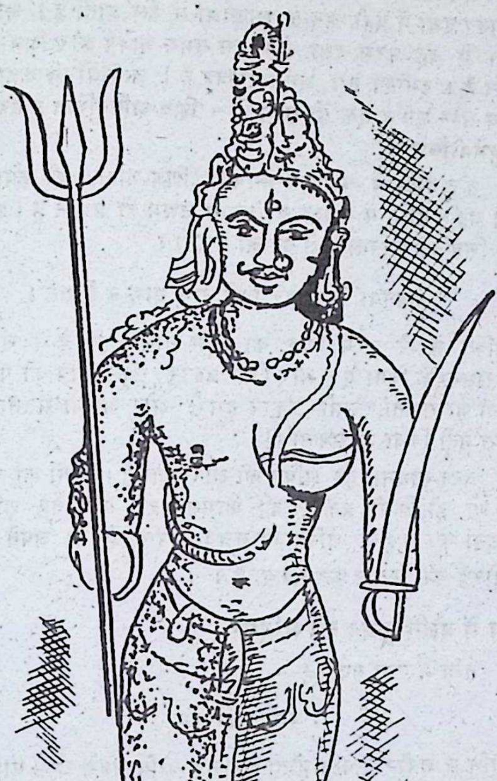

अर्धनारीश्वर

अर्धनारीश्वर—महाशक्ति एक ही है, वहीं मूल शक्ति है। विभक्त दशा में वही अनन्त शाखाओं में फैल जाती हैं। अविभक्त दशा में वह परम दशा है। उस समय शक्ति और शिव अभिन्न रहते हैं। इसीका रूप अर्धनारीश्वर है। ज्ञानियों ने कहा है कि शिव और शक्ति एक ही तत्त्व है—'शिव-शक्तिरिति ह्येकं तत्त्वः माहुर्मनीषिणः।

द्वैत दृष्टि में भगवान-भगवती (शिव-शक्ति) की कृपा प्रधान है। अद्वैत दृष्टि में साधक का अपना उद्यम ही प्रधान है। शक्ति से परे शिव की कल्पना नहीं की जा सकती।

शक्तया विना परे शिवे नाम धाम न विद्यते।

[शक्ति से परे परम शिव का नाम-धाम नहीं है। शक्ति की आराधना के बिना एक ओर जिस प्रकार स्थूल भाव को पार नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार दूसरी ओर आत्मा सतता को भी प्राप्त नहीं किया जा सकता।]

तन्त्र-साधना ही शक्ति की आराधना है। किसी का कोई भी उद्देश्य हो, किसी प्रकार की कामना हो, यदि वह शक्ति की साधना करता हुआ, शक्ति का सचय करता है, तो अपने आदर्श मनोरथ को साकार कर सकता है।

तंत्र में योनि-पूजन की महिमा

तन्त्र में कहा गया है—

'योनिः शरीरम्'

[योनि से शरीर उत्पन्न होता है। नर योनि सबसे श्रेष्ठ योनि है। मनुष्य देह सबसे श्रेष्ठ देह है। यह देह एक लघु ब्रह्माण्ड रूप है। इसीलिए तन्त्र-मार्ग में योनि-पूजन का विधान है। लिंग और योनि के परस्पर सन्निकर्ष (अत्यन्त निकटता) से मनुष्य देह जन्म ग्रहण करती है। महालिंग और महायोनि मूल रूप में एक हैं। फिर भी

व्यक्ति रूप से लिंग और योनि में तारतम्य है—रूप, गुण, आकार, तेज के कारण चौरासी लाख देह और उन्हीं के अनुरूप चौरासी लाख देह (योनियां) हैं। विशुद्ध अहंभाव के विकास के लिए प्रकृति की विशाल विज्ञानशाला में यह सृजन और विवर्तन-निर्माण और रूप-परिवर्तन होता रहता है। वास्तविक दिव्य देह मनुष्य देह का ही विकास मात्र है।

तान्त्रिकों के नवयोनिचक्र के नौ अवयव हैं—धर्म, अधर्म, अन्तरात्मा, परमात्मा, ज्ञानात्मा, प्रमाता, जीव, प्रमेय, प्रमा। बौद्ध धर्म में भी तन्त्र-विद्या का सबसे ऊंचा स्थान माना गया है। बुद्ध धर्म के तीन रत्न हैं—शील, समाधि, प्रज्ञा। ज्ञान की स्थिति अन्त में है। शील और समाधि की पूर्णता से प्रज्ञा का उदय होता है। इस प्रज्ञा अर्थात् परम ज्ञान की उत्पत्ति तब नहीं हो सकती, जब तक उसे धारण करने की शक्ति शरीर में उदय न हो। शुद्ध शरीर में ही शुद्ध ज्ञान का उदय संभव है। शील से काय-शुद्ध और समाधि से चित्त-शुद्धि होती है। समाधि का अर्थ है—कुशलता की ओर चित्त की एकाग्रता—**कुशलचित्तैकाग्रता समाधिः**।

समाधि में चित्त केवल एक विषय पर स्थिर हो जाता है। चंचलता और परिवर्तन स्थगित हो जाते हैं। अकुशल कर्मों को छोड़कर मनुष्य कुशल कर्मों की ओर एकाग्र होता है। अकुशल कर्मों के करने से तृष्णा और क्षोभ उत्पन्न होता है। इसलिए समाधि लगाकर चित्त को शान्त करने का प्रयत्न किया जाता है। आसक्ति से निवृत्त होने पर कुशल कर्मों की ओर चित्त एकाग्र होता है। तब प्रज्ञा—परम ज्ञान-की प्राप्ति होती है।

ब्रह्मचर्य संभोग की तैयारी है !
संभोग समाधि की तैयारी है !

पूर्ण समाधि के दो स्तर हैं—(क) उपचार समाधि, और (ख) अर्पणा समाधि। उपचार समाधि में भूख, प्यास, दुख, पृथ्वी, जल, अग्नि पवन का ध्यान रहता है। अर्पणासमाधि में इनका भान

नहीं रहता। अर्पणा समाधि में शील, त्याग, उपशम की श्रेष्ठता पर साधक का मन पूरी तरह एकाग्र हो जाता है।

तन्त्र का साधक श्मशान में जाकर मानव-शरीर की परिणति देखता है और अपने शरीर से ऊपर उठने का प्रयत्न करता है। साधक को चाहिए कि एकान्त स्थान में बैठकर वह श्वास, प्रश्वास, आश्वास पर चित्त को केन्द्रित करे। श्वास-गति से परिचित होने के लिए श्वास की गणना करनी चाहिए ताकि संपूर्ण श्वास-क्रिया पर अपना चित्त एकाग्र कर सके। इसे आनपानसति (अनपायनासक्ति) कहते हैं। इसके बाद की अवस्था ब्रह्मविहार है। संसार के सुख के प्रयासी, कुकर्मी, अकर्मी—इन सभी को देखकर साधक जब इनसे ऊपर उठने की भावना करता है—इसे ब्रह्मविहार कहते हैं।

ध्यान की पूर्णता के लिए पहले चार मूल तत्त्वों से बनी वस्तु पर या गीली मिट्टी की बनाई गोली सामने रखकर उसे देखते हुए, उसी पर चित्त एकाग्र करना चाहिए। जब नेत्रों को बन्द करने पर भी उस वस्तु का प्रत्यक्ष कर सके, तो उस वस्तु को छोड़ देना चाहिए। और चित्त में ही उस वस्तु पर चित्त को एकाग्र करने के लिए दूसरे स्थान पर जाना चाहिए।

इस प्रकार चित्त एकाग्र करने से साधक को तीन स्थितियां प्राप्त होती हैं—

(क) स्रोतापन्न—इस स्थिति में चित्त पाप से हटकर कल्याण के प्रवाह में प्रवाहित होने लगता है। तब संसार का भय नहीं रहता।

(ख) सकृदागामी—इस स्थिति में काम-वासना की हाय-हाय और बदले की भावना से छूट जाता है।

(ग) अनागामी—इस स्थिति में पहुंचकर मनुष्य सुख-दुख, हानि-लाभ, जय-पराजय से ऊपर उठकर जन्म और संसार बंधन से मुक्त हो जाता है।

समाधि के बिना साधक कामधातु अर्थात् वासनामय जगत् को लांघकर रूप-धातु में नहीं जा सकता। समाधि ही साधक को रूप-धातु में ले जाने में सहायक है।

तन्त्र-मार्ग में मैथुन

तन्त्र-मार्ग में तन्त्र की विधि के अनुसार मैथुन का बहुत महत्त्व है। तन्त्र में कहा गया है—

> वित्तिः प्राङ्.मैथुनात् तृष्णा भोग-मैथुन-रागिणः।
> उपादानं तु भोगानां, प्राप्यते परिधावतः ॥
>
> स भविष्यद् भवफलं, कुरुते कर्म तद्भवः।
> प्रतिसन्धिः पुनर्जातिः जरामरणमाविदः ॥

[तन्त्र-विधि से मैथुन करने से पूर्व भोग और मैथुन की चाहवाले मनुष्य की तृष्णा हर समय उसके मन पर छाई रहती है और उन भोगों की प्राप्ति के लिए वह निरन्तर दौड़ता रहता है। भविष्य में मैथुन और भोगों के सुख को पाने के लिए निरन्तर कर्म करता रहता है। कर्मों में निरन्तर लीन रहकर वह मृत्यु को प्राप्त होता है और फिर जन्म ग्रहण करता है—इस प्रकार जन्म, बुढ़ापा, मृत्यु के चक्कर में पड़ा रहता है।]

तन्त्र के अनुसार सम्भोग अवस्था में समाधि लगाकर मनुष्य परम आनन्द को प्राप्त होता है। कैसे ?—

> चित्तं प्रवर्तते चित्तं, चित्तमेव विमुच्यते।
> चित्तं हि जायते नान्यत, चित्तमेव निरुध्यते ॥

[मनुष्य का चित्त ही सब पदार्थों तथा सब कार्यों में लगता हुआ दौड़ता रहता है। सम्भोग की समाधि में चित्त मुक्त हो जाता है। चित्त फिर और कहीं नहीं जाता। चित्त वश होकर इधर-उधर भटकने से छूट जाता है क्योंकि इस मैथन-समाधि आनन्द से बढ़कर अन्य कोई सुख हो ही नहीं सकता, इसलिए चित्त इसी पर पूरी तरह एकाग्र सम्भोग में समाधि : समाधि में विभुत्व होकर स्थिर हो जाता है।]

तन्त्र-विद्या में कहा गया है—

> मैथुनस्य परावृत्तौ विभुत्वं लभ्यते परम्।

[सम्भोग में समाधि लगाने की स्थिति में जब मैथुन की चरम सीमा पर जा पहुंचता है तो शिव की भांति वह विभु (व्यापक) हो जाता है।]

इस प्रकार के मैथुन से मैथुन की तृष्णा समाप्त हो जाती है और मैथुन का आनन्द छाया रहता है। तन्त्र के बाह्य (बाहरी) अंग हैं—मद्य, मांस, मीन, मुद्रा और मैथुन। आन्तरिक (भीतरी) अंग हैं—मंत्र, यंत्र, मुद्रा, शक्ति और तत्त्व।

सम्भोग-समाधि के लिए एक योगिनी या तन्त्रसाधिका (साधना करनेवाली साथिन) आवश्यक बताई गई है। इसके बिना पूर्ण समाधि नहीं हो सकती।

सम्भोग-समाधि से पूर्व महामांस तैयार करके उसका प्रसाद खाना आवश्यक बताया गया है—

मांसाहारादिकृत्यार्थं महामांसं प्रकल्पयेत् ।
सिद्धयते कार्य-वाक्-चित्त रहस्यं सर्वसिद्धषु ॥

[मांसाहार का कृत्य पूरा करने के लिए महामांस तैयार करें। तभी सब प्रकार की सिद्धियों में शरीर, वाणी और चित्त का रहस्य खुलता है।]

हस्तिमांस हयमांसं श्वानमांसं तथोत्तमम् ।
भक्षेदाहारकृत्यार्थं न चान्यत्तु विभक्षयेत् ॥

[हाथी का मांस, घोड़े का मांस, स्वस्थ कुत्ते का मांस—ये ही आहार-कृत्य के लिए उत्तम बनाए गए हैं। अन्य किसी भी पशु का मांस नहीं खाना चाहिए।

तान्त्रिक क्रियाएं

तान्त्रिक क्रियाएं अनेक भागों में विभक्त हैं, अर्थात् इनके भिन्न-भिन्न अनेक उद्देश्य हो सकते हैं। जैसे—मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण, स्तंभन, विद्वेषण, आकर्षण और शान्ति कर्म।

तन्त्र-दीक्षा

तन्त्र-मार्ग में कहा गया है कि दीक्षा के बिना सभी ज्ञान और तप व्यर्थ है। गुरु बंधनों का नाश करके शिष्य को शिवत्व की ओर आगे बढ़ाता है। दीक्षा के बिना तन्त्र-सिद्धि की कल्पना करना व्यर्थ है। इसलिए साधना की जिसके मन में चाह हो, उसे चाहिए कि योग गुरु (सिद्ध तान्त्रिक) का शिष्य बने और शिष्य के सारे गुणों को धारण करके दीक्षा का योग्य अधिकारी बने। उसे दीक्षा क्यों कहा गया? विश्वसार तन्त्र में लिखा है—

> दीप्येत ज्ञान-सद्भाव: क्षीयते पशुवासना।
> दान-क्षपण संयुक्ता दीक्षा तेनेह कथ्यते॥

[इससे ज्ञान प्राप्त करने की श्रेष्ठ भावना प्रदीप्त होती है और पशु-वासना क्षीण होती है तथा दान करने और त्याग करने की भावना बढ़ती है, इसलिए इसे दीक्षा कहते हैं।]

शिवागम में दीक्षा तीन प्रकार की बतलाई गई है —शांभवी, कुण्डलिनी और मान्त्री (मन्त्र दीक्षा)। शांभवी दीक्षा में साधक को दृष्टि, वाणी और स्पर्श की शक्ति प्राप्त होती है जो महामाया की अपनी शक्ति है।

कुण्डलिनी की शक्ति को जागृत करने के लिए गुरु शिष्य की कुण्डलिनी को शिव के साथ जोड़ देता है। इससे शिव की सूक्ष्म अदृश्य शक्ति शिष्य म आ जाती है। यह दूसरी दीक्षा है।

तीसरी दीक्षा मन्त्र दीक्षा कहलाती है। इसकी उत्पत्ति मंत्रों से होती है। मन्त्र के जप और ध्यान से साधक की अपनी ही आत्मा की शक्ति जागृत हो जाती है। वह शक्ति सम्पूर्ण सांसारिक भोगों का आनन्द प्राप्त कराने के उपरान्त मोक्ष प्रदान करती है।

दीक्षा के ग्यारह भेद बताए गए हैं—

तत्व दीक्षा (पांच प्रकार की)	५
कला दीक्षा (एक प्रकार की)	१
मंत्रवर्ण भुवन दीक्षा (तीन प्रकार की)	३

पद दीक्षा (एक प्रकार की)	१
केवल भुवन दीक्षा (एक प्रकार की)	१
	११

साधिका के साथ व्यवहार

तन्त्र में नारी को बहुत ऊंचा पद दिया गया है। किसी भी नारी की अवमानना वर्जित है। कहा गया है—

सर्वांग-कुत्सितायां वा न कुर्यादवमाननाम्।
स्त्रियं सर्वकुलोत्पन्नां पूजयेद् वज्रधारिणीम् ॥

[चाहे साधिका के सब अंग कुत्सित ही क्यों न हों, तो भी उसका अनादर न करे। जिस स्त्री में देवी का आवेश हो—जो वज्रधारिणी बनाई गई हो, वह चाहे किसी भी कुल की हो, उसकी पूजा करनी चाहिए—उसे शक्ति-रूपा समझना चाहिए।]

शक्तिसंगम संक्षोभात् शक्त्यावेशावसानिकम् ।
यत्सुखं ब्रह्मतत्वस्य तत्सुखं ब्राह्मणमुच्यते ॥

[शक्ति संगम के आरंभ से लेकर शक्ति के आवेश के अन्त तक जो ब्रह्मतत्व का सुख प्राप्त होता है, उसे ब्रह्म सुख कहा जाता है।]

प्रज्ञा को पद्म या नारी और उपाय को वज्र या नर कहा गया है। नारी को योनि भी कहा जाता है क्योंकि उसी से सब प्राणियों की उत्पत्ति होती है।

संभोग समाधि को तन्त्रशास्त्र में अद्वय भी कहा गया है। योनि में लिंग के प्रवेश के उपरान्त तीन स्थानों से—मुख से मुख का, छाती से छाती और लिंग से योनि का प्रगाढ़ आलिंगन ऐसा होना चाहिए जिससे नर और नारी में कोई भिन्नता न रहे। इसे तन्त्र-मार्ग में 'अद्वय' कहा जाता है, अर्थात् वे दो न रहकर एक हो जाते हैं। इसे 'युगनद्ध' भी कहा जाता है, अर्थात् मानो दोनों

एक-दूसरे में पिरोए हुए हों और इस प्रकार 'एक' हो गए हैं। इस अवस्था को 'समरस' भी कहा जाता है और दोनों को समान रूप से आनन्द प्राप्त होता है। अनेकता में एकता होना ही सर्वव्यापी सुख के अनूठे प्रवाह में एक परम सत्य का साक्षात्कार होता है।

सर्ववर्णसमुद्भूता जुगुप्सा नैव योषितः।
सैव भगवती प्रज्ञा सम्वृत्या रुपमाश्रिता॥

[तान्त्रिक साधक को चाहिए कि नारी चाहे किसी भी वर्ण की हो, उसके प्रति अरुचि नहीं होनी चाहिए, क्योंकि उस समय वह भगवती प्रज्ञा के रूप को धारण कर चुकी है।]

गुरु की कृपा से ही तन्त्र-मार्गी साधक को यह सहजप्रेम प्राप्त होता है।

रतासक्त या मैथनारत होने पर साधक अपनी साथिन साधिका से कुछ-कुछ कहता भी जाता है जैसे आचार्य काण्हपाद (कण्हया) ने कहा है—

तिअड्डा चापि जोइनि दे अँकवाली।
कमल कुलिश घांटि करहु वियाली॥
जोइनि तंइ बिनु खनहि नं जीवमि।
तो मुंह चुम्बि कमल रस पीवमि॥

[अरी योगिनी! पूरी तरह कसकर आलिगन कर। अपने कमल (योनि) से इस कुलिश (=वज्र अर्थात् लिंग) को सांपिन के समान लपेट ले। अरी योगिनी! तेरे बिना मैं एक क्षण नहीं जीवित रह सकता। तेरा मुख चूमकर मैं कमल का रस पी रहा हूं।]

मैथुनरत अर्थात् रतासक्त होने पर क्या-क्या कहते हैं, इसका एक उदाहरण—

अभ्रकस्तव बीजं तु, मम बीजं तु पारदः।
अनयोर्मेलनं देवि! मृत्युदारिद्र्य-नाशनम्॥

[हे देवी! तेरा बीज अभ्रक के समान है और मेरा वीर्य पारद

(पारे) के समान है। इनके मिलने से मृत्यु तथा दरिद्रता का नाश होता है।]

तान्त्रिक साधना की स्थितियां

तान्त्रिक साधना की तीन स्थितियां हैं—

१. **पशुाचार**—इसमें साधक कभी भी उपास्य के इतने निकट नहीं पहुंच पाता कि खुलकर शक्ति की उपासना कर सके, क्योंकि वह संभोग तक ही रह जाता है।

२. **वीराचार**—इस स्थिति में साधक संभोग में समाधि लगाने में सफल होता है। शक्ति के इतने निकट पहुंच जाता है कि प्रगल्भ होकर शक्ति का स्तवन कर सके।

३. **दिव्याचार**—यह मन की सबसे श्रेष्ठ, सबसे ऊंची स्थिति है। इस स्थिति में पहुंचकर साधक शिव रूप ही हो जाता है। वह जीवमात्र को मनचाहा वरदान देने की शक्ति प्राप्त कर लेता है।

तन्त्र-साधना में ध्यान

साकार और निराकार—दोनों प्रकार की उपासना में ध्यान आवश्यक है। तन्त्र-मार्ग में ध्यान का स्थान बहुत ऊंचा है। ध्यान अनेक प्रकार का है। साधक को अपनी रुचि, भावना और अधिकार के अनुसार तथा अभ्यास की सुगमता देखकर शक्ति के किसी भी रूप का ध्यान करना चाहिए। ध्यान परम भाव से होना चाहिए। साधक को चाहिए कि मन को इधर-उधर न भटकने दें। परम भाव से शक्ति के ध्यान में मन को एकाग्र करने का अभ्यास करना चाहिए। एकान्त, पवित्र और सात्विक स्थान में सिद्धासन, स्वस्तिकासन अथवा पद्मासन से बैठकर, आंखें बन्द करके या आंखों की दृष्टि को नाक के अगले भाग पर टिकाकर कम से कम आधा घंटा ध्यान करना चाहिए। ध्यान लगाते हुए नींद, चंचलता, विक्षेप, रस का स्वाद, आलस्य, प्रमाद और ढोंग आदि दोषों को दूर कर देना चाहिए। पूरी श्रद्धा-भक्ति से देवी के ध्यान में लीन होना चाहिए।

ध्यान के समय शरीर, माथा तथा गला सीधे रहने चाहिए।

रीढ़ की हड्डी भी बिल्कुल सीधी रहनी चाहिए। ध्यान के लिए समय और स्थान निश्चित होना चाहिए।

ध्यान के लिए आसन लगाने के बाद यह करना चाहिए कि जिस भी वस्तु या व्यक्ति का स्मरण आए उसे कल्पना समझकर मन से हटा देना चाहिए। केवल देवी की सत्ता ध्यान में रखनी चाहिए। ऐसी दृढ़ता से ध्यान करें कि आंखों से जो कुछ भी दिखाई दे सकता है, उससे मन को रिक्त कर लें। जैसे ईंधन के अभाव में आग नहीं हो सकती, उसी प्रकार मन में किसी वस्तु की स्मृति न होने पर उसे पाने की इच्छा भी नहीं हो सकती। इस प्रकार मन पूरी तरह उपास्य के ध्यान में लीन हो जाएगा। दृश्य-प्रपंच्च से ऊपर उठते ही आनन्द का अनुभव होने लगता है।

साधक अनुभव करे—अहो! असीम आनन्द है! अचल आनन्द है! शान्त आनन्द है! ध्रुव आनन्द है! नित्य आनन्द है! निर्मल आनन्द है! मैं आनन्द हूं—मैं आनन्द हूं—मैं आनन्द हूं—आनन्द के सिवा मैं कुछ नहीं हूं। सर्वत्र आनन्द ही आनन्द है, आनन्द के सिवा कुछ नहीं हूं।

तन्त्र-मार्ग में काम-संभोग अर्थात् मैथुन को परम आनन्द प्राप्त करने का मुख्य उपाय माना गया है। परन्तु तन्त्र-मार्ग की संभोग विधियों को गुप्त और रहस्यमय रखा जाता है। यह संभोग शारीरिक ही नहीं होता, बल्कि इसमें मन, प्राण तथा आत्मा का लीन होना अवश्य माना जाता है। तन्त्र में प्रेम-क्रीड़ा तथा संभोग-क्रिया एक धार्मिक अनुष्ठान है। सभोग में ही समाधि अपनी पूर्णता को प्राप्त करती है, ऐसा तान्त्रिकों का मत है। उनका कथन है कि संभोग-क्रिया से एक अद्भुत अतर्कित शक्ति उत्पन्न होती है, जिससे मनुष्य में नवजीवन का संचार होता है। तन्त्र-मार्ग में काम-संभोग को त्यागने योग्य या वर्जित नहीं माना गया, बल्कि इसे आध्यात्मिक आनन्द की सीढ़ी माना गया है। इसीलिए तन्त्र-शास्त्रों में कहा गया है कि काम-उपभोग अर्थात् संभोग को प्रसन्नता से स्वीकार करना चाहिए और इसे पवित्र कार्य मानना चाहिए। तन्त्र-मार्ग का विश्वास है कि योग के सभी आसन संभोग के भिन्न-भिन्न आसनों

के आधार पर ही बने हैं । तन्त्र का मत है कि मनुष्य पूर्ण समाधि की अवस्था में संभोग करते-करते ही प्राप्त कर सकता है। प्रेम-क्रीडा का परिणाम संभोग है और संभोग की सबसे उत्तम स्थिति में पूर्ण समाधि की स्थिति प्राप्त होती है। क्योंकि उस समय एक दिव्य प्रकाश, एक अलौकिक आनन्द प्राप्त होता है, जिसमें व्यक्ति का अभिमान (अहं) गल जाता है, परन्तु यह तभी हो सकता है, जबकि प्रेम-क्रीड़ा और संभोग का प्रत्येक भाग अपने आप में पूर्ण हो, उसमें किसी प्रकार की कमी न रह गई हो। शरीर और मन की पूर्ण पवित्रता की स्थिति तभी प्राप्त होती है, जब साधक और साधिका के तन और मन संभोग की पूर्ण अवस्था में, दो से एक अर्थात् अभिन्न हो जाते हैं—यह अद्वैत की अवस्था है । तन्त्र-विद्या में बताया गया है कि इस पूर्ण आनन्द को प्राप्त करने का सभी को अधिकार है, चाहे वे किसी जाति, वर्ग, वर्ण, रंग, योनि, व्यवसाय, स्थान, देश, धर्म या सम्प्रदाय के हों। तन्त्र की रहस्यमय विधियों पर आचरण करते हुए प्रत्येक स्त्री और पुरुष इस आनन्द को प्राप्त करने में सफल हो सकते हैं । तन्त्र-मार्ग में इस परम आनन्द को प्राप्त करने के लिए आसन, मुद्रा, मन्त्र, प्राणायाम, अंग-नियन्त्रण के अभ्यास, मांसपेशियों के प्रशिक्षण के व्यायाम, जाप, समाधि, आत्म-सुझाव आदि अनेक उपाय बताए गए हैं, जिनसे साधक संभोग के समय को अपनी इच्छा के अनुसार जितना चाहे बढ़ा सकता है—स्त्री-पुरुष को ऐसी शक्ति प्राप्त हो सकती है कि वे जब तक न चाहें, तब तक स्खलित न हों ।

तन्त्र का मत है कि जिस समय मन में काम-वासना जागृत होती है, तब शरीर का अंग-अंग उत्तेजित हो जाता है। इस उत्तेजना को दबाने या कुचलने की आवश्यकता नहीं बल्कि मैथुन में प्रवृत्त होकर आनन्द-प्राप्ति में लीन हो जाना चाहिए। जिस समय काम-वासना जागृत होती है तो बहुत-से लोग इसको तृप्त करने से डरते हैं, वे दूसरों की आलोचना से डरते हैं परन्तु तन्त्र का मत है कि इस भय से बढ़कर कोई अधर्म नहीं है। यह भय ऐसी दुर्बलता है जो मनुष्य को नीचे ले जाती है। मनुष्य की सब

प्रकार की सांसारिक तथा पारलौकिक उन्नति में यह भय ही सबसे बड़ी बाधा है, इसलिए इसे तुरन्त ही मन से निकाल बाहर करना चाहिए। यौन-अंगों से अंग मिलाकर और चिरकाल तक उन्हें पूरी तरह उत्तेजित रखकर लगातार संभोग में लगे रहने की सामर्थ्य प्राप्त करना मनुष्य का अधिकार है। तन्त्र में ऐसे मन्त्र हैं कि जिन्हें बोलता हुआ पुरुष स्त्री के और स्त्री पुरुष के यौन-अंगों का स्पर्श करे, उन्हें उत्तेजित करे। अपने मन से अनेक प्रकार की कल्पना करके स्त्री-पुरुष काम-क्रीड़ा और संभोग को अधिक से अधिक आनन्ददायी बना सकते हैं और अनेक प्रकार के योगासनों द्वारा मैथुन में रंगीनी पैदा कर सकते हैं। इस प्रकार के कुशल साधक मानव-जीवन की सबसे आनन्दमयी अवस्था प्राप्त कर सकते हैं। जिसे दिव्य अवस्था कहा गया है। तन्त्र-मार्ग में बताया गया है कि संभोग से पहले दो शरीरों का मिलन, स्पर्श-सुख, संगम और संयोग अत्यन्त आवश्यक है।

तन्त्र में स्त्री का बहुत महत्त्व माना गया है। इसमें बताया गया है कि पुरुष को कभी भी स्त्री का तिरस्कार करने का अधिकार नहीं। तन्त्र-मार्ग में भैरवी यौन-संभोग की गुरु होती है, जो अपनी काम-क्रीड़ाओं से न केवल पुरुष की काम-वासना को पूरी तरह संतुष्ट करती है, बल्कि अपने यौन-अंगों की भीतरी चेष्टाओं से योनि आदि अंगों की मांसपेशियों के संकोचन-प्रसारण (सिकोड़ने-फैलाने) से पुरुष को आनन्द की चरम सीमा तक ले जाती है। तन्त्र में बताया गया है कि केवल पुरुष को संभोग में चेष्टा करने की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि संभोग को पूर्ण बनाने के लिए स्त्री को भी बहुत कुछ करना पड़ता है। जिस प्रकार पुरुष यदि स्त्री को संभोग में चरम सीमा के आनन्द तक नहीं ले जाता तो वह अनाड़ी है, ठीक इसी प्रकार जो स्त्री अपने यौन-साथी को आनन्द की चरम सीमा तक नहीं ले जाती तो वह अनाड़ी है। भैरवी अन्य स्त्रियों को संभोग की सफलता के उपाय सिखला देती है। यदि स्त्री और पुरुष का मिलन पूर्ण आनन्ददायक न हो तो न स्त्री सच्ची स्त्री है और न पुरुष सच्चा पुरुष। यदि दोनों असन्तुष्ट रह जाते हैं तो

निश्चय ही उनपर बुरा प्रभाव पड़ता है। तन्त्र का मत है कि पूर्ण सन्तोष और आनन्द के लिए दोनों का मुक्त व्यवहार तथा खुला सहयोग आवश्यक है। पुरुष और स्त्री दोनों को अपनी संभोग-क्षमता तथा प्रवीणता पर विश्वास होना चाहिए। साथ ही उन्हें एक-दूसरे की काम-कला-कुशलता पर विश्वास होना चाहिए। इसके लिए एक का मन दूसरे के मन से पूरी तरह मिला होना चाहिए और उनकी चेष्टाओं में पूरी तरह तालमेल होना चाहिए।

यदि स्त्री काम-क्रीड़ा और संभोग के लिए कोई उत्साह नहीं प्रकट करती, निश्चेष्ट रहती है या उपेक्षा दिखाती है तो संभोग के आनन्द की चरमसीमा तक पहुंचना असंभव हो जाता है। यदि पुरुष काम-चेष्टाओं में तथा संभोग में पुरुष (मर्द) की तरह कार्य नहीं कर सकता, तो वह अपने को सफल नहीं समझ सकता, ठीक उसी तरह स्त्री भी यदि अपनी ओर से उचित चेष्टाएं नहीं करती तो वह अपने को स्त्री (औरत) समझने का अधिकार नहीं रखती। स्त्री को चाहिए कि वह सचेष्ट, सक्रिय यौन-साथी की तरह काम-क्रीड़ा और मैथुन में कई प्रकार की पहल करे और अपने साथ-साथ पुरुष को आनन्द की चरम-सीमा तक ले जाकर उसे पूरी तरह सन्तुष्ट कर दे। तन्त्र-मार्ग का यह विश्वास है कि स्त्री काम-क्रीड़ा और संभोग में बढ़-चढ़कर भाग ले और संभोग में बराबर की भागीदार बनकर कई तरह की हरकतें करे और मैथुन को आनन्द की पूर्णता तक ले जाए। जब स्त्री पुरुष की हर चेष्टा का जवाब अपनी हरकत से देती है तो दोनों को अधिक सुख मिलता है। जब स्त्री काम-चेष्टाओं और क्रीड़ाओं में बढ़-चढ़कर भाग लेती है तो पुरुष की पूर्ण सन्तुष्टि करती है। उसे धार्मिक क्रिया समझकर अपनी तरफ से पूरी हरकत (चेष्टा) करनी चाहिए। भैरवी साधिका को शिक्षा देती है कि वह अपनी काम-वासना आदि को दबाए नहीं, बल्कि कमल की तरह पूर्णतया खिलने दे। वह साधिका को ऐसा प्रशिक्षण देती है कि जिससे वह काम-कला-प्रवीण हो जाए। वह उसे यौन-अंगों और नस-नाड़ियों का काम बतलाकर चेष्टाओं का ज्ञान कराती है। वह संभोग के समय के

सूक्ष्म से सूक्ष्म तथा गुप्त से गुप्त रहस्य उसे बता देती है। भैरवी उसे बतला देती है कि यदि नस-नाड़ियां, धमनियां, शिराएं और मांसपेशियां अच्छी तरह सधाई गई हों, तो उसमें आवश्यक बल, सामर्थ्य, सहनशक्ति, लचक और सिकोड़ने, फैलाने, थिरकाने की योग्यता पैदा की जा सकती है। भैरवी साधिका को सारे सूक्ष्म और गुप्त रहस्य बताकर उसे संभोग-कुशल बना देती है, जिससे वे तान्त्रिक संभोग के लिए योग्य साथी बन सकें। भैरवी के प्रशिक्षण से साधिका के मन में आत्मविश्वास की भावना बढ़ती है। वह बताती है कि साधिका का काम है, 'पूरी तरह भाग लेना।' भैरवी साधिका को बतलाती है कि वह अपने को 'दुर्बल यौन-संगिनी' न समझे, बल्कि शक्ति का अवतार माने और ऐसी चेष्टाएं करे जिनसे संगी को पूर्ण तृप्ति प्राप्त हो सके। मांसपेशियों की लचक, प्रसन्नता और प्रवीणता से साधिका में आत्मविश्वास पैदा हो जाता है। वह रति-क्रिया अर्थात् काम-क्रीड़ा और संभोग में निपुण साथी बन जाती है। साधारणतया पुरुष को यह सिखाया जाता है किस प्रकार वह संभोग से पहले की रति-चेष्टाओं द्वारा स्त्री को अपने बराबर लाकर फिर संभोग आरम्भ करे। परन्तु तन्त्र-मार्ग में संभोग की चरम सीमा और आनन्द की परम अवस्था तक ले जाने की पूरी जिम्मेदारी पुरुष पर नहीं डाली जाती। तन्त्र-मार्ग में यह कहा गया है कि स्त्री की संभोग की शक्ति कम नहीं है। पुरुष की चेष्टाओं के उत्तर में चेष्टाएं करने की ताकत स्त्री में कम नहीं है। उत्तेजित होने के बाद घर्षण और आनन्द की चरम सीमा में दोनों एक-दूसरे से भिन्न नहीं हैं। 'पुरुष और स्त्री में बहुत फर्क है'—यह विचार ही गलत है। स्त्री को अवश्य ही अपनी काम-क्रीड़ा तथा संभोग-कुशलता का विकास करना चाहिए।

साधिका क्या करे ?

तन्त्र-मार्ग में कहा गया है कि स्त्री अपनी यौन-शक्ति का पूरी तरह विकास करे। उसे आर्थिक गहराइयों से काम-चेष्टाओं की जवाबी कार्यवाही करनी चाहिए। स्त्री को केवल यह नहीं सोचना

चाहिए कि उसे अपने सेक्स-साथी को अधिक-से-अधिक सुख देना है, बल्कि यह भी सोचना चाहिए कि उसे अधिक-से-अधिक आनन्द प्राप्त करना है। काम-क्रीड़ा और संभोग के समय उसे भी खुलकर बाहर आ जाना चाहिए।' उसे पुरुष पर ही सारा उत्तरदायित्व नहीं डाल देना चाहिए और आनन्द की चरम सीमा पर पहुंच जाए तो उसे अपना आनन्द छिपाना नहीं चाहिए। यदि पीड़ा का अनुभव हो तो उसे भी चुपचाप सह नहीं जाना चाहिए। पुरुष की जिस चेष्टा या जिस आसन से उसे सुख मिलता है, उसे स्पष्ट बता देना चाहिए। उसे संगम को पूर्ण सन्तोषजनक बनाने में कुछ कसर नहीं रखनी चाहिए, ताकि पूर्ण आनन्द की स्थिति तक पहुंचा जा सके। जब साधक छेड़छाड़ करने, अंगों को छूने, अंग-अंग चूमने आदि की चेष्टाएं कर रहा हो तो साधिका को पत्थर की मूर्ति की तरह जड़ नहीं रहना चाहिए। जब उसकी काम-वासना तथा रति-शक्ति जाग उठे, तब उसे खुलकर काम-चेष्टाओं में तथा संभोग में भाग लेना चाहिए। उसे नाना प्रकार की चेष्टाएं और हरकतें करके पुरुष की सारी क्रियाओं में पूरा सहयोग देना चाहिए और पूरी तरह ताल-मेल रखते हुए संभोग की पूर्ण आनन्द को स्थिति तक ले जाना चाहिए।

भैरवी साधिका को ऐसी स्थिति बतलाती है कि जिससे उसका अपनी कमर पर पूरा अधिकार हो जाए, हर एक मांसपेशी उसके वश में हो जाए ताकि संभोग के समय वह कमर से जैसी हरकत चाहे, करा सके। वह ऐसे व्यायाम और आसन सिखलाती है जिससे कटि-प्रदेश पूरी तरह साधिका के नियन्त्रण में हो जाए, क्योंकि कटि-प्रदेश के नियन्त्रण से बढ़कर कोई उपाय नहीं है, जिससे पुरुष में अधिक-से-अधिक उत्तेजना उत्पन्न की जा सकती है। भैरवी साधिका को सिखलाती है कि पहले वह सीधी खड़ी हो जाए फिर दोनों हाथ गर्दन के पीछे ले जाकर कमर के आगे की ओर, ऊपर की ओर, नीचे की ओर तथा पीछे की ओर ले जाने, तरह-तरह की हरकतें करने का व्यायाम करे। वह उसे सिखला देती है कि योनि को वह किस प्रकार उभारे, किस तरह भिन्न-भिन्न

शतियां देकर उसे उछाले। स्त्रियों का कमर, कूल्हे, चूतड़ का भाग एक धुरी पर घूमता है, जो एक नितंब अस्थि (चूतड़ की हड्डी) से दूसरे चूतड़ की हड्डी के बीचोबीच होकर जाता है। साधिका को चाहिए कि पहले इसी धुरी पर आगे ऊपर उछाले और फिर नीचे पीछे की ओर ले जाए। जैसे एक प्रवीण नर्तकी अपने पेड़ू को आगे-पीछे, दाएं-बाएं और कई बार चक्की की तरह घुमाती है। उसी प्रकार साधिका को संभोग के दौरान अपने यौन अंगों को चलाने का अभ्यास करना चाहिए। यह व्यायाम करते हुए हर बार कमर के दवाव के साथ उसे पेट को अन्दर की तरफ दबा लेना चाहिए, नीचे-पीछे की क्रिया में साधिका को चाहिए कि वह अपने चूतड़ को पीछे और ऊपर की ओर उछाले। इसके लिए अपनी पीठ को नीचे की ओर दबाए। कमर के दबाव की इस चेष्टा द्वारा संभोग को अधिक से अधिक आनन्दमय बनाया जा सकता है।

स्त्री का बाहरी कामांग योनि है। योनि के बाहरी हिस्से में दाएं-बाएं दो मोटी, गुदगुदी मांस-थैलियां होती हैं, जिन्हें बाहरी ओष्ठ (वृहत् भगोष्ठ) कहा जाता है। इसकी अन्दर की सतह कुछ कोमल, गीली और चिकनी होती है। योनि में लिंग घुसाते समय पुरुष दोनों हाथों से वृहत् भगोष्ठों को दाएं-बाएं हटाता है। ये बाहरी ओष्ठ अति संवेदनशील होते हैं। मैथुन के समय पुरुष इन पर कभी दबाव बढ़ाता है, कभी घटाता है। ऐसे समय स्त्री को चाहिए कि अपने दोनों वृहत् भगोष्ठों को बार-बार कसती, ढीला छोड़ती, कसती, ढीला छोड़ती रहे। बार-बार यही चेष्टा करती रहे। इससे दोनों को अधिक हर्ष होगा तथा अधिक उत्तेजना होगी। स्त्री को चाहिए कि योनि को आगे-पीछे या ऊपर-नीचे करती दवाव को घटाती-बढ़ाती रहे। अपनी मांसपेशियों को व्यायाम द्वारा ऐसा करने का अभ्यास कराया जा सकता है।

पहला व्यायाम

खाली समय में चटाई या चारपाई पर लेटकर स्त्री अपनी इच्छाशक्ति के बल पर बृहत् भगोष्ठों को खोलने, बन्द करने का

अभ्यास कर सकती है, इसमें हाथ लगाने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए।

दूसरा व्यायाम

लेटे-लेटे ही नाभि से लेकर योनि के निचले भाग तक को ऊपर उछालने, नीचे खींचने, दाएं दबाने तथा बाएं दबाने तथा चक्राकार (चक्की की तरह) घुमाने का व्यायाम करना चाहिए। यदि घर में पूरी तरह एकांत हो या अलग कमरा हो तो बड़े शीशे के सामने सारे वस्त्र उतारकर खड़ी हो जाए और फिर बृहत् भगोष्ठ को सिकोड़ने-फैलाने और कमर को ऊपर उछालने, नीचे खींचने, दाईं ओर दबाने और बाईं ओर दबाने का व्यायाम करना चाहिए। इससे नस-नाड़ियां और मांसपेशियां वश में हो जाती हैं और जरूरी ताकत, सहनशक्ति, फुर्ती और लचक पैदा होती है।

मैथुन के दौरान स्त्री अपने पेड़ू को ऊपर उछाले, नीचे खींचे, दाएं चलाए, बाएं चलाए, चक्की की तरह (चक्राकार) चलाए और बृहत् भगोष्ठों को सिकोड़ने-फैलाने की क्रिया करे तथा कभी दबाव कम करे और कभी अधिक करे तथा घर्षण का उत्तर घर्षण से दे।

तीसरा व्यायाम

भैरवी साधिका को योनि-संकोचन की नाना विधियां सिखला देती है। योनि एक लचकदार मांस-थैली है। यह बड़ा लिंग हो तो फैल जाती है, छोटा हो तो सिकुड़ जाती है। इस छोटी-सी दिखाई देनेवाली थैली में से ही प्रसव के समय बच्चा बाहर आता है। इससे पता चलता है कि योनि में कितनी लोच होती है। योनि के भीतर ही काम-सम्बन्धी अनुभूति, फड़कन अथवा सनसनी होती है। इसमें से होकर लिंग का अगला भाग जब गर्भाशय मुख से टकराता है, तो आनन्द का उद्भव होता है। तन्त्र में ऐसी क्रियाएं तथा व्यायाम बताए गए हैं, जिनसे योनि की दीवारें चुस्त बन जाएं, उनकी जड़ता कम हो जाए, वे निर्बल और बेजान न रहें। यदि किसी

मांसपेशी का देर तक उपयोग न किया जाए तो उसका आकार सिकुड़ कर घट जाता है। योनि की मांसपेशियों का यदि देर तक उपयोग न किया जाए, तो उनका आकार सिकुड़कर छोटा हो जाता है। जितना मांस फटता है, उतनी चर्बी चढ़ जाती है तथा प्रयोग न करने से मांसपेशियों के तन्तु अपनी लचक और ताकत खो देते हैं। योनि की मांसपेशियों को सिकोड़ने का व्यायाम उनकी सुस्ती को दूर कर देता है। इन मांसपेशियों को अपनी तीव्र इच्छाशक्ति से ही वश में किया जा सकता है। निरन्तर यह व्यायाम करने से योनि की मांसपेशियां वश में हो जाती हैं, फिर उन्हें इच्छाशक्ति से ही संकुचित या प्रसारित किया जा सकता है। इससे बेजान-सी हुई मांसपेशियां जाग उठती हैं, चुस्त, फुर्तीली तथा सजीव हो जाती हैं। इस प्रकार से योनि-संकोचन करके सम्भोग के आनन्द में मनचाही वृद्धि की जा सकती है। यह गुप्त रहस्य तन्त्र-मार्गियों की गहन खोज का परिणाम है। इसकी विधि इस प्रकार है—

चटाई पर पेट के बल लेट जाइए। दोनों हाथ सिर के नीचे रखिए। हाथों के पंजे जमीन पर हों। अब इच्छाशक्ति के बल पर योनि की मांसपेशियों को बार-बार सिकोड़िए-फैलाइए। पचास से सौ बार तक प्रतिदिन करने से योनि संकुचित हो जाती है और संभोग का सुख चौगुना हो जाता है। यही व्यायाम बैठकर, खड़ी होकर या बिना बाजू वाली कुर्सी पर बैठकर भी किया जा सकता है।

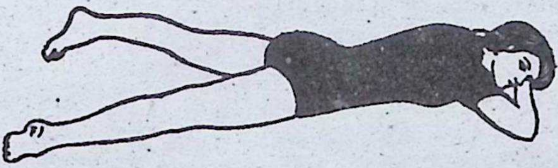

एक भैरवी के बारे में श्री ईश्वरसिंह बैस ने अपने 'खोए तन्त्रों की तलाश' में एक भैरवी का इस प्रकार वर्णन किया है—

तन्त्रों की तलाश के सिलसिले में मैं हरिद्वार आया हुआ था। इस बार मुझे यहां भवानी नामक एक महिला तांत्रिक का पता चला था। सुना था कि वह बहुत पहुंची हुई महिला है और वह सिद्धि के लिए स्वयं भैरवी बनकर कई तन्त्र सिद्ध कर चुकी है। मुझे भैरवी तांत्रिक पुरुष ने कहा था कि कोई स्त्री स्वयं तन्त्र सिद्ध नहीं कर सकती, हां, किसी पुरुष के माध्यम से स्वयं भैरवी की भूमिका अदा करते हुए साथी पुरुष को वह तन्त्र सिद्ध करा सकती है। फिर उस तन्त्र की सिद्धियों का लाभ उसी पुरुष के माध्यम से उठा सकती है। पर भवानी के बारे में मैंने सुना कि वह सिद्धों की सिद्ध है और स्वयं तन्त्र सिद्ध कर लेने की क्षमता रखती है। भैरवी बन कर और वही सब अनुष्ठान करती है जो पुरुष साधक करते हैं। मैंने भैरवी की उम्र के बारे में भी काफी विवादास्पद बातें सुनीं। किसी ने उसे पचास साल की बताया और किसी-किसी ने तो सैकड़ों साल की। पर एक बात सभी ने कही कि वह 'बेहद सुन्दर है' और २० वर्ष की लड़की से अधिक की नहीं दिखती। गजपति बता रहा था कि उसने सुना है कि भवानी के अन्दर इतनी ताकत है कि वह सिर्फ मुक्का मारकर बड़े से बड़ा पत्थर तोड़ सकती है। गजपति का यह भी कहना है कि भवानी स्वयं देवी का अवतार है।

"इस बार मुझे हरिद्वार में कुछ तन्त्र-विद्या के जानकारों से भवानी की चर्चा सुनने को मिली। इन लोगों ने इस लड़की की सिद्धियों का कुछ इस तरह वर्णन किया कि मैं उससे मिलने को उत्सुक हो उठा। यह भी पता चला कि भवानी ने शिव-साधना के अन्तर्गत आनेवाला साबर तन्त्र सिद्ध कर रखा है। भवानी के पिता काशी के प्रसिद्ध तान्त्रिक थे। भवानी ने शादी नहीं की थी और अपने पिता के ही एक शिष्य को सिद्धि की प्राप्ति के लिए चुना। अब वह अकेली कभी यहां, कभी वहां घूमती रहती है। उसका यह इतिहास मुझे कनखल के एक तान्त्रिक से सुनने को मिला था। यह तान्त्रिक भवानी को कोई महान तान्त्रिक मानने को तैयार नहीं

था। इस तान्त्रिक को लोग गोलू तान्त्रिक कहते थे। गोलू का कहना था कि भवानी कोई तान्त्रिक-वान्त्रिक नहीं है और न ही वह कोई सौ दो सौ साल उम्र की है। वह चालीस साल की औरत है। तरह-तरह के नाटक करती है। हाथ की सफाई दिखलाती है। भला औरत जात भी कोई सिद्धि को प्राप्ति कर सकती है ! पूरी एय्याश है, एय्याश। तान्त्रिक साधना की आड़ में वह अपनी हवस पूरी करती है। दिन-भर कच्ची शराब पीती है…।"

पर अधिकांश लोगों की मान्यता थी कि वह एक सिद्ध औरत है और साक्षात् दुर्गा का अवतार है। साबर तन्त्र कोई दुर्लभ या अप्राप्त तन्त्र नहीं है। वास्तव में यह कोई एक तन्त्र नहीं है। कई तन्त्रों का समूह है। यह तन्त्र टुकड़े-टुकड़े में तो कई लोगों के पास मिल जाता है पर समूचा तन्त्र मिलना कठिन है। इस तन्त्र को सिद्ध करने के बारे में हमने यही सुना था कि जिन लोगों ने इसे सिद्ध किया है उन्होंने केवल इसके कुछ अंशों को ही सिद्ध किया है। साबर तन्त्र के अन्तर्गत आनेवाले सभी यन्त्रों को सिद्ध करनेवाला मिलना मुश्किल है। भवानी के बारे में यही सुना था कि उसने इसके सभी यन्त्रों को सिद्ध कर रखा है। साबर तन्त्र के अन्तर्गत आनेवाले कुछ एक महत्त्वपूर्ण यन्त्र ये हैं—मोहिनी यन्त्र, सुखप्रसव-यन्त्र, चामुण्डा यन्त्र, वशीकरण यन्त्र, शत्रुनाशक, गर्भरक्षा यन्त्र आदि। यन्त्र, तन्त्र का एक हिस्सा होता है। इन सभी यन्त्रों के चार्ट अलग-अलग ढंग के होते हैं और उन्हें बनाकर या किसी सिद्ध तान्त्रिक से बनवाकर तन्त्र में दी गई विधि से उन्हें सिद्ध करना होता है। साबर तन्त्र के कुछेक यन्त्रों में भैरवी (साथिन) की आवश्यकता नहीं होती। पर अधिकांश यन्त्रों की सिद्धि के लिए भैरवी आवश्यक है। साबर तन्त्र के कुछ यन्त्रों के लिए ऐसी साथिन की आवश्यकता कही गई है, जो अक्षत योनि हो अर्थात् जिसने कभी पुरुष संसर्ग पहले न किया हो। पर यदि अक्षत योनि कन्या न मिले तो अपनी साथिन या पत्नी को भैरवी के रूप में प्रयोग किया जा सकता है, पर इस स्थिति में अनुष्ठान कुछ लम्बे हो जाते हैं।

भवानी से मिलने की हमारी उत्सुकता का मुख्य कारण यह था

कि उसने स्त्री होते हुए भी यह समूचा तन्त्र सिद्ध कर लिया है—वह कैसे किया ? जबकि हमारी जानकारी के अनुसार तन्त्रों की सिद्धि में स्त्री मात्र माध्यम बन सकती है, सिद्ध करनेवाला पुरुष ही होता है।

भवानी को पहली बार यानी एक दिन पहले कनखल के प्रसिद्ध त्रिपुरसुन्दरी मन्दिर के पास देखा था। उस समय मेरे साथ हिमाद्रि घोष थे जो स्वयं तन्त्र-विद्या तथा तन्त्र-साहित्य के अच्छे जानकार हैं। उन्होंने बताया कि यह सुन्दरी भवानी है और बहुत बड़ी साधिका है। मैंने भर नजर उस महिला को देखा। लाल सुर्ख तेजस्वी चेहरा, गहरे लाल रंग की साड़ी, पर चोली नहीं, पुष्ट उरोजों की गोलाई साड़ी से स्पष्ट दीखती हुई और इन सबसे ऊपर बड़ी-बड़ी काली हिरनियों जैसी आंखें। माथे पर गोरोचन का बड़ा-सा तिलक। गले में रुद्राक्षों की माला। कुल मिलाकर एक प्रभावशाली व्यक्तित्व। उम्र देखने में मुश्किल से चालीस वर्ष। मैंने घोष से कहा, "यार, इस तान्त्रिक महिला से ज़रूर मिलूंगा।"

"अच्छा, कोशिश करेंगे।" घोष ने कहा।

पर मैं इस बार यहां कोशिश करने नहीं आया था। एक हफ्ते में कुछेक तान्त्रिकों से मिलना था और अब तो एक महिला तान्त्रिक सामने थी, और केवल महिला ही नहीं, बेहद सुन्दर महिला। "ठीक है, तुम कोशिश करते रहना", मैंने घोष से कहा और लपककर भवानी के सामने पहुंच गया।

भवानी ने इस उद्दंडता के लिए भृकुटी चढ़ाकर मेरी ओर प्रश्नवाचक मुद्रा में देखा। मैंने तुरन्त उनकी प्रशस्ति-गाथा सुनी और गढ़ी—दोनों सुनानी शुरू कर दीं और लगभग पांच मिनट उनके स्तुतिगान के पश्चात् मैंने कहा कि मैं कुछ उच्चकोटि के तान्त्रिकों और उनके द्वारा सिद्ध किए तन्त्रों के बारे में सामग्री जमा कर रहा हूं और इसी सम्बन्ध में उनसे मिलने के लिए कुछ समय चाहता हूं।

यह सब सुनकर भवानी का चेहरा सपाट ही बना रहा, किसी भाव की रेखा नहीं उभरी। उन्होंने अपने पास खड़ी एक साधुनी

की ओर इशारा किया। उस साधुनी ने कहा —"आप कल नीलकण्ठ मन्दिर में दिन के समय आ जाइए, देवी वहीं मिलेगी।"

न जाने इतनी बात उसने केवल भवानी के सिर हिलाने से कैसे समझ ली थी।'''गणपति ने बताया कि नीलकण्ठ मन्दिर गौरीशंकर मन्दिर के ऊपरवाले पहाड़ पर है'''

दो बजे हम हांफते हुए नीलकण्ठ मन्दिर के सामने पहुंचे। मैं तो वहीं एक पेड़ के नीचे धप्प से बैठ गया और लगभग दस मिनट तक अपनी सांसों को नियंत्रित करता रहा।

मन्दिर के अन्दर शिवलिंग के सामने भवानी बैठी माला फेर रही थी। बगल में वही गेरुए वस्त्रों वाली साधुनी थी। कुछ क्षणों के मौन के बाद भवानी बोली—"हां, तो क्या कहना चाह रहे थे आप ?"

"आपने महिला होकर भी साबर तन्त्र पूरा-का-पूरा कैसे सिद्ध कर लिया ?" मैंने पूछा।

"क्यों ? क्या शक्ति की प्रतीक स्त्री किसी बात में कम होती है ?" भवानी गर्दन कुछ टेढ़ी करके बोली।

"पर स्त्री तो भैरवी'''" मेरी बात काटकर वह बोली—"मैं आम स्त्रियों से अलग हूं। मैंने अपने अन्दर इतनी शक्ति साधना करके पैदा कर ली थी कि मैं स्वयं भैरवी होकर भी तन्त्र सिद्ध कर सकूं। मैं अपने शक्ति-रूप से ही कोई भी तन्त्र सिद्ध कर सकती हूं। इतनी शक्ति मेरे अन्दर स्वयं शिव ने भर दी है। यह सब शिव की कृपा है कि मैंने उनका प्रिय तन्त्र साबर पूरा-का-पूरा सिद्ध कर रखा है। अनुष्ठानों के समय मुझे दोहरा काम करना पड़ता है। भैरवी भी मैं रहती हूं और साधक भी। मेरा साथी पुरुष तो निमित्त मात्र होता है।"

'''इस तन्त्र को आपने कितने समय में सिद्ध किया ?"

"लगभग दो वर्ष में।"

"आपको इससे क्या मिला ?"

"जो मैंने चाहा। कोई नहीं कह सकता कि मेरी उम्र क्या है। शिवजी जब तक चाहेंगे, मैं जीवित रहूंगी, मेरा रूप ऐसा ही रहेगा।"

५

कामवासना का स्वरूप

कामवासना का रहस्य : तन्त्र ग्रन्थों में लिखा है कि महादेव के गण नन्दी ने सब विद्याओं से कामवासना सम्बन्धी रहस्यों को अलग करके कामसूत्र की रचना की थी। कामसूत्र में एक हज़ार अध्याय थे। यह अत्यन्त सरस तथा प्रामाणिक ग्रन्थ था। उस ग्रन्थ में बताए गए कामवासना सम्बन्धी रहस्यों को लेकर भारत में अनेक ग्रन्थों की रचना हुई। इन ग्रन्थों में वर्णन किए गए तथ्यों का सार संक्षेप में इस प्रकार है—

मनुष्य की आयु सौ वर्ष स्वीकार की गई। उन सौ वर्षों को इस तरह बांटा जाना चाहिए कि मनुष्य में उन सभी पुरुषार्थों को प्राप्त करने की योग्यता उत्पन्न हो सके जो मनुष्य-जीवन का उद्देश्य है। कर्म करना मनुष्य का स्वभाव है, परन्तु उसे कर्मठ इस प्रकार करना चाहिए कि उसके प्रयत्न तीनों प्रकार के मुख्य पुरुषार्थों को सिद्ध कर सकें। उसके पुरुषार्थों को दूसरे पुरुषार्थ के पूर्ण होने में बाधक नहीं होना चाहिए। सिर्फ एक पुरुषार्थ में सफलता और दूसरे पुरुषार्थों की उपेक्षा मनुष्य का जीवन एकांगी बन जाता है। ऐसे जीवन फो पूर्ण विकसित जीवन नहीं माना जा सकता।

मनुष्य के सौ वर्षों के जीवन को पुरुष की दृष्टि से तीन अवस्थाओं में बांटा गया है—

बाल अवस्था—जन्म से लेकर सत्रह वर्ष तक।

यौबन अवस्था—सत्रह वर्ष से लेकर सत्तर वर्ष की आयु तक।

वृद्धावस्था—सत्तर वर्ष की अवस्था से लेकर अन्त तक।

बाल-अवस्था विद्या पढ़ने और सीखने की अवस्था है। यह जीवन के लिए योग्य बनने की तैयारी का काल है, इसलिए मनुष्य का कर्तव्य है कि जितनी विद्याएं पढ़ सके पढ़े और काम-धन्धे, कला-कौशल सीख सके, सीखे। इस काल में चरित्र तथा व्यक्तित्त्व का विकास किया जाता है। भावी जीवन में धर्म, धन तथा काम-वासना की तृप्ति के योग्य बनने का यही अवसर होता है।

यद्यपि पुरुष की यौवन अवस्था सत्रह वर्ष या उसके आस-पास की उम्र में आरंभ हो जाती है, परन्तु तब तक पुरुष का यौवन परिपक्व नहीं होता इसलिए वह स्त्री-मैथुन करने और सन्तान उत्पन्न करने योग्य नहीं होता। पुरुष में यह अवस्था पच्चीस वर्ष की आयु में होती है। इस अवस्था तक पुरुष के अंग पूरी तरह परिपक्व हो जाते हैं। यौवन में पुरुष को धर्म करने, धन कमाने तथा कामवासना की तृप्ति के लिए पूरी तरह प्रयत्न करना चाहिए। यौवन-काल में काम-संभोग में लज्जा नहीं करनी चाहिए।

ब्रह्मचर्यमेव त्वाविद्याग्रहणात्।

[विद्या-अध्ययन करने की अवस्था तक ही ब्रह्मचर्य की आवश्यकता है।]

स्त्रियों के सौ वर्ष के जीवन का तीन अवस्थाओं में इस प्रकार बांटा गया है—

बाल अवस्था—जन्म से बारह-सोलह वर्ष तक।

यौवन अवस्था—सोलह वर्ष से साठ वर्ष की आयु तक।

वृद्धावस्था—साठ वर्ष की अवस्था से लेकर अन्त तक।

जिस प्रकार बाल अवस्था में कामवासना की पूर्ति का प्रयत्न उचित नहीं, उसी प्रकार यौवन अवस्था में कामवासना की पूर्ति से दूर रहना उचित नहीं। स्त्री और पुरुष के मैथुन से ही

मनुष्य जाति का जन्म हुआ है। इसलिए स्त्री-पुरुष के मैथुन (संभोग) को जानने में लाज, संकोच या गोपनीयता गलत है। काम-क्रीड़ा या संभोग की चर्चा करना जो लोग 'अपराध' समझते हैं, वे अज्ञानी हैं, और अज्ञान ही हर तरह के दुख और कष्ट का कारण होता है। मानव का जन्म होता है स्त्री-पुरुष के सहवास से और मानव-शिशु के जन्म पर बाजे बजाए जाते हैं, यज्ञ-पूजन आदि किए जाते हैं, मिठाइयां बांटी जाती हैं—तब स्त्री-पुरुष का काम-सम्बन्ध (सेक्स) अश्लील या पाप कैसे हो सकता है? संसार में सबसे बड़ा पाप है—'अज्ञान'। सब दुखों का मूल कारण अज्ञान ही है। तन्त्रमार्ग इस अज्ञान को दूर करना चाहता है। इसमें कामवासना, प्रेम-क्रीड़ा, विषय सुख और सम्भोग आनन्द को पवित्र ही नहीं, बल्कि पूजा की सबसे उत्तम विधि माना गया है। स्त्री-पुरुष के जीवन की उलझनों, कठिनाईयों, कष्टों तथा रोगों का मूल कारण उनका काम (सेक्स) सम्बन्धी अज्ञान है—प्रजनन अंगों के बारे में अज्ञान, प्रेम और सम्भोग की नाना विधियों के बारे में अज्ञान, गर्भ होने तथा गर्भ के विकास के विषय में अज्ञान, प्रसव (बच्चा पैदा होने) के बाद की आवश्यक सावधानियों के बारे में अज्ञान। इस कथन में कोई त्रुटि नहीं है—'अज्ञान ही पाप है।'

आधुनिक विज्ञान भी तान्त्रिकों के इस मत का समर्थन करता है। विकासवाद की धारणा है कि वंशज प्राणी अपने पूर्वज प्राणी के साथ समता भी रखता है और भिन्न भी है। यदि वंशज प्राणी प्राणी-विज्ञान की दृष्टि से बिल्कुल वही प्राणी होता जो उसका पूर्वज था तो फिर विकास कैसे होता?…कुछ परिवर्तन ऐसे होते रहते हैं जिनके कारण वह प्राणी अपनी परिस्थितियों में प्राणधारण के लिए अधिक योग्य और उपयुक्त हो जाता है। ऐसी दशा में नये नमूने के प्राणी रह जाते हैं, और पुराने पिछड़े हुए प्राणी धीरे-धीरे नष्ट हो जाते हैं। प्रकृति के अन्दर निरन्तर चलती रहनेवाली यह प्रक्रिया प्राकृतिक निर्वाचन कहलाती है। प्रसिद्ध शरीरविज्ञानी जे० आर्थर टामसन ने लिखा है कि प्रकृति के अन्दर जितने भी प्रकार के झाड़ने-बुहारने की क्रिया चलती रहती है, उन सबको इस

'प्राकृतिक निर्वाचन के अन्तर्गत मान लिया जाता है। इसके कई प्रकार हो सकते हैं। उसका ऐसा रूप भी हो सकता है कि एक प्राणी में ऐसी नवीनता पैदा हो जाए, जिसके कारण दूसरा प्राणी उसके सामने लोहा न ले सके। एक प्राणी जाति की नई तथा पुरानी किस्मों में यह निर्वाचन-प्रक्रिया काम कर सकती है, अर्थात् यह नवीनता पूरी तरह ऐसी हो सकती है कि इसके कारण प्राणी प्रतिकूल परिस्थितियों के विरुद्ध अधिक सफल ढंग से लड़ने की शक्ति प्राप्त कर सकें।...जिन प्राणियों में अनुकूल नवीनतम का उद्भव हो, वे प्राकृतिक निर्वाचन में आ जाएंगे, अर्थात् जीवन-संग्राम में विजयी होंगे।...वे प्राणी जो जीवन-धारण की दशा में अधिक-से-अधिक प्रयोग कर सकते हैं, बहुत संभव है कि वे उन प्राणियों के मुकाबले में किसी अधिक उन्नत उपाय तक जा पहुंचें, जो प्रयोग कर पाते हैं। प्राकृतिक निर्वाचन (प्रकृति द्वारा योग्यतम को चुनने की प्रक्रिया) में वे ही विजयी होते हैं, जो बहुत अधिक प्रयोग करें। प्रयोग-बहुलता प्राणी को जीवन धारण में अधिक सुविधाए देती है।

यदि दो व्यक्ति नवयुवक और नवयुवती यह निश्चय कर लें कि जीवन धारण सम्बन्धी प्रयोगों को मिलकर करते हुए चलेंगे तो उसका परिणाम यह हो सकता है कि दोनों को लाभ हो और उनकी सन्तान और वंशजों को दोनों प्रयोगों के लाभ प्राप्त हों। मैथुन और प्रजनन में भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रयोग सदा श्रेष्ठ लाभ प्रदान करनेवाले सिद्ध होते हैं। इससे पता चलता है कि मैथुनात्मक प्रजनन में विविध प्रयोगों का कितना महत्त्व है।

विज्ञान आज अनेक प्रयोगों, परीक्षणों तथा अध्ययनों द्वारा इस परिणाम पर पहुंचा है कि मनुष्य जाति में सेक्स केवल सन्तान उत्पन्न करने के लिए नहीं है और सेक्स केवल शारीरिक इच्छा की पूर्ति तक ही सीमित नहीं है। उसमें भावना का भी समावेश है। हर्बर्टसन नामक सेक्सालाजिस्ट ने लिखा है—"पहले जहां केवल एक ऊबड़-खावड़ खाका ही था अब मानव ने इर्द-गिर्द प्रेम-सम्बन्ध का एक मनोहर ताना-बाना बुना है। जहां पहले काम (सेक्स) की

एक कड़ी आंख में दर्द पैदा करनेवाली लगाई थी वहां मनुष्य ने बहुत-से सूक्ष्म रंग उत्पन्न कर दिए हैं।"

परन्तु तन्त्र-मार्ग इससे भी सूक्ष्म है। वह इससे भी परे पहुंचता है। वह कामवासना को आध्यात्मिक स्तर तक ऊंचा उठाकर उसे शरीर और मन से ऊपर ले जाता है। तंत्र में पहले भावनाओं पर विचार किया जाता है। भावना क्या है? शरीर के अंगों द्वारा ग्रहण की गई बाहरी उत्तेजना की प्रतिक्रिया है। मानव का चित्त सब प्रकारकी सौन्दर्य-भावना का स्रोत है। उपचेतन मन जहां हमारी चिरंतन इच्छाएं सोयी रहती हैं और अवचेतन जहां हमारी वासनाएं दमित (दबी) रहती हैं और चेतन मानस जो तर्क, ज्ञान तथा विवेक का वास-स्थान है—मन की अवस्थिति के इन तीनों स्तरोंमेंसर्वोत्तम रचनात्मक शक्ति तभी जागृत होती है, जब अहं को 'सोऽहम्' में लीन किया जाता है। यह तभी हो सकता है जब ज्ञान हो—ज्ञान के बिना तत्त्वदर्शन नहीं हो सकता। मानव की काम-वासना अधिकांश में, उसके मन में रहती है। यदि आपका मन तन्त्र के सन्देश को ग्रहण करने के अयोग्य है तो आपका काम-वासना सम्बन्धी आनन्द सदा सीमित ही नहीं रहेगा। यदि आपके मन से (अब तक बद्धमूल) जड़ता नहीं दूर होगी तो आपको तन्त्र के बताए काम-सम्बन्धी उच्चतर मार्ग का ज्ञान नहीं हो सकता/उससे प्राप्त होनेवाले असीम सुख की प्राप्ति तो और भी दूर की बात है। अब तक आपको अपने प्रेम-पात्र (स्त्री व पुरुष) से जो प्रणय-सुख प्राप्त हो रहा है अथवा नहीं हो रहा—तन्त्र-मार्ग का आग्रह है कि उसे भूल जाइए और नवीन रहस्यमय तन्त्र लोक में प्रवेश कीजिए। जो तन्त्रमार्ग में प्रवेश प्राप्त कर लेता है, जो सार्थक बन जाता है, जो दीक्षा प्राप्त कर लेता है उसे स्वीकार करना पड़ता है कि यह एक अजीब तमाशा है। जीवन एक खेल के समान है जिसमें आनन्द ही आनन्द है। तन्त्र काम-सम्बन्धों का रचनात्मक रूप है और इसमें जो व्यक्ति जितना रचनात्मक प्रवृत्ति वाला होगा, उससे उतना ही आनन्द प्राप्त होगा। यदि आप और आपका साथी (युवक या युवती) रचनात्मक प्रवृत्ति वाले

हैं।...असन्तुष्ट हैं...नये-नये काम-क्रीड़ा व मैथुन सम्बन्धी प्रयोग करने को आतुर हैं तो हम आपको आश्वासन देते हैं कि तन्त्र-मार्ग में बताए गए प्रयोगों के क्षेत्र में प्रवेश कीजिए।

मैथुन शब्द 'मिथुन' शब्द से बना है। मैथुन का अर्थ है—जोड़ा। सृष्टि-उत्पत्ति के समय शिव तथा शक्ति का परिपूर्ण आनन्द में इस प्रकार संगम हुआ कि वे एक-दूसरे से अभिन्न हो गए। उस समय वे अपने को एकमात्र शिव मानने लगे—यही 'अर्ध-नारीश्वर' की परिकल्पना है—'शिवोऽहम्'—मैं शिव हूं। फिर शक्ति ने अपनी आंखें खोली—उसे द्वैत का अनुभव हुआ। उसे अनुभव हुआ कि मैं भिन्न हूं। यद्यपि वह अभी तक शिव के साथ संभोग में समाधिस्थ थी। इसके उपरान्त वे मैथुन-रत न रहकर पृथक्-पृथक् हो गए। परन्तु उनमें काम (वासना, इच्छा) का सम्बन्ध शेष रहा। वे एक-दूसरे से दूर होकर भी कामसूत्र से परस्पर बन्धे रहे। इसके अनन्तर शक्ति का लास्य नृत्य आरम्भ हुआ। वह नर्तन उसकी मुद्राएं, चेष्टाएं इतनी मुग्ध करनेवाली थीं कि शिव उस नृत्य पर मुग्ध हो गए। उन्हें उस नर्तन की मुद्राएं, चेष्टाएं अपने नृत्य की मुद्राओं, चेष्टाओं से भिन्न प्रतीत हुईं और शक्ति के नर्तन के साथ-साथ जो सृष्टि परमाणु रूप में—बीज रूप में थी, वह नाच उठी। कण-कण नाच उठा, ज़र्रा-ज़र्रा नाच उठा और उसी थिरकन से थिरकते पर्वत, थिरकती शिलाएं, थिरकता सूरज, थिरकता चन्द्र, थिरकती चांदनी, थिरकते वन और पेड़, थिरकते स्थावर और जंगम (जड़-चेतन), थिरकते स्वेदज, जरायुज, अण्डज और उद्भिज्ज उत्पन्न हुए। समस्त सृष्टि शक्ति की थिरकन है—पवन थिरकन है, विचार थिरकन हैं, संगीत की लय-ताल थिरकन है, मन्त्रों का उदात्त-अनुदात्त-चरित थिरकन है। प्राण थिरकन हैं, प्रेम थिरकन है और सम्भोग थिरकन है। सब सृष्टि मिथ्या है। केवल इन्द्रियों द्वारा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श शब्द के रूप में हमें उसका भान होता है, जो एक भ्रम है। वस्तुतः यह शक्ति के नर्तन की थिरकन का विस्तार है। और तन्त्र ('तनु-विस्तारे' धातु से बना शब्द) उसी विस्तार के अध्ययन का मार्ग है।

शक्ति के साक्षात् दर्शन का मार्ग है।

स्त्री और पुरुष भिन्न होकर भी अभिन्न हैं। आधुनिक वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि यदि किसी पशु (गाय के जवान बछड़े) के अण्डकोष निकाल दिए जाएं तो उसका स्वभाव नर से भिन्न हो जाता है। उसमें वसा (चर्बी) एकत्र हो जाती है तथा उसके सींग गाय और सांड के बीच एक तीसरे प्रकार के हो जाते हैं। उससे हम काम भी आसानी से ले सकते हैं। वैज्ञानिक प्रयोगों से पता चलता है कि कुछ ग्रन्थियां (एण्डोक्राइन ग्लैण्ड्स) रस क्षरण करती हैं जैसे—पिट्युटरी, थायराइड, सुपरिनल—इनके साथ ही पुरुष में अण्डकोष-ग्रन्थियां तथा स्त्री में गर्भाशय व योनि से रस क्षरण होता है अथवा हार्मोन (रासायनिक ओज) रक्त प्रवाह में भेजा जाता है जिससे शरीर पर बहुत प्रभाव पड़ता है। पुरुष द्वारा क्षरित इस प्रकार के हार्मोन को 'टेस्टोसेरोन' तथा स्त्री द्वारा क्षरित हार्मोन को 'आइस्ट्रिन' कहते हैं। पुरुष के विशेष अंगों का विकास अण्डकोष से क्षरित हार्मोन्स के बिना नहीं हो सकता लेकिन बालिग अवस्था तक स्त्री-अंगों का विकास गर्भाशय (ओवरी) से क्षरित होनेवाले हार्मोन्स के बगैर भी जारी रह सकता है। वैज्ञानिकों के कौतूहल की कोई सीमा नहीं है। उन्होंने चुहिया में पुरुष चूहे के होर्मोन्ज़ का इन्जैक्शन देकर देखा तो उन्हें ज्ञात हुआ कि उनकी भगनासा (क्लिटोरिस) बढ़ गई है अर्थात् चुहिया में चूहे की विशेषता उत्पन्न हो गई। इसी तरह नर चूहे में अण्डकोष ग्रन्थि निकाल दी गई तो उसका विकास उल्टी तरफ होने लगा, अर्थात् चुहिया के रूप में। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि मूल रूप से मनुष्य नारी है। पुरुष उससे अलग व एक प्रकार—भेद मात्र है। वैज्ञानिकों का मत है कि प्रकृत्ति ने पहले स्त्री को बनाया, और फिर उससे हटकर पुरुष को बनाया। आदि प्रकृत्ति के रूप में महादेव की अपेक्षा दश-महाविद्या की पूजा अधिक तात्विक है। इससे पता चलता है कि पुरुष और स्त्री मूल रूप में एक हैं अतः पुरुष में स्त्रीत्व और स्त्री में पुरुषत्व पर अधिक आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

धर्मध्वजी, पाखंडी, रूढ़िवादी और बनावटी लोग सेक्स के

विषय को गोपनीय मानते हैं और कहा करते हैं—"आहार, निद्रा, भय और मैथुन—यह क्रियाएं तो पशु में भी स्वाभाविक रूप से होती हैं। फिर मनुष्य को इनमें से किसी का भी अध्ययन करने की क्या आवश्यकता है? सिंह, सांड, घोड़ा और कुत्ता अपनी-अपनी मादा-संगिनी को पाकर मैथुन करते हैं और सन्तान उत्पन्न करते हैं। क्या वे इसको किसी से सीखते-पढ़ते हैं? फिर मानव को ही इस विषय में सीखने-पढ़ने की क्या आवश्यकता है? क्या मनुष्यों में पशुओं जैसी नर और मादा के सम्भोग की सहज-स्वाभाविक प्रवृत्ति नहीं पाई जाती? मैथुन की चर्चा करना अश्लीलता को बढ़ावा देना है।'

हम इनसे पूछना चाहेंगे कि स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध लाज-संकोच का विषय क्यों? मनुष्य पशु नहीं है। इसकी सहज प्रवृत्ति ही काफी नहीं है। मानव के प्रत्येक प्रकार के कार्यों में, उसकी हर प्रकार की चेष्टाओं में, कुशलता और प्रवीणता की सराहना की जाती है। अधिक कुशल तथा प्रवीण को अधिक प्रशंसनीय माना जाता है। एक बिल्ली जानती है कि वह नवजात बच्चे के पालन की व्यवस्था कैसे करे? कैसे उसे खाना-पीना, चलना और बोलना सिखलाए?

परन्तु मानव-जाति की मादा नहीं जानती कि वह नवजात शिशु के लिए क्या करे? जब तक कि उसे सिखाया-पढ़ाया न जाए—इसका भली-भांति प्रशिक्षण न दिया जाए। इसमें संदेह नहीं कि कुछ स्त्रियां दूसरी स्त्रियो को देखकर, उनका अनुकरण करके कुछ सीख लेती हैं। परन्तु मनुष्य जाति की स्त्रियां अध्ययन और प्रशिक्षण के बिना इन कामों में प्राय: अनाड़ी ही सिद्ध होती हैं। इसका कारण यह है कि मानव-जीवन संश्लिष्ट है—नाना प्रकार की विचित्र उलझनों का समूह है।

जिस प्रकार मनुष्य ने भवन-निर्माण कला, मूर्त्ति कला, चित्र-कला, संगीत कला तथा काव्य कला का विकास किया है, उसी प्रकार उसने कामकला का भी विकास किया है। बल्कि मनोवैज्ञानिकों तथा विचारकों का मत है कि सब प्रकार के कला-कौशल के मूल में काम (सेक्स) ही प्रेरक शक्ति है। विश्व के

समस्त प्राणियों में मानव-जाति सबसे श्रेष्ठ है और उसकी सम्पूर्ण कलाओं तथा समस्त विज्ञान में श्रेष्ठ स्थान काम-कला को है। कारण यह है कि स्वस्थ, सुन्दर तथा सूक्ष्मबुद्धि सन्तान को उत्पन्न करने के लिए काम-कला का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। काम (सेक्स) के ज्ञान पर ही जीवन का सम्पूर्ण विकास निर्भर है। और इसका सबसे सूक्ष्म, सबसे सुन्दर, सबसे सुखदायी, सबसे सरल तथा सबसे आनन्ददायक रूप तन्त्र-विद्या में ही छिपा है।

यद्यपि यह सत्य है कि पशु-पक्षी तथा असभ्य जंगली मनुष्य सन्तान के लिए मैथुन करने में सहज ही प्रवृत्त होते हैं, परन्तु सभ्य मनुष्य समाज और राज्य के अधीन रहते हैं। स्त्री-पुरुष इच्छा होने पर ही एक-दूसरे को प्राप्त नहीं कर सकते—सबके सामने वे आलिंगन-चुम्बन, नखछेदन-दन्तक्षत आदि कामक्रीड़ाएं और सम्भोग नहीं कर सकते, चित्ररत (विचित्र एवं विभिन्न आसनों से), मैथुन नहीं कर सकते। इसके अतिरिक्त पशु-पक्षियों तथा मानवों की कामवासना प्रवृत्ति में यह अन्तर है कि मनुष्य का जोड़ा केवल सन्तान उत्पन्न करने के लिए ही सम्भोग नहीं करता। मानव के लिए कामवासना की तृप्ति आनन्द का एक चिरन्तन स्रोत है। दूसरे प्राणियों में, पशु-पक्षियों और कीट-पतंगों में सम्भोग की प्रवृत्ति केवल ऋतु-विशेष में होती है, जबकि मनुष्य प्रत्येक ऋतु तथा प्रत्येक समय में कामवासना (सेक्स) के सुख और आनन्द को प्राप्त कर सकता है। पूर्ण आनन्द पाने के लिए मनुष्य को काम-कला की भिन्न-भिन्न क्रियाओं तथा अवस्थाओं का सूक्ष्म ज्ञान होना चाहिए।

मनुष्य-जाति की कामवासना अन्य जीवों की भांति पशु-प्रवृत्ति नहीं कही जा सकती कि जहां मर्ज़ी हुई और जिससे मर्ज़ी हुई, कामवासना की तृप्ति कर ली। मानव में तो वह एक कला का रूप प्राप्त कर चुकी है, क्योंकि मानव की कामवासना केवल सन्तान के लिए ही नहीं, बल्कि आनन्द के लिए भी होती है। काम की चौंसठ कलाएं और चौंसठ सहायक कलाएं कही गई हैं। गाना, बजाना, नृत्य, मनोरंजक क्रीड़ाएं, मनबहलाव, कामक्रीड़ा आदि के

समवेत से मानव की कामवासना एक आनन्ददायी रूप धारण करती है, जिसकी पूर्णता सम्भोग के आनन्द में होती है। परन्तु तन्त्र ने काम (सेक्स) को एक आध्यात्मिक रूप में प्रस्तुत किया है, जिसमें काम-तृप्ति का आनन्द शतगुणा हो जाता है। तन्त्र में उसे पूजा माना गया है।

कामवासना के विषय में तन्त्र का मत

अन्य शास्त्र तो कहते हैं, "पुत्रार्थे क्रियते भार्या।" सन्तान के लिए ही स्त्री लाई जाती है। परन्तु तन्त्र-मार्ग इसे नहीं मानता। तन्त्र का मत है कि मैथुन आत्मा को पाशमुक्त करने की—मुक्त करने की साधना है। सम्भोग ही दिव्य आनन्द प्राप्त करने का सबसे उत्तम साधन है। आनन्द प्रदान करनेवाला सम्भोग जीवन की सबसे सुन्दर स्थिति है। सम्भोग जिसमें पूर्ण आनन्द प्राप्त हो, सच्ची उपासना है। जीवन का अर्थ है—प्रेम करने की कला और सम्भोग का अर्थ है—प्रेम का पहला पाठ। मैथुन से ही प्रेम आरम्भ होता है। इसलिए मैथुन दिव्य अवस्था है, जिसमें समाधि की स्थिति में ब्रह्म का आभास हो सकता है।

कामवासना में गुप्त शक्ति है, जिसे काम-शक्ति कहा जाता है और यही वह शक्ति है जिससे नया जीवन जन्म लेता है। अतः कामतृप्ति के लिए सम्भोग करते हुए लाज-संकोच वर्जित है। आनन्ददायी काम सम्भोग में भय, लज्जा तथा संकोच बाधक होता है—तन्त्र-मार्ग काम से प्राप्त होनेवाले आनन्द में बाधक इस मिथ्या आवरण को मन से दूर कर देना चाहता है। तन्त्रशास्त्र कामवासना की स्वीकृति ही नहीं, ऊंचा सम्मान देता है। तन्त्र का यह भी मत है कि योग के सभी आसन मूल रूप में सम्भोग के ही भिन्न-भिन्न आसन हैं—मैथुन की भिन्न-भिन्न स्थितियों से ही योगासनों का आविष्कार हुआ है। चिन्तन, ध्यान और समाधि के भिन्न-भिन्न प्रकार के सम्भोग भी भिन्न-भिन्न मानसिक अवस्थाओं के आधार पर कल्पित किए गए हैं।

तन्त्र-मार्ग कामवासना के सर्वांगपूर्ण—सम्पूर्ण उपभोग का

प्रचार करता है। तन्त्र-मार्ग कामवासना के आरम्भ से सम्भोग की चरमसीमा तक, सेक्स के रहस्य का उद्घाटन करता है। कामवासना और सम्भोग में किसी प्रकार के दुराव-छिपाव, भय या लज्जा को वह अप्राकृतिक-अस्वाभाविक और हानिकारक मानता है। तन्त्र का मत है कि स्त्री और पुरुष के शरीर तथा मन को निर्मल और पवित्र बनानेवाले अंग प्रजनन अंग—लिंग तथा योनि ही हैं। तन्त्र-मार्ग जाति, मत, सम्प्रदाय, रंग, वर्ण, जन्मस्थान, धर्म और स्त्री-पुरुष का भेदभाव नहीं मानता। वह किसी प्रकार के विधि-विधान या बाधा-बन्धन को नहीं मानता। तन्त्र का मत है—"आनन्द सर्वप्रथम है, आनन्द से ही जीव उत्पन्न होते हैं। आनन्द से ही जीवित रहते हैं। आनन्द ही जीवन का उद्देश्य है और आनन्द का साधन है—काम-सम्भोग।"

काम-सम्भोग से आनन्द प्राप्त करने के अमुक उपाय तन्त्र-मार्ग में बताए गए हैं। आनन्द प्राप्त करने की सिद्धि के लिए अनेक आसन, मुद्रा, मन्त्र, प्राणायाम, ध्यान, आत्मसम्मोहन, कल्पना आदि बताए गए हैं।

तन्त्र-मार्ग में कहा गया है कि जब कामवासना-शक्ति जागती है, शरीर का अंग-अंग थिरकने लगता है। इस अनुभूति को दबाना-कुचलना नहीं चाहिए। इसे खुली छूट देनी चाहिए—मन को भय, लज्जा, संकोच से मुक्त करके कामवासना का उपभोग करना चाहिए।

मन में जब कामवासना उत्पन्न होती है, तब बहुत-से मनुष्य डरते हैं कि दूसरे लोगों को इसका पता चल गया, तो वे आलोचना या निन्दा करेंगे। यह भय ही मन और शरीर के उल्लास को कुचलनेवाला हथौड़ा है। भय से बढ़कर अधर्म और पाप दूसरा नहीं है। भय ही मनुष्य की हर प्रकार की उन्नति को रोकता है, विकास में बाधा डालता है और इन्द्रियों तथा मन में विकार उत्पन्न करता है। भय इन्द्रियों पर अंकुश लगाकर उनकी शक्तियों को दुर्बल करता है। भय एक ऐसा पत्थर है जो मनुष्य के गले में बंधकर उसे संसार-सागर में डुबो देता है। मनुष्य की आशाओं, आकांक्षाओं, ऊंचे उठने

की और विकास करने की इच्छाओं को कुचल देता है।

तन्त्र का मत है कि कामवासना को कुचलने वाला व्यक्ति, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, कभी सुन्दर या आकर्षक नहीं रह सकता। उसके अंग पूरी तरह काम करने योग्य नहीं रहते। उसकी मांसपेशियों में लचक कम हो जाती है और उसका शरीर चेतन न होकर जड़-सा होने लगता है। उसकी बुद्धि तीक्ष्ण न रहकर मन्द होने लगती है। कार्यों में उत्साह कम हो जाता है। भीतरी नस, नाड़ियां, धमनियां, शिराएं कम काम करने लगती हैं। इसलिए मनुष्य के गालों की लाली, अधरों की मोहकता, रूप की आकर्षकता कम हो जाती है। इस वर्णन का उद्देश्य यह बतलाना है कि कामवासना दबाने की चीज़ नहीं, उसे उन्मुक्त करके ही जीवन का विकास किया जा सकता है।

तन्त्र-मार्ग में स्त्री-पुरुष की समानता

आमतौर पर यह समझा जाता है कि पुरुष ही कामवासना या यौन-क्रीड़ा के अधिकारी हैं। पुरुष ही काम-क्रीड़ा और मैथुन-क्रिया में सचेष्ट होता है। वही सक्रिय होता है अर्थात् हरकत करता है। स्त्रियों को यौन-इच्छा (कामवासना) प्रकट करने का अधिकार नहीं। उन्हें निष्क्रिय, निश्चेष्ट, कोमल और स्थिति के अनुकूल बनाकर पुरुष की वासना-पूर्ति (यौन-तृप्ति) का साधन बनना चाहिए। उन्हें अपनी तरफ से कोई पहल, चेष्टा, काम-क्रीड़ा या सम्भोग-समय हरकत नहीं करनी चाहिए। मैथुन के समय उन्हें आनन्द का चरम-उत्कर्ष प्राप्त करने के लिए कोई कोशिश नहीं करनी चाहिए। अच्छी स्त्री वही है जो रतिक्रिया के प्रति अरुचि प्रकट करे, वह ऐसा प्रदर्शन करे कि वह लाजवन्ती है और काम-क्रीड़ा तथा मैथुन की उसे कोई रुचि नहीं। चाहे स्त्री को कामवासना सता रही है, चाहे उसकी यौन-इच्छा भड़क उठी है, सेक्स की ज़ोरदार भूख तंग कर रही हो, कामाग्नि झुलसा रही हो— तो भी उसे पुरुष पर 'पहले' अपनी इच्छा नहीं प्रकट करनी चाहिए। भले ही रति-क्रिया तथा मैथुन उसके आरोग्य के लिए

कितने ही आवश्यक हों तथा मन के आनन्द के लिए कितने ही जरूरी हों, उसे पति से काम-क्रीड़ा और सम्भोग की मांग नहीं करनी चाहिए। स्त्रियों के लिए रति-क्रीड़ा तथा मैथुन आनन्द की इच्छा करना वर्जित है।

आज से सहस्रों वर्ष पूर्व योनि और लिंग के पूजा के रूप में तन्त्रमार्ग ने इस मिथ्या विश्वास को दूर किया। तन्त्र का मत है कि स्त्री को भी अपने मन की कामवासना को खुली छूट देनी चाहिए। उसे लज्जा, भय, संकोच से अपने को मुक्त करना चाहिए। पुरुष और स्त्री दोनों ही सचेष्ट हों, दोनों ही सक्रिय हों, दोनों ही हरकत करें, दोनों के अंगों की थिरकन सहज-स्वाभाविक हो—बेरोकटोक हो। दोनों मोहब्बत से लबालब भरे हों—प्रेम से परिपूर्ण हों। दोनों उत्साह से भरे हों, एक-दूसरे को सुख देने के लिए उत्सुक हों, तभी मैथुन का पूर्ण आनन्द प्राप्त किया जा सकता है। यदि नारी नर की तरह-तरह की हरकतों से आनन्द पाने की इच्छा रखती है, तो नर भी नारी की तरह-तरह की हरकतों से आनन्द प्राप्त करने की इच्छा करे। मजा तभी है, जब दोनों एक बराबर सक्रिय हों। जिस प्रकार नर को कामवासना से उत्तेजित होने पर अपनी संगिनी को रति-क्रीड़ा तथा यौन-क्रिया के लिए तैयार करने का अधिकार है, उसी प्रकार नारी को भी पूरा अधिकार है कि कामवासना से उत्तेजित होने पर अपने सेक्स-साथी को 'तैयार' करने के लिए वह 'पहल' करे और इसमें भय, लाज, संकोच को बाधा न माने। वह 'छुईमुई', 'लजीली', 'लाजवन्ती' न रहे बल्कि खुलकर बोले, चले, फिरे, फुर्ती दिखाए, रति-क्रीड़ा और मैथुन में अपनी तरह-तरह की हरकतों से उसे कला का रूप देकर सम्भोग को परम आनन्द की अवस्था तक ले जाए। स्त्री को पुरुष की संगिनी, सहयोगिनी तथा सहभागिनी तभी कहा जा सकता है, जब वह काम-क्रीड़ा तथा सम्भोग को अधिक आनन्द की अवस्था तक पहुंचाने में अपनी ओर से पूरा सहयोग दे। तन्त्र-मार्ग में कामवासना की तृप्ति के लिए स्त्री भी उतनी स्वतन्त्र है, जितना पुरुष। तन्त्र में यह माना गया है कि पुरुष यदि ईश्वर है, शिव है तो स्त्री ईश्वरी है, शक्ति

है। इसी लिंग की पूजा से भी पहले योनि की पूजा की जाती है। तन्त्र में स्त्री को अबला, दासी या आश्रिता न मानकर 'शक्ति' माना गया है। तन्त्र-मार्ग में स्त्री पुरुष से जिस उन्मुक्तता की मांग करती है, पुरुष भी स्त्री से उसी उन्मुक्तता की मांग करता है। वह सेक्स में स्त्री के शरीर की सक्रियता की मांग करता है। वह अपनी हरकत के जवाब में स्त्री की जवाबी कार्यवाही चाहता है।

आनन्द का स्रोत

मनुष्य के लिए कामवासना, रति-क्रीड़ा और सम्भोग आनन्द के स्रोत हैं। हर समय, हर ऋतु में और हर स्थान पर मनुष्य को रति-क्रिया में आनन्द प्राप्त हो सकता है। मैथुन एक आकर्षक, रहस्यमय तथा आनन्ददायी क्रीड़ा है। इसमें अनेक क्रियाएं की जाती हैं। अनेक सूक्ष्म भावनाएं, कल्पनाएं, थिरकनें और चेष्टाएं की जाती हैं। मनुष्य ने कामवासना का कला की सीमा तक विकास किया है। तन्त्र-मार्ग रति-क्रिया को उपासना मानता है। वह काम-क्रीड़ा तथा सम्भोग की भिन्न-भिन्न विधियों की जानकारी देता है। वह आनन्द के अनेक गुप्त रहस्यों का उद्घाटन करता है। तन्त्र-मार्ग स्त्री-पुरुषों को माता-पिता के बन्धन से, भाई-बहन के बन्धन से, सम्बन्धियों की लाज से, पड़ोसियों के बन्धन से और समाज के बन्धन से मुक्त कराता है। तन्त्र यह शिक्षा देता है कि जो पुरुष कामवासना से अन्धा है, स्वार्थी है, मतलबी है—वह स्त्री की भावनाओं की परवाह नहीं करता। वह उसे 'तैयार' नहीं करता। वह उसे प्रेम-क्रीड़ा और सम्भोग में 'पहल' करने और 'हरकत' करने का अधिकार नहीं देता और इस प्रकार मानो शव के साथ सम्भोग करता है। सम्भोग आनन्द का स्रोत है, परन्तु ऐसा पुरुष जो स्त्री को सेक्स के पूर्ण अधिकार नहीं देता, वह इस आनन्द-स्रोत से दूर ही रहता है।

६

रज और वीर्य

मनुष्य-शरीर के मुख्य तत्त्व : रज और वीर्य स्त्री और पुरुष के शरीर के मुख्य तत्त्व हैं। स्त्री से सम्भोग करते हुए पुरुष का देर तक स्खलित न होना आनन्ददायक होता है। इससे व्यक्ति का शरीर नीरोग होता है और मन तथा मस्तिष्क हल्का-फुल्का। वीर्य के शीघ्रपतन से पुरुष और स्त्री को एक धक्का-सा लगता है और कई बार तो स्त्रियों को मैथुन से ही अरुचि हो जाती है। तन्त्र-शास्त्र में कहा गया है कि मल को शरीर से बाहर निकालने का काम कुटू नाड़ी करती है। मूत्र बाहर निकालने का काम सिवनी नाड़ी (वीर्यवाहिनी नाड़ी) करती है। अर्थात् सिवनी नाड़ी का काम है वीर्य स्खलित करना। तन्त्र की अनेक क्रियाएं ऐसी हैं, जिनसे वीर्यवाहिनी (सिवनी नाड़ी) में खून का संचार ठीक ढंग से होता है, जिससे मनुष्य की सम्भोग-शक्ति बढ़ जाती है। यौन-समागम अर्थात् मैथुन से पुरुष को नारी तथा नारी को पुरुष पूरी तरह तृप्त करे, तभी सम्भोग का मज़ा है। इस प्रकार का आनन्द-दायी सम्भोग ही पुरुष और स्त्री के मुखमण्डल पर कान्ति के रूप में चमकता है। पुरुष की सम्भोग-शक्ति इतनी सुदृढ़ होनी चाहिए कि उससे स्त्री को अधिक-से-अधिक आह्लाद प्राप्त हो सके। सम्पूर्ण आनन्ददायी सम्भोग की पहचान यह है कि उसके बाद पुरुष तथा स्त्री दोनों ही आनन्द से विह्वल हो जाते हैं और काफी देर तक कुछ भी बोलने में असमर्थ रहते हैं। देर तक सम्भोग करते हुए

स्खलित न होना पुरुष के पुंस्त्व की निशानी है और तन्त्र में बताए गए उपायों से यह शक्ति मनुष्य को अनायास ही प्राप्त हो जाती है। वे घण्टों स्त्री के स्तनों पर हाथ रखकर बैठ सकते हैं, लेकिन स्खलित नहीं होंगे। जो पुरुष किसी स्त्री के साथ केवल पांच मिनट मधुर बातचीत से ही कामातुर हो जाते हैं और मैथुन आरम्भ करते ही, या उससे पहले ही क्षरित हो जाते हैं, तन्त्र-विद्या ही उनके लिए उपाय बतला सकती है। तान्त्रिक क्रियाओं से यह सिवनी नाड़ी इतनी सबल हो जाती है और इसकी क्रिया इतने उचित ढंग से होने लगती है कि वीर्य-सम्बन्धी सारी दुर्बलताएं दूर हो जाती हैं। फिर नर और नारी जितना चाहें—सम्भोग का आनन्द ले सकते हैं। घन्टों तक सम्भोग करने पर भी दोनों स्खलित नहीं होते और देर तक आनन्द को स्थिर रखने में सफल हो सकते हैं। जिन स्त्रियों या पुरुषों में काम-इच्छा (मैथुन की चाह) नहीं होती, उनमें भी तान्त्रिक क्रियाओं द्वारा कामवासना तथा सम्भोग की इच्छा जगाई जा सकती है। जो अपनी मैथुन-शक्ति की दुर्बलता के कारण इससे घृणा-सी करने लगते हैं, उनका जीवन भी सर्वथा बदल सकता है। जिन स्त्री-पुरुषों के रज कीटाणु या शुक्राणु कम या दुर्बल हो गए हैं तान्त्रिक क्रियाओं में सम्मिलित होने पर उन्हें बढ़ाया और सजीव किया जा सकता है।

आयुर्वेद में लिखा है कि भोजन से रस, रस से रक्त, रक्त से मांस, मास से मेद, मेद से अस्थियां, अस्थियों से मज्जा और मज्जा से शुक्र बनता है। तान्त्रिक क्रियाओं से मनुष्य अपने शरीर को इस प्रकार सधा सकता है कि उसका खाया भोजन ठीक समय पर पचे और रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र का ठीक-ठीक निर्माण हो। साथ ही तान्त्रिक क्रियाओं से नस-नाड़ियां इतनी सक्रिय बनाई जा सकती हैं कि मैथुन के समय रज-वीर्य उचित मात्रा में तथा उचित समय पर स्खलित हों। सबल, स्वस्थ निश्चिन्त और हर्षित नर-नारी ही मैथुन-शक्ति बढ़ाकर सम्भोग का असली आनन्द प्राप्त कर सकते हैं। तान्त्रिक क्रियाओं का असर शरीर और मन दोनों पर होता है, जिससे शरीर और मन पूर्ण स्वस्थ

होते हैं। इससे दोनों की मैथुन-शक्ति सबल हो जाती है और फिर जितनी देर तक चाहें सम्भोग जारी रख सकते हैं। मैथुन की चरम सीमा के आनन्द से बहुत अधिक लोग परिचित नहीं हैं। वे तो जरा सी देर में इसे समाप्त कर देते हैं। तन्त्रमार्ग का साधक समय से पूर्व ही कभी वृद्ध नहीं होता क्योंकि उसकी सम्भोग शक्ति कभी क्षीण ही नहीं होती है तथा सम्पूर्ण आनन्द प्राप्त करने के कारण वह चिरयौवन प्राप्त करता है। तन्त्रमार्गी ही सबसे शक्तिशाली सम्भोगकर्ता हो सकता है और अपनी यौवन-शक्ति को युवा-अवस्था के बाद भी उतनी ही समर्थ बनाए रख सकता है, जितनी कि एक स्वस्थ युवक की। इसी प्रकार जो स्त्री चिरकाल तक सम्भोग कराने की शक्ति रखती है, वही पुरुष को आनन्द प्रदान कर सकती है। यह शक्ति तन्त्रमार्ग के सिवा और किसी तरह प्राप्त नहीं हो सकती।

मानव-जाति के आदिकाल से कामवासना ही मनुष्य को कर्म करने की प्रेरणा देती आई है। आदिकाल से कामवासना की चर्चा ही मनुष्य को उत्तेजना देती आई है। रति-क्रीड़ा एवं मैथुन के नाम से मानव-मन में एक विचित्र-सी लहर दौड़ती है और शरीर में रोमांच हो आता है। सब प्रकार के श्रेष्ठ कार्यों में, हर प्रकार की ललित कलाओं में तथा हर प्रकार की वीरता के पीछे कामवासना ही प्रेरणा-शक्ति के रूप में कार्य करती हुई दिखाई देती है। कामवासना का अर्थ है कि विचित्र प्रकार की सनसनी, एक अद्भुत-सी उत्तेजना, एक प्रसन्नता और आनन्द की लहर और एक रोमांच। एक विद्वान ने लिखा है, "प्रेम का परिणाम कामवासना, कामवासना का परिणाम सम्भोग-सुख है परन्तु कामवासना का आनन्द इससे परे की वस्तु है—वह आनन्द ऐसा है कि जिसका शब्दों में वर्णन नहीं किया जा सकता। स्त्री-पुरुष के इस मिलन से जो आनन्द प्राप्त होता है, उसी से नवीन शिशु का बीजारोपण होता है। परन्तु मानव-प्राणी के लिए प्रजनन या गर्भाधान के अलावा भी काम-क्रीड़ा और मैथुन का आनन्द एक विलक्षण, रहस्यमय तथा अत्यन्त प्रिय वस्तु है। पुरुष और स्त्री के सम्भोग में एक के अंग

दूसरे के अंगों से मिलते हैं— एक-दूसरे में प्रवेश करते हैं—एक के रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द को दूसरा अपने अंगों से पीता-सा जान पड़ता है। यदि गहराई से देखा जाए तो स्त्री और पुरुष दोनों अलग-अलग व्यक्तित्व नहीं हैं, दोनों एक व्यक्तित्व का भाग हैं—दोनों को मिलाकर एक पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण होता है—दोनों मिलकर एक इकाई बनते हैं। एक भाग के बिना दूसरा भाग अधूरा है और दोनों के बाधाहीन मिलन के बिना, उस एक इकाई का निर्माण नहीं हो सकता, जिससे आनन्द का अनुभव होता है।"

तन्त्र-विद्या ने इस एक इकाई के निर्माण की ही 'अर्ध-नारीश्वर' के रूप में कल्पना की है। इसी आनन्द को प्राप्त करने के लिए मानव का जन्म हुआ है। यही कारण है कि तरुणाई आते ही हर युवती सपनों में अपने प्रियतम से मिलन के स्वप्न संजोया करती है और प्रत्येक तरुण अपने मन में अपनी कल्पित प्रियतमा की (अपनी सपनों की रानी की) रूप-राशि का चित्र बनाया करता है। हर एक युवती अपने आनन्द के लिए भंडारों को ढूंढ़ा करती है और प्रत्येक युवक अपनी आनन्द की सरिता में डुबकियां लगाने को आतुर रहता है। परन्तु कई बार सब युवक अपनी मनचाही प्रियतमा को प्राप्त करके भी उस आनन्द को पाने के लिए तड़पते रहते हैं जिनके उन्होंने सपने देखे थे। क्यों? इसका कारण यह है कि इन युवक-युवतियों को उन आश्चर्यजनक गुप्त शक्तियों का ज्ञान नहीं जो तन्त्र-विद्या में छिपी हैं। उनकी अद्‌भुत सामर्थ्य, विचित्र क्षमता, आश्चर्यजनक सम्भोग-शक्ति दबी की दबी रह जाती है। तन्त्र-विद्या ही उन शक्तियों को जगाने का साधन है। एक विद्वान् ने ठीक़ कहा है—

"जब युवक-युवती कामवासना, काम-क्रीड़ा और सम्भोग सम्बन्धी कल्पना की ऊंची उड़ानों और मधुर सपनों को पूर्ण होते नहीं देखते तो वे समझते हैं कि सब सुहाने सपने झूठे होते हैं। उन्हें यह भ्रम होने लगता है कि सम्भोग से प्राप्त होनेवाला आनन्द कल्पना की वस्तु है—मिथ्या है—एक झूठी कहानी है। परन्तु सच्चाई यह है कि उनका अज्ञान ही उन्हें सच्चे आनन्द से दूर,

रखता है। तन्त्र की विधियों के ज्ञान से प्रेम के साथ काम-कला की कुशलता का मेल हो जाता है और स्त्री-पुरुष तब दो नहीं रहते—उनमें अभेद हो जाता है—वे एक इकाई का रूप धारण कर लेते हैं और फिर उन्हें आपस की छोटी-से-छोटी क्रीड़ा में भी एक मधुर रस प्राप्त होने लगता है और सम्भोग की पूर्ण अवस्था (चरमसीमा) में उन्हें वह विलक्षण आनन्द प्राप्त होता है जिसे 'दो शरीर एक प्राण, दो देह एक इच्छा, दो तन एक मन' कहा गया है।"

कामवासना का जन्म मन में होता है। मन ही मस्तिष्क को प्रेरित करता है कि वह इस इच्छा की पूर्ति का उपाय करे। परन्तु अन्ततः इस इच्छा को अमल में लाना तो शरीर का ही काम है। जब तक स्त्री और पुरुष के अंग चेष्टा न करें, मांसपेशियां हरकत न करें, तब सम्भोग या मैथुन विचार-मात्र रहता है। मनुष्य के प्रत्येक अंग को, प्रत्येक मांसपेशी को तरह-तरह की चेष्टाएं करनी पड़ती हैं। शरीर का एक-एक अंग सम्भोग की चेष्टाओं में पूर्णतया भाग लेकर उचित हलचल करके ही इसे पूर्ण आनन्ददायक बनाता है। इसके लिए अंग-प्रत्यंग स्वस्थ होने चाहिए, उनमें शक्ति और सामर्थ्य होनी चाहिए, नस-नाड़ियों में सामर्थ्य, सहनशीलता, लचक और तेज़ी होनी चाहिए और अंग-प्रत्यंग की क्रियाओं में आपसी तालमेल होना चाहिए। तन्त्र-विद्या इसका मार्ग खोल देती है। तन्त्र-साधना द्वारा मस्तिष्क, सुषुम्ना और नाड़ी-संस्थान को इस प्रकार से नचाया जा सकता है कि जिससे शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों और संस्थानों के भिन्न-भिन्न भागों में ही नहीं, उनके छोटे-से-छोटे भाग में भी सजगता और स्फूर्ति पगाई जा सके और काम-सम्बन्धी अंशों को वश में करने की शक्ति प्राप्त की जा सके ताकि शीघ्र वीर्य-स्खलन की आशंका न रहे और चिरकाल तक मैथुन करने की सामर्थ्य प्राप्त की जा सके। यह एक विधि है, कला है, साधना है।

जब मनुष्य को मैथुन में पूर्ण आनन्द नहीं प्राप्त होता, तो उसके जीवन पर कटुता, निराशा तथा असफलता की भावना छा

जाती है। दुर्बलता, निराशा, रोग और असफलता से बचने के लिए सम्भोग की सम्पूर्णता एक अनिवार्य शर्त है। मानसिक खेद को, हर प्रकार के कष्ट-संकट-दुख को, निराशा और उदासी को दूर करने का सबसे उत्तम उपाय है कि स्त्री-पुरुष को सम्भोग का पूर्ण आनन्द प्राप्त हो। मनुष्य की कामवासना के साथ कई तरह की चीज़ें जुड़ी हुई हैं जैसे—मीठे-मीठे सपने, कल्पना की उड़ानें, ठीक साथी की खोज आदि। इसमें सम्भोग से पूर्व रति-क्रीड़ा अनिवार्य है। रति-क्रीड़ा न हो तो मनुष्य और पशु के सम्भोग में अन्तर ही क्या है। परन्तु तन्त्र-विद्या की यहीं तक सीमा नहीं है। उसमें तो कामवासना के उदय से सम्भोग की चरमसीमा तक को अत्यन्त आनन्ददायी विषय बना दिया गया है।

मानव-जाति की आदिम-अवस्था में: ज्यों ही युवक और युवती काम-क्रिया के लिए तैयार हो जाते थे, तभी यह समझ लिया जाता था कि वे मैथुन के लिए योग्य हो गए हैं और उनकी कामवासना की पूर्ति के मार्ग खुल गए हैं। तब उनपर किसी प्रकार का कोई बन्धन नहीं लगाया जाता था, कोई अंकुश नहीं होता था, कोई कुंठा नहीं होती थी। स्त्री और पुरुष जिस प्रकार चाहते थे, उन्मुक्त काम-क्रीड़ा करते थे। वे स्वतन्त्रतापूर्वक मैथुन-क्रिया का आनन्द प्राप्त करते थे। उस समय मैथुन-क्रिया अत्यन्त सहज और सरल थी। कामवासना को शरीर की सहज-स्वाभाविक भूख माना जाता था। उसमें कोई 'बुराई' छिपी है, ऐसा किसीके मन में विचार तक नहीं जाता था। बाद में कामवासना के तूफान को दबाने और रोकने के बारे में अनेक प्रकार के नियम बनने लगे। तन्त्र-मार्ग ने इन नियमों, बन्धनों तथा कुंठाओं से पुन: मुक्त किया।

तन्त्र-मार्ग कामवासना को 'हौआ' नहीं मानता। अन्य अंगों के प्रयोग की भांति वह काम-अंगों के प्रयोग को भी सहज, स्वाभाविक तथा स्वस्थ क्रिया मानता है। तन्त्र का मत है कि यदि स्त्री-पुरुष अपने कामांगों को सहज और स्वस्थ व्यवहार कर सकें तो उनका प्रत्येक कार्य तथा व्यवहार सहज-स्वाभाविक हो जाएगा। काम-अंग भी उन्हीं तत्त्वों से बने हैं, जिनसे शरीर के अन्य अंग। यदि अन्य

अंगों को छूना 'पाप' नहीं है तो काम-अंगों को छूना 'पाप' कैसे हो सकता है? योनि-पूजन तथा लिंग-पूजन द्वारा तन्त्र-विद्या ने मनुष्य-जाति में फैले घोर अज्ञान-अन्धकार को दूर किया।

मानव-शरीर एक यन्त्र की भांति है। जिस प्रकार यन्त्र के प्रत्येक पुर्ज़े का कार्य निश्चित होता है, उसी प्रकार मनुष्य शरीर के अंगों का कार्य भी पृथक्-पृथक् है। मस्तिष्क ही मनुष्य शरीर के सभी अगों को कार्य करने का निर्देश देता है। वही संवेदनाओं को अनुभव करता है। कानों से हम सुनते हैं, परन्तु सुनने की संवेदना की अनुभूति मस्तिष्क से होती है।

नाक से हम सूंघते हैं परन्तु सूंघने की अनुभूति मस्तिष्क को होती है। जिह्वा से हम रस (स्वाद) चखते हैं, परन्तु इस संवेदना की अनुभूति मस्तिष्क को होती है। नयनों से हम देखते हैं, परन्तु दृष्टि-संवेदना की अनुभूति मस्तिष्क को होती है। त्वचा (चमड़ी) से हम छूते हैं, परन्तु छूने (स्पर्श) की संवेदना का अनुभव मस्तिष्क ही करता है। इसी तरह कामवासना की संवेदना स्त्री में योनि द्वारा और पुरुष में लिंग द्वारा ग्रहण की जाती है, परन्तु इस संवेदना को मस्तिष्क तक पहुंचाया जा सकता है। कामवासना जागृत होते ही मनुष्य का ध्यान दूसरी इन्द्रियों से हटकर काम-अंगों पर केन्द्रित हो जाता है। कामवासना सम्बन्धी अंगों में तब रक्त का तीव्र वेग से संचार होने लगता है, जिससे पुरुष का लिंग सीधा तन जाता है और बड़ा तथा मोटा हो जाता है। स्त्री के उरोजों में एक प्रकार की फड़कन होने लगती है। चूचुकों में मीठी-मीठी खुजली होने लगती है और योनि से पानी जैसा सफेद और चिकना-सा तरल धीरे-धीरे रिसने लगता है। पूरा शरीर अन्य कार्यों को छोड़कर भिन्न-लिंग की ओर आकृष्ट हो जाता है। परन्तु इस कामोत्तेजना की संवेदना का भी ग्रहण मस्तिष्क में होता है। काम-इन्द्रियों से प्राप्त काम-क्रीड़ा तथा सम्भोग के आनन्द की संवेदना भी मस्तिष्क को होती है।

कहने का भाव यह है कि जिस प्रकार अन्य संवेदनाएं अपने आप उत्पन्न होती हैं और अंगों द्वारा उन्हें ग्रहण करने में कोई

बुराई नहीं, उसी प्रकार काम-संवेदना अर्थात् काम-क्रीड़ा, रतिरंग, सम्भोगेच्छा स्वतः ही मन में जागृत होती है और काम-अंगों द्वारा उस इच्छा की पूर्ति की जाती है, जो शरीर-शास्त्र की दृष्टि से अत्यन्त सहज तथा स्वाभाविक है और काम-इच्छा की पूर्ति न करना ही अस्वाभाविक है—कुदरत के खिलाफ है।

तन्त्र-विद्या से ज्ञान-चक्षु खुल जाते हैं। मनुष्य समाज में कामवासना, काम-क्रीड़ा और सम्भोग के बारे में इतना अज्ञान फैला हुआ है कि देख-सुनकर अचम्भा होता है।

कामवासना को पूर्ण करनेवाले अंगों और उनके कामों की पूरी जानकारी न होने के कारण कई बार स्त्री अच्छे-भले पुरुष को नपुंसक समझने लगती है और पुरुष अच्छी-भली स्त्री को 'ठण्डी' करार दे देता है।

.ारी स्वभाव

नारी स्वभाव से प्रेममयी है, उसकी प्रेम-तरंग अपनी ऊंचाई की सीमा तक जा पहुंचती है, परन्तु पुरुष उसके वासना-संकेतों को, इशारों को नहीं समझता। वह वेग से अपना काम निपटाकर अलग हो जाता है और नारी को छटपटाती हुई छोड़ देता है। ऐसे पुरुष की कामवासना सतही होती है। वह तुरन्त ही सन्तुष्ट हो जाता है। उसका प्रेम और रति सम्बन्ध रंग-हीन होता है। उसमें कल्पना की पुट नहीं होती। ऐसे संगम में कोई रस—कोई सौन्दर्य नहीं होता।

जब पुरुष अधखिले फूल या फूल-मालाएं लेकर प्रिया से प्रेम-याचना करता है, जब वह प्रिया को अपना मन खोलकर प्रकट करने का अवसर देता है, जब वह प्रतीक्षा करता है कि प्रिया प्रेम-क्रीड़ा के लिए उसका स्वागत करे, और प्रेम-क्रीड़ा में बराबर का भाग लेती हुई शामिल हो तभी संगम असली अर्थों में संगम बनता है। यदि स्त्री को अपना मन खोलकर पुरुष के सामने रखने का अवसर मिले तो वह अत्यन्त मधुर प्रेम-क्रीड़ा में पहल कर सकती है। इस प्रेम-क्रीड़ा में मग्न होकर अपनी चेष्टाओं द्वारा प्रकट कर सकती है कि उसकी कामवासना की लहर ऊंचाइयों पर है।

इसके विपरीत, यदि पुरुष कामान्ध है, स्वार्थी है तथा सम्भोग को अपने सुख तक ही सीमित समझता है, तो स्त्री चुप रहने को विवश हो जाती है। वह अपनी इच्छाओं को दबाने और कुचलने पर मजबूर हो जाती है । इस प्रकार के स्त्री-पुरुष संयोग का परिणाम यही हो सकता है कि स्त्री अपने आप से घृणा करने लगे और उसके बाद प्रियतम से भी घृणा करने लगे कि जिसने उसे इस प्रकार की असह्य स्थिति में डाल रखा है। जो पुरुष नाम तो प्रेम का लेते हैं, परन्तु प्रेम को अपनी काम-सन्तुष्टि तक ही सीमित रखते हैं, वे कई बार स्त्री के मन में सम्भोग के प्रति ही घृणा पैदा कर देते हैं। स्त्री को प्रसन्न करना—उसे सुखी करना और उसे आनन्द देना और उससे आनन्द प्राप्त करना कठिन काम है। इससे पुरुष को और स्त्री को भी प्रयत्न करना पड़ता है।

स्त्रियां पुरुषों जैसी स्वतन्त्रता के लिए ललचाती रहती हैं। वे पुरुषों पर अधिकार चलाने, शासन करने का प्रयत्न किया करती हैं। बहुत-सी स्त्रियां पुरुषों की तरह व्यवहार करके, पुरुषों की तरह (मर्दाना) वस्त्र पहनकर काम-क्रीड़ा और सम्भोग के समय पुरुष के समान आचरण करना चाहती हैं और विपरीत रति करके (पुरुष को नीचे लिटाकर और ऊपर होकर) मैथुन से प्रसन्न होती हैं। कुछ स्त्रियां दब्बू होती हैं । वे भावुक होती हैं और बात-बात में आंसू बहाने लग जाती हैं। उन्हें मनाने के लिए पुरुषों को खुशामद करनी पड़ती है। आश्वासन यानी दिलासा देकर उनकी भावनाओं को शान्त करना पड़ता है । कुछ ऐसी हैं जो नवयुवकों को प्रेम में फंसाकर बात-बात में उन्हें नीचा दिखाने का प्रयत्न किया करती हैं। ज्ञानेन्द्रियों के प्रयोग में स्त्रियां आगे हैं । पुरुषों की अपेक्षा देखने, सूंघने, चखने, सुनने, छूने की शक्ति अधिक होती है। जो स्त्री पुरुष से सराहना और प्रोत्साहन पाती है, वह काम-क्रीड़ा तथा सम्भोग से बहुत सुख तथा आनन्द प्राप्त करती है। जो पुरुष स्त्री की भावनाओं की उपेक्षा करके, संगम को अपने ही सुख तक सीमित रखते हैं, उनके मतलबीपन को देखकर स्त्रियां कई बार रोने लगती हैं। यदि खुलकर आंसू भी बहाएं तो भी उनका मन निराशा

से भर जाता है। ऐसे समय पुरुष को चाहिए कि स्त्री को सान्त्वना दे और उसके मन को सम्भाले।

एक विद्वान ने ठीक ही लिखा है, "पुरुष के अज्ञान के कारण तथा स्त्री का रति-सामर्थ्य का सही अन्दाज न होने के कारण अक्सर स्त्रियां मैथुन के प्रति उदासीन यहां तक कि सर्द रुख अख्तियार करती हैं। यह सही बात है कि जब तक पुरुष और स्त्री मिलन में सक्रिय रूप से समान भाग नहीं लेंगे, तब तक सम्भोग से प्राप्त होनेवाले आनन्द में कुछ कमी अवश्य रहेगी। यह कहना गलत है कि शारीरिक मिलन-कार्य में स्त्री निष्क्रिय है। सच बात तो यह है कि उसकी क्रिया दूसरे ढंग की है। मानसिक सम्मिलन हुए बिना शारीरिक मिलन मानव के लिए कुछ महत्त्व नहीं रखता। मानसिक मिलन पहली शर्त है और इस शर्त के पूरी हुए बिना शारीरिक मिलन शव के साथ मैथुन के बराबर है।···मैथुन में स्त्री तथा पुरुष दोनों का सम्पूर्ण रूप से सक्रिय सहयोग नहीं हुआ तो वह कुछ नहीं है। इसका परिणाम केवल यही नहीं होता कि मिलन एकांगी रह जाता है और सुखकर भी नहीं होता, बल्कि इसके कारण साथी में स्नायविक विकार होने का भी खतरा होता है। लगातार मैथुन-सम्बन्धी असन्तोष के कारण स्त्रियों में स्नायु सम्बन्धी विकार अक्सर देखने को मिलते हैं। लगभग सभी मामलों में, जिनमें स्त्रियां पूर्ण मैथुन-सुख को प्राप्त नहीं करतीं, ऐसे कारण होते हैं, जो दूर किए जा सकते हैं। बहुत-सी स्त्रियां पूर्ण मैथुन-सुख किसे कहते हैं, यह जान ही नहीं पातीं। इसका कारण पुरुष का, स्त्री का या दोनों का अज्ञान ही होता है। यदि दोनों में एक भी दूसरे का ख्याल न करके अपने आप को तृप्त करने का प्रयत्न करे तो हो सकता है कि प्रेम-सम्बन्ध ही टूट जाए। कामवासना की पूर्ति और इसमें पूर्ण आनन्द की प्राप्ति जीवन का एक प्रधान अंग है। जब तक स्त्री और पुरुष—दोनों समान रूप से शारीरिक मिलन में बराबर सक्रिय भाग न लें, तब तक पूर्ण आनन्द प्राप्त होने की आशा ही नहीं कही जा सकती। यह पूछा जा सकता है कि बराबर सक्रिय भाग लेने का क्या अर्थ है? इसका उत्तर यह है कि प्रथम प्रेम स्पर्श से

लेकर पूर्ण मैथुन तक सारी प्रक्रिया में पुरुष तथा स्त्री को बरावर हिस्सा लेना चाहिए ।"

एक अन्य विद्वान ने कहा है,— रति रग में स्त्री कभी भी उदासीन नहीं रहना चाहती। वह ऊपर से उदासीन दिखाई देती है। इस उदासीनता को दूर करने के लिए सही वातावरण, ठीक ढंग, कुशलता की आवश्यकता होती है । संगम के समय एक स्त्री इससे अधिक कुछ नहीं चाहती कि पुरुष उसे उदासीनता के गड्ढे से उबारकर उस ऊंची सतह पर पहुंचा दे जहां प्रेमक्रिया में आपस का हित और आनन्द विराजमान है।

"संगम में जो पुरुष सबसे बड़ी भूल करता है वह यह है कि वह बिल्कुल शारीरिक तरीके से चलता है और अपनी साथिन को मानसिक रूप से तैयार किए बिना अपनी कामवासना की प्यास को दूर करने में लग जाता है। ऐसी दशा में स्त्री इसके सिवा और क्या समझ सकती है कि पुरुष स्वार्थी है और यह सोचकर स्त्री को झुंझलाहट होती है। संगम की क्रिया एक क्रीड़ा है । इस क्रीड़ा के बिना मैथुन पशु की क्रिया जैसी क्रिया रह जाता है। पुरुष जल्दी तैयार हो जाता है, या यों कहिए कि हर समय तैयार रहता है। स्त्री को उत्तेजित होने में देर लगती है। काफी देर तक कामक्रीड़ा किए विना स्त्री की तृप्ति की आशा कम हो जाती है । पुरुष तो तैयार ही रहता है, जबकि स्त्री अक्सर तैयार नहीं हो पाती कि क्रिया समाप्त हो जाती है। स्त्री हवा में लटकी रह जाती है। वह जब तक तैयार होती है तब तक पुरुष का वीर्य स्खलित हो जाता है और करवट बदलकर लेट जाता है या उठकर चला जाता है। उस समय स्त्री के मन में कोई अच्छी भावना नहीं आ सकती। और जब बार-बार ऐसा होता है, तो यह स्त्री की स्थायी अतृप्ति का कारण बन जाता है। उधर पुरुष तो सो जाता है, किन्तु स्त्री शायद घंटों जागती रहती है। फिर यही हो सकता है कि वह या तो मोमबत्ती या उंगली योनि में डालकर उसे थका दे या फिर अतृप्ति के विष के घूंट पीकर पड़ी रहे। जब पुरुष बिना पूर्व तैयारी (कामक्रीडा) के स्त्री पर आक्रमण कर देता है तो वह समझती है कि

बलात्कार हुआ।

"स्त्री के सुख में कमी का कारण होता है, पुरुष में वीर्य का देर तक धारण करने की (रोक रखने की) शक्ति में कमी। कारण यह है कि स्त्री को तैयारी में कुछ अधिक समय लगता है। दोनों को ध्यान यह रखना चाहिए कि दोनों एक साथ स्खलित हों या कम से कम इतना तो होना ही चाहिए कि लिंग जब योनि में मौजूद हो तो उसी समय स्त्री सम्भोग-सुख की चरम सीमा (अन्तिम मंजिल) तक पहुंच जाए। जो पुरुष अपने को वश में रख सकते हैं—अपने पर नियन्त्रण रख सकते हैं कि स्त्री के लिए प्रतीक्षा करें, वे ही स्त्री को सम्भोग से पूरी तरह सन्तुष्ट कर सकते हैं। परन्तु कठिनाई यह है कि पुरुष प्रतीक्षा नहीं कर पाता। प्राय: स्त्रियों को यह शिकायत होती है कि उनका पुरुष जल्दी खल्लास हो जाता है। पुरुष समझता है कि उसकी जरूरत पूरी होने से स्त्री की भी जरूरत पूरी हो गई। इसका परिणाम यह होता है कि स्त्री के मन में उदासीनता उत्पन्न हो जाती है।"

एक विद्वान् ने हिसाब लगाया है कि सौ में से बारह पुरुष ऐसे होते हैं जो तुरन्त स्खलित हो जाते हैं। सोलह प्रतिशत ऐसे हैं, जो दो मिनट रुक सकते हैं। चालीस प्रतिशत पुरुष तीन मिनट के अन्दर स्खलित हो जाते हैं। तैंतालीस प्रतिशत पुरुष पांच से पन्द्रह मिनट के अन्दर स्खलित हो जाते हैं। केवल सत्रह प्रतिशत पुरुष पन्द्रह मिनट से अधिक अपने को वश में रख सकते हैं। शेष व्यक्ति, जो काम-सम्बन्धी सम्भोग-सुख से दूर हैं, वे तन्त्र-विद्या की सहायता से अपने जीवन में आनन्द ला सकते हैं।

एक विद्वान शीघ्र स्खलित होनेवाले पुरुषों की जांच-परख करके इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि इसके कई कारण होते हैं, जिनमें से मुख्य ये हैं—

१. घबराहट—जिन पुरुषों में आत्मविश्वास की कमी है और मन सन्तुलित नहीं है, वे स्तम्भन नहीं रख सकते अर्थात् वीर्य को शीघ्र स्खलित होने से नहीं रोक सकते। घबराहट कई तरह की हो सकती है, जैसे अपुंस्त्व (नामर्दी) की आशंका, व्यर्थ की जल्दी,

असफलता का भय, कोई आ जाए या देख न ले—ऐसी आशंका या स्त्री की अनिच्छा और सहानुभूतिपूर्ण रुख। यदि स्त्री तैयार हो, सहानुभूति दिखलाए, प्रीति प्रकट करती हुई सम्भोग में पूरी तरह सहयोग करे, तो पुरुष की घबराहट बहुत हद तक दूर हो सकती है।

२. भय—यह घबराहट का ही एक दूसरा रूप है। सम्भोग में असफलता का भय, गर्भ रह जाने का भय या और कोई भी किसी प्रकार का भय मन में हो, तो वीर्य जल्दी स्खलित हो जाता है। यदि स्त्री मधुर वचनों से, प्रीति से तथा अंगों के संकेतों से पुरुष की घबराहट दूर करे, तो वह पुरुष का भय दूर कर सकती है। इसके विपरीत यदि स्त्री व्यंग्य करे, असहयोग करे—तो पुरुष निश्चय ही जल्दी स्खलित हो जाएगा।

३. लिंग में पूरी उत्तेजना न होना—कुछ पुरुषों का लिंग पूरी तरह उत्तेजित नहीं होता। यदि कम उत्तेजित लिंग को योनि में घुसाने की कोशिश की जाए, तो अधिक सम्भावना यही है कि शीघ्र वीर्य स्खलित हो जाएगा। ऐसे पुरुषों की संख्या आश्चर्य-जनक रूप से अधिक है कि जिनका लिंग पूरी तरह उत्तेजित, उत्थित नहीं होता। कई बार इसका कारण होता है कि स्त्री की सहानुभूति तथा सहयोग की कमी। स्त्री जब सम्भोग के लिए अपनी ओर से कोई चेष्टा नहीं करती, कुछ रुचि नहीं दिखलाती, ज़रा भी सहानुभूति नहीं प्रकट करती प्रायः पुरुष का लिंग पूरी तरह उत्ते-जित नहीं होता। वह योनि में लिंग प्रवेश करते ही या पहले ही खलास हो जाता है। इस प्रकार के सम्भोग से स्त्री की पुरुष के प्रति तथा सम्भोग के प्रति उदासीनता और भी बढ़ जाती है। यदि स्त्री प्रेम-क्रीड़ा में भाग ले, होशियारी दिखलाए, सहानुभूति प्रकट करे, सहयोग करे, सक्रिय हो जाए—तो वह पुरुष की इस दुर्बलता को दूर कर सकती है। यदि स्त्री पुरुष के लिंग के साथ तरह-तरह से खेले तो कोई कारण नहीं है कि पुरुष में उसकी प्रतिक्रिया न हो और पुरुष का लिंग दण्ड के समान उत्थित प्रबल तथा कठोर न हो जाए।

एक विद्वान ने लिखा है, "यौन-मिलन का मुख्य आधार पुरुष का उत्थित लिंग ही है, क्योंकि यौन-मिलन इसके बिना किसी तरह भी सम्भव नहीं हो सकता। लिंग उत्थान कैसे होता है, यह जानने के लिए लिंग की बनावट और उत्तेजन की उत्पत्ति को समझना अनिवार्य है। लिंग एक ऐसा अंग है। जिसमें लचकदार एवं उत्थान-शील तन्तु भरे रहते हैं और साथ ही बेशुमार खून की बारीक नालियां (रक्त-शिराएं) भी होती हैं। पुरुष की कामवासना जागते ही उसके मन तथा शरीर में उत्तेजना की उत्पत्ति होती है। उत्तेजना पैदा होते ही रक्त-प्रवाह लिंग की ओर तेजी से बढ़ता है और खून की ये बारीक नालियां रक्त से भर जाती हैं। परिणाम यह होता है कि लिंग उठ खड़ा हो जाता है। लिंग का उत्थान और कठोरता शरीर में उत्पन्न होनेवाली यौन उत्तेजना के वेग पर निर्भर है···पुरुष मन में काम-क्रीड़ा और सम्भोग की इच्छा अनुभव करता है, तो मन की चाहत की यही भावना मस्तिष्क में पहुंचती है। तब मस्तिष्क से प्रेरणा मिलती है। सुषुम्ना में स्थित उत्तेजना-केन्द्र को—और यहां से एक समस्त शरीर को प्रभावित करती है। उत्तेजना का वेग बढ़ता है—बढ़ता ही जाता है—लिंग से स्थित रक्त की बारीक नालियों में रक्त अधिक मात्रा में प्रवाहित होता है और लिंग कठोर एवं उत्थित अवस्था में आ जाता है। रति-क्रिया में, योनि में लिंग का प्रवेश अनिवार्य है और यह तभी सम्भव है, जबकि लिंग उत्थित हो, कठोर हो।"

इससे स्पष्ट है कि स्त्री की प्रेम-क्रीड़ा ही ऐसे पुरुष के लिंग को उत्थित और कठोर बना सकती है जिसका लिंग पर्याप्त रूप में उत्थित और उत्तेजित नहीं होता। स्त्री अपने प्रेममय व्यवहार से, सहानुभूति से, सहयोग से, यौन संगम के लिए आह्वान से, पुरुष के लिंग को जोरदार तरीके से दण्ड के समान उत्थित तथा उत्तेजित कर सकती है।

४. योनि में चिकनाई की कमी—पुरुष के जल्दी खलास होने का यह भी एक कारण होता है। यों तो पुरुष जब छेड़छाड़ करता है, कामक्रीड़ा करता है, स्त्री के सारे शरीर को चुम्बन आदि द्वारा

उत्तेजित करता है, तब स्त्री की योनि से पानी-सा सफेद तरल पदार्थ रिसने लगता है, जो योनि को चिकनी और पुरुष के लिंग-प्रवेश के योग्य बना देता है। फिर भी कुछ स्त्रियों की योनि की श्लैष्मिक ग्रन्थियां स्निग्ध तरल को पूरी तरह स्रवित नहीं करतीं। ऐसी दशा में वैस्लीन, गरी का तेल, सरसों का तेल या अन्य कोई वनस्पति तेल योनि में लगाने के बाद ही लिंग को प्रविष्ट कराना चाहिए, वर्ना सूखी योनि की रगड़ से लिंग तुरन्त वीर्यपात करने को तैयार हो जाएगा।

५. जल्दबाजी—योनि में लिंग को प्रविष्ट कराने में जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए। पहले योनि में दो उंगलियां डालकर थोड़ी देर उनसे योनि की दीवारों को सहलाना चाहिए। उसके बाद लिंग का योनि में प्रवेश होना चाहिए। एक विद्वान् ने लिखा है—

"बहुत-से लोग तो यही समझते हैं कि कामना तथा अन्तिम कार्य के बीच जितना कम फासला हो उतना ही अच्छा है, यही उनकी सारी कला है। ऐसे निकम्मे तरीके से सौन्दर्य-भावना तथा प्रेम-सम्बन्धी धारणाओं को जो तृप्ति हासिल हो सकती है, वह नहीं हो पाती। मैथुन ऐसा होना चाहिए जिसमें समूचा व्यक्ति हरकत में आए, और यह स्पष्ट है कि समूचे व्यक्तित्व को हरकत में लाने के लिए धीरे-धीरे चलने की ज़रूरत है।···गुण की मात्रा तथा तृप्ति के परिणाम की दृष्टि से बेकार की जल्दी नहीं होनी चाहिए। बहुत से पुरुषों का तो यह तजुर्बा है कि प्रवेशक्रिया के तुरन्त बाद का जो समय होता है, उसी में वीर्य-पतन का सबसे अधिक खतरा रहता है, अतएव यह उचित है कि प्रवेशक्रिया समाप्त होने के बाद ही बजाए इसके कि धक्का देना शुरू हो जाए, दोनों को स्थिर होना चाहिए। पुरुष के लिए ऐसी अवस्था में यह अच्छा होगा कि वह मन को मैथुन से हटाकर किसी दूसरे विषय पर स्थापित करे। जिस समय पुरुष अनुभव करता है कि अब मामला खतरे से खाली है, तब वह धीरे-धीरे धक्का देना शुरू करे और स्थिर रहे···फिर जब पुरुष अनुभव करे कि अब वीर्य पतन का

खतरा है, तो वह फिर धक्का देना बन्द करे और फिर दोनों स्थिर रहें। इस बीच में उनको चाहिए कि प्रेम की सूक्ष्म लेन-देन जारी रखें जिससे पूर्ण मैथुन प्राप्त हो तो पारस्परिक तृप्ति की सजीवता कई गुनी हो जाए। पुरुष को ऐसा करने पर ज्ञात होगा कि हर बार अधिकतर नियन्त्रण हासिल होता है और वह धक्के का समय हर बार बढ़ा पाता है और उसकी चोट हर बार गहरी हो जाती है। थोड़ी देर बाद उसे चाहिए कि स्त्री से कहे कि वह भी मृदु धक्का देना शुरू करे। वह साथ ही स्त्री को यह भी बताता रहे कि वह कहां तक पहुंच चुका है, और पतन बिन्दू के पहले दोनों फिर स्थिर हो जाएं। इस प्रकार वे बार-बार करते हैं और उसकी स्थिरता का समय बढ़ता ही जाता है। क्रमशः स्त्री की प्रतिक्रियाएं जग जाती हैं और अब वही पुरुष को अपनी प्रगति के बारे में खबर देती रहती है। अन्त में वह कह निकलती है, "मैं समझती हूं कि मैं तैयार हूं।" उस समय दोनों सरपट चाल से चल निकलते हैं और दोनों ज़ोर के सामंजस्यपूर्ण धक्के में सलग्न हो जाते हैं। इस प्रकार की तरकीब से यह प्रक्रिया कहीं आध घंटा और एक घंटे तक स्थायी हो सकती है। बराबर धक्का देते हुए कोई भी पुरुष इतने दीर्घकाल तक, वीर्य को रोके रख सकता है, इसमें संदेह नहीं। अधिकांश स्त्रियां यह समझती हैं कि मैथुन में धक्का देने का कार्य संपूर्ण रूप से पुरुष का है। सिवा पूर्ण मैथुन के समय जब वह अनिवार्य हो जाता है। यह एक बहुत बड़ी गलती है। धक्के में हिस्सा लेकर न केवल वह पुरुष से जोरदार तरीके से उसका जवाब पाती है, बल्कि वह अपने पूर्ण मैथुन की प्राप्ति को कई गुना आसान कर देती है।"

धनी, मानी, सुडौल, सुन्दर और सुयोग्य पुरुष को पाकर भी स्त्री खुश नहीं रह सकती, अगर उसमें स्तम्भन न हो अर्थात् संभोग करते हुए वीर्य को काफी देर तक रोके रहने की ताकत न हो। सुखी जीवन उसीको कहा जा सकता है, जिसमे संपूर्ण संभोग के पूर्ण आनंद की प्राप्ति हो। मैथुन में पूर्ण सफलता उसीको मिलती है और ऐसे ही पुरुषों को स्त्रियां पसन्द भी करती हैं, जो उन्हें मैथुन में सन्तुष्ट कर सकें।

७

स्तम्भन तथा वाजीकरण

साधक क्या करे ?—साधारण पुरुष स्त्रियों को अपनी काम वासना की तृप्ति का साधन समझते हैं। तन्त्र-मार्ग का साधक ऐसा नहीं समझता। वह स्त्री और पुरुष के आनन्द को अलग-अलग नहीं मानता। वह कहता है कि जब तक दोनों का आनन्द 'एक' नहीं हो जाए—जब तक अद्वैत न हो जाए, तब तक वह संगम आदर्श नहीं कहा जा सकता। सामान्य स्वार्थी पुरुष इस बात का ध्यान नहीं रखता कि स्त्री की रुचि इस ओर कर ली अथवा नहीं। स्त्री यदि पुरुष की कामवासना को पूर्ण कर सके, तो वह स्त्री का अणुमात्र भी विचार नहीं करता। वह समझता है कि स्त्री को चाहिए तैयार रहे। परन्तु इस प्रकार का संगम न तो पुरुष को आनन्द प्रदान कर सकता है और न स्त्री को। पहले काम-क्रीड़ा और संभोग के लिए उत्तेजित करे। काम के आवेश में पुरुष का लिंग फूलकर साधारण अवस्था की अपेक्षा बहुत बड़ा हो जाता है, परन्तु यदि स्त्री के शरीर में और यौन-अंगों में काम-आवेश की वही दशा उत्पन्न नहीं होती, तो ऐसे अनिच्छित मैथुन से उसे बहुत कष्ट उठाना पड़ता है। इसके विपरीत, यदि स्त्री को पूर्णतया मैथुन के लिए उत्तेजित कर लिया जाए, तो उसकी योनि में से एक विशेष रस रिस-रिसकर उसे नरम और चिकनी बना देता है, जिससे योनि की दीवारें और मांसपेशियां तथा स्पंज जैसी ग्रन्थियां पुरुष के लिंग के प्रवेश और रगड़ सहन करने के लिए

तैयार हो जाती हैं। यदि यह धातु न रिसे तो लिग का प्रवेश कठिन होता है और उससे योनि को बहुत कष्ट होता है, क्योंकि स्त्री की इच्छा में पूरी तरह उत्तेजना न हो तो योनि की भीतरी नसें काम करने के लिए तैयार नहीं होतीं और धातु न रिसे तो उसे बहुत कष्ट होता है। जब पुरुष के लिंग की अधिक रगड़ पड़ती है तो योनि न केवल कष्ट का अनुभव करती है बल्कि दुर्बल हो जाती है। इसलिए मैथुन-क्रिया में सबसे उत्तम तथा श्रेष्ठ उपाय यही है कि पुरुष काफी देर तक कामवासना को उत्तेजित करने की नाना क्रीड़ाएं करें। पुरुष और स्त्री का संगम तन्त्र के अनुसार तभी ठीक है, जबकि दोनों काम-आवेश से एक ही समान उत्तेजित हों —दोनों मैथुन के लिए आतुर या बेचैन हो जाएं।

पुरुष को चाहिए कि स्त्री की काम-इच्छा को काफी देर तक उत्तेजित करे। स्तनों का तथा योनि का स्पर्श करे (जिसमें मसलना, छूना, दबाना, छेड़ना, चूमना आदि शामिल हैं)। स्तनों को छेड़ना हाथ की उंगली से, उंगलियों से, ओठों से, जीभ से हो सकता है। साधारण दशा में स्तनों के चूचुक (घुडयां) कोमल होते हैं, परन्तु जब स्त्री काम के आवेश (जोश) से उत्तेजित हो जाती है, तब चूचुक कठोर हो जाते हैं, क्योंकि उनमें तेजी से खून दौड़ने लगता है। इस कठोरता का अर्थ है कि स्त्री कामवासना के लिए तैयार होने लगती है। स्त्री की योनि-स्थान में एक मटर के दाने-सा उभार होता है जिसे स्त्री का लिंग माना जाता है। इसे भगनासा कहते हैं। स्त्री की यौन-इन्द्रियों में यह सबसे अधिक संवेदनशील भाग है। पुरुष के लिंग की तरह यह स्त्री का लिंग है। हालांकि इसका आकार पुरुष के लिंग की अपेक्षा बहुत छोटा होता है। जब पुरुष की उंगली या लिंग इससे छूता है तो भगनासा उत्तेजित हो जाती है। इस समय यह लिंग के समान उत्तेजित, बड़ी और कठोर हो जाती है। स्त्रियों में इसका आकार छोटा-बड़ा होता है। किसी में मटर के दाने के बराबर और किसी में इसका दसवां भाग मात्र। योनि के भीतरी होंठ जहां ऊपर की ओर मिलते हैं, वहां भगनासा को उंगली से टटोल कर देखा जा सकता है। इसे जब उत्तेजित किया जाता है तो इसमें बिजली-

सी दौड़ जाती है। जब पुरुष अपनी उंगली से स्त्री की भगनासा को छूता, छेड़ता, मलता या मसलता है अथवा उसपर अपना लिंग रगड़ता है, तो स्त्री की कामवासना बहुत उत्तेजित हो जाती है। तब योनि में से पतला-सा द्रव बहकर बाहर आने लगता है। कुछ पुरुष अधिक बली और स्वस्थ होते हैं। वे मनचाहे रूप में बहुत देर तक लगातार मैथुन कर सकते हैं। स्त्री को पूरी तरह सन्तुष्ट करने की शक्ति भी उनमें होती है। ऐसे पुरुषों को चाहिए कि स्त्री को उत्तेजित करने में और भी अधिक समय लगाएं। यह आवश्यक है। जो संभोग स्त्री को उत्तेजित किए बिना किया जाता है, उसे अपूर्ण संभोग कहते हैं और उससे स्त्री देर तक बेचैन रहती है। पूर्ण संभोग उसे ही कहेंगे जिसमें स्त्री तथा पुरुष समान रूप से सन्तुष्ट हो जाएं और एक साथ आनन्द प्राप्त करें। तन्त्र में संभोग का उद्देश्य कामवासना की सन्तुष्टि नहीं, बल्कि दिव्य, अलौकिक आनन्द की प्राप्ति है। यदि संभोग अपूर्ण रह जाए तो यह एक घोर अत्याचार है। पूर्ण संभोग की तैयारी उसे कहेंगे, जब दोनों के मन में मैथुन के लिए एक समान इच्छा और उत्तेजना पैदा हो चुकी हो। इसलिए पुरुष को चाहिए कि काम-क्रीड़ा की विविध क्रियाओं द्वारा स्त्री को मैथुन के लिए तैयार करे।

पूर्ण संभोग का अर्थ यही है कि ऊपर लिखी बातों के साथ-साथ उचित अवसर तथा उपयुक्त स्थान भी हो। जब प्राकृतिक रूप से ही स्त्री की कामवासना उत्तेजित हो, तो भी मैथुन से पूर्व की क्रीड़ाएं बहुत आवश्यक हैं। स्त्री और पुरुष दोनों ही पूरी तरह प्रसन्नचित्त होकर मैथुन-कार्य में लगने चाहिए। उस समय उन्हें सारी दुनिया की चिन्ता भुला देनी चाहिए। चिन्ता, कष्ट, क्लेश, अभाव आदि को मन में स्थान दिया जाए तो संगम आनन्ददायक कभी नहीं हो सकता। चिन्ता, भय, क्रोध आदि की लहर कई बार लिंग को शिथिल कर देती है। इसलिए चिन्ता, भय, क्रोध आदि निषेधात्मक भावों को मन में जरा भी स्थान नहीं देना चाहिए।

पुरुष की स्तम्भन-शक्ति

पुरुष की वीर्य को देर तक रोके रखने की शक्ति को स्तम्भन-शक्ति कहते हैं। इस शक्ति में एक गुप्त रहस्यमय आनन्द छिपा हुआ है जिसका शब्दों से वर्णन नहीं किया जा सकता। इस आनन्द के सामने धन, संपत्ति, सम्मान व पद तुच्छ हैं। स्तम्भन-शक्ति के बिना सारा आनन्द नष्ट हो जाता है। स्तम्भन-शक्ति प्राप्त करने के लिए तन्त्र में कहा गया है कि मन को वश में करना आवश्यक है। मन क्या है? यह जड़ शरीर और चेतन आत्मा के बीच में सम्बन्ध कायम करनेवाला माध्यम है। मन ही जगत् है, संचारी है। इसका काम है—संकल्प और विकल्प करना—दृढ़ निश्चय और संशय करना। मन जिस वस्तु का ध्यान करता है, उसीके आकार का हो जाता है। यह राग के साथ चलता है। किसी भी वस्तु या व्यक्ति में गुण और सुन्दरता देखकर मन को उसमें राग होता है। इसीसे मन विषयों में प्रवृत्त नहीं होता। यदि भूल से उनमें प्रवृत्त हो भी जाए, तो उनमें दोष या दुख देखकर फौरन लौट आता है। द्वेष वाली वस्तु में भी मन की प्रवृत्ति राग से होती है।

अब प्रश्न यह है कि मन को वश में कैसे किया जाए? महर्षि पतंजलि ने योगदर्शन में बताया है—

अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः।

[अर्थात् अभ्यास और वैराग्य से ही मन को वश में किया जा सकता है।]

तन्त्र में बताए गए नियमों का पालन करने से मन को वश में करने में बड़ी सहायता मिलती है। सवेरे बिस्तर से उठकर रात्रि को सोने के लिए जाने तक दिन-भर के कामों की ऐसी दिनचर्या बना लेनी चाहिए कि हर एक काम सहज स्वभाव से, बारी-बारी से होता जाए और किसी तरह की हड़बड़ी, घबराहट या चिन्ता न हो। प्रतिदिन एक निश्चित स्थान पर और निश्चित आसन पर बैठकर शक्ति ध्यान करना चाहिए। जो साधक आज दस मिनट बैठे, कल आध घंटा, परसों नागा—इस प्रकार के साधन से साधक

को सिद्धि नहीं मिलती। चाहे पांच मिनट प्रतिदिन बैठें, पर वह नियम टूटने न पाए। जब देर तक (कई महीने तक) नियम से ध्यान करने का अभ्यास हो जाए, तो प्रतिदिन दस मिनट का अभ्यास आरम्भ कर दें। फिर न नौ मिनट करें और न ग्यारह मिनट। ठीक दस मिनट तक ध्यान करें। फिर इसे पांच मिनट और बढाकर पन्द्रह मिनट कर दें। इस प्रकार ध्यान की साधना नियम से करें। स्थान, आसन, इष्ट और मन्त्र का जल्दी-जल्दी परिवर्तन नहीं करना चाहिए। इस तरह नियमपूर्वक ध्यान करने से मन स्थिर होता है।

संभोग के दौरान यदि मन को विषयरहित कर लिया जाए, अर्थात् कामवासना सम्बन्धी भावुकता मन से हटा दी जाए, तो व्यक्ति अपने को शीघ्र स्खलित होने से रोक सकता है। कई बार मन से हार माननी पड़ती है, परन्तु साहस नहीं छोड़ना चाहिए और इसे बार-बार वश में करने का प्रयत्न करना चाहिए। अभ्यास करनेवाला मनुष्य एक-न-एक दिन इसे अवश्य जीत लेता है। मन को वश में करने के अभ्यास में एक विचित्रता है। यदि दृढ़ता से लड़ा जाए तो लड़नेवाले का बल दिनों-दिन बढ़ता है और मन का बल क्रमशः घटने लगता है। इसलिए मन को वश में करने का अभ्यासी एक-न-एक दिन अवश्य विजयी होता है। मन जहां द्रवित होकर, स्रवित होने की प्रेरणा देने लगे, वहीं उसकी हां-में-हां न मिलाकर खूब सावधानी से विचार को दूर ले जाना चाहिए। मन कभी निकम्मा नहीं रह सकता। कुछ-न-कुछ काम इसको मिलता रहना चाहिए। तान्त्रिक गुरु साधक शिष्य को ऐसी विधि बतला देता है कि संभोग के दौरान जब स्खलित होने लगे, तो उससे पहले ही मन के आगे किसी और विचार को उपस्थित कर दे जिससे मन की भावुकता दूर हो जाए। यदि वीर्य स्खलित होने लगे तो युद्ध का ध्यान कीजिए, किसी अग्निकाण्ड का स्मरण कीजिए। एक तान्त्रिक गुरु का मत है कि उस समय यह कल्पना कीजिए कि एक बाघ अपने पंजे से आपकी पीठ का मांस नोच रहा है। मन को वश में करना पुस्तकीय ज्ञान से नहीं, अपितु अपने अभ्यास से ही हो सकता है।

पुंसत्व की शक्ति बढ़ाने और वीर्य को देर तक स्खलित होने से रोकने के लिए अर्थात् स्तम्भन-शक्ति की वृद्धि के लिए पुष्ट करनेवाला भोजन और बलदायक पदार्थ औषधियों की अपेक्षा अधिक उपयोगी होता है। पोषक आहार से अधिक पुष्टिदायक औषध कोई नहीं। लेकिन पौष्टिक तथा वीर्यवर्धक भोजन देर तक और लगातार सेवन करने से ही लाभ होता है, जबकि औषध से तुरन्त लाभ पहुंचता है। असल में मनुष्य को जितना पुष्टिकारक भोजन मिलता है, उतना ही उसका रज-वीर्य परिपक्व होता है। जैसे गाय, भैंस को विनौले खिलाए जाएं तो उसके दूध में अधिक मक्खन होगा। रक्त बढ़ाने वाले सभी आहार, रज-वीर्य को पुष्ट करते हैं और इससे स्तम्भन होता है तथा पौरुष (मर्दुमी ताकत) की वृद्धि होती है। आहार ही बल और शक्ति का आधार है। जिस आहार में पुष्टिकर तत्त्व कम होंगे, उसे शक्ति की दृष्टि से, स्तम्भन की दृष्टि से उपयोगी नहीं समझा जा सकता। परन्तु भोजन में मात्रा का सदा ध्यान रखा जाना चाहिए। अधिक खाना, (ठूंस-ठूंसकर खाना) खाने के तुरन्त बाद खाना, बार-बार खाना (चरते रहना) आदि हानिकारक होने के कारण निषिद्ध है।

तन्त्र साधक तथा साधिका को तंग तथा चुस्त कपड़े नहीं पहनने चाहिए। तंग कपड़े पहनने से स्तम्भन-शक्ति पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। कामवासना का ध्यान करते ही यौन-अंगों की उठान आरम्भ हो जाती है और तंग वस्त्र उस उठान को रोकते हैं। नन्हा-सा लिंग वासना जागृत होते ही धीरे-धीरे फलता और फूलता रहता है। अतएव उसके बढ़ने और फूलने-फलने के मार्ग में कोई बाधा नहीं आनी चाहिए। तंग और चुस्त कपड़े लिंग और योनि को जकड़ लेते हैं और उन्हें स्वतंत्रतापूर्वक बढ़ने और फैलने का अवसर नहीं देते। इसलिए साधक तथा साधिका को ध्यान रखना चाहिए कि जिस समय वे एक-दूसरे के निकट हों, उस समय तो अवश्य ही उनके वस्त्र खूब ढीले-ढाले और खुले हुए हों।

स्तम्भन और योनि-संकोचन आदि

उड्डीस तन्त्र में लिखा है—

उशीरं चन्दनं चैव मधुना सह संयुतम् ।
गलहस्तप्रयोगोऽयं सर्वनारी-प्रसाधनम् ॥

[खस (खसखास) और चन्दन को शहद में मिलाकर हाथ से गले पर लीप ले। इसके बाद संभोग करने में लगे, तो देर तक संभोग करता हुआ पुरुष सब प्रकार की स्त्रियों को वश में कर लेता है।]

चिताभस्म वचा कुष्ठं कुंकुम रोचनं समम् ।
चूर्णं स्त्री-शिरसि-क्षिप्तं वशीकरणमद्भुतम् ॥

[चिता की भस्म, वच, कुठ, कुंकुम और गोरोचन—इन्हें समान भाग लेकर, इस चूर्ण को यदि स्त्री के सिर पर छिड़क दिया जाए, तो पुरुष का इतनी देर तक वीर्य-स्तम्भन होगा कि स्त्री अद्भुत रूप से मोहित हो जाएगी।]

कृष्णोत्पलं मधुकरस्य च पक्षयुग्मम्
मूलं तथा तरगजं सितकाकजंघा ।
यस्याः शिरोगतमिदं विहितं विचूर्णं
दासी भवेज्झटिति सा तरुणी विचित्रम् ॥

[काला कमल, भौंरे के दोनों पंख, अगर की जड़ और सफेद काक-जंघा का चूर्ण—इन्हें बराबर मात्रा में मिलाकर यदि स्त्री के मस्तक पर लगाएं तो वह संभोग के लिए दासी हो जाए।]

सव्येन पाणिकमलेन रतावसाने
यो रेतसा निजभवेन विलासिनीनाम् ।
वामं विलिम्पति पदं सहसैव यस्याः
वश्यैव सा भवति नात्र विकल्पभावः ॥

[मैथुन कर लेने के पश्चात् जो पुरुष अपने बायें हाथ से अपना वीर्य स्त्री के बायें पैर के तलुवे में एकदम मल देता है, वह स्त्री जीवन-भर के लिए अवश्य ही उसके वश में हो जाती है।]

सिन्धूत्थमाक्षिककपोतमलांश्च पिष्ट्वा,
लिङ्गं विलिप्य तरुणीं रमते नवोढाम् ।
सोऽन्यं न याति पुरुषं मनसाऽपि नूनम्
दासी भवेदतिमनोहरदिव्यमूर्तिः ॥

[जिस तरुणी ने पहले कभी पुरुष से संभोग न किया हो अर्थात्

अक्षत-योनि हो, उसके साथ संभोग करने से पूर्व जो पुरुष—सेंधा नमक और कबूतर की बीठ को पीसकर अपने लिंग पर लेप करके तरुणी के साथ संभोग करता है, वह चाहे अत्यन्त मनोहर और दिव्य सौन्दर्यवाली क्यों न हो, मन से भी किसी अन्य पुरुष का ध्यान नहीं करती और उसी पुरुष के साथ संभोग में चरम आनन्द प्राप्त करती है।]

गोरोचना शिशिरदीधिति शम्भुवीर्यैः
काश्मीरचन्दनयुतैः कनकद्रवैश्च।
लिप्त्वा ध्वजं परिरमत्यबलां नरो याम्
तस्याः स एव हृदये मुकुटत्वमेति॥

[जो मनुष्य धतूरे के रस में गोरोचन, कुमुद, पारा, केसर और चन्दन खरल में रगडकर अपने लिंग पर लेप करे और फिर युवती से मैथुन करे तो वह चिरकाल तक संभोग करता रहता है और स्तम्भन-शक्ति के कारण उस युवती के हृदय में मुकुट के समान विराजमान रहता है।]

लिंग का स्थूलीकरण

उड्डीस तन्त्र में लिखा है—

लघुसूक्ष्मेन लिंगेन नैव तुष्यन्ति योषितः।
तस्मात् तत्प्रीतये वक्ष्ये स्थूलीकरणमुत्तमम्॥

[छोटे और पतले लिंग से स्त्रियां सन्तुष्ट नहीं होतीं, इसलिए उनको सन्तुष्ट करने के लिए पुरुष को चाहिए कि लिंग को मोटा और लंबा बनाए। उसका उत्तम उपाय बताया जा रहा है।]

कुष्ठस्य मातंगबलाबलानां वचाश्वगन्धागजपिप्पलीनाम्।
तुरंगशत्रोर्नवनीतयोगाल्लेपेन लिंगं मुसलत्वमेति॥

[कुठ, छोटी पीपल, दोनों खरैटी, बच, असगन्ध, गजपीपल तथा कनेर को भैंस के मक्खन में मिलाकर निरन्तर लिंग पर लेप करते रहने से लिंग मूसल के समान हो जाता है।]

सलोध्रकाश्मीर तुरंगगन्धा, मातंगगन्धा परिपाचितेन।
तैलेन वृद्धिखलु याति लिंगं, वरांगनालोकमनोहरं तत्॥

[लोध, केसर, असगंध, पीपल तथा शालपर्णी को पकाकर लिंग

पर लेप करने से लिंग इतना बढ़ जाता है कि जिससे श्रेष्ठतम स्त्रियों का मन मोहित हो जाता है।]

हयारिपत्नीनवनीतमध्ये, वचावलाभागरसामयैश्च ।
लेपेन लिंगं सहसैव पुंसां, लोहोपमं स्यादिति दृष्टमेतत् ।।

[भैंस के मक्खन में वच, खरैंटी और पारा रगड़कर यदि लिंग पर लेप किया जाए, तो लिंग शीघ्र ही लोहे के समान हो जाता है।]

भल्लातकास्थिजलशूकमथाब्जपत्र
सन्तर्विमर्द्य मतिमान् सह सैन्धवेन ।
एतद्विरुढबृहतीफलतोयपिष्टम्
आलेपनं तुरगवद्विमलीकृतेङ्गे ।।

[भिलावे की गुट्ठी, सेवार, कमल का पत्र—इन्हें जलाकर बड़ी कटेली के सहित पानी में इन सबको पीसकर लिंग पर लेप करने से पुरुष का लिंग घोड़े के लिंग के समान लम्बा और कठोर हो जाता है।]

वराहवसया लिंगं मधुना सह लेपयेत् ।
स्थूलं दृढं च दीर्घं च मासाल्लिंग प्रजायते ।।

[सूअर की चर्बी को शहद में मिलाकर यदि लगातार एक महीने तक लेप किया जाए तो लिंग मोटा, मजबूत और लम्बा हो जाता है।]

अश्वगन्धवारीकुष्ठं मांसी सिंही फलान्वितम् ।
चतुर्गुणेन दुग्धेन तिलतैलं विपाचयेत् ;
स्तनलिंग कर्णपाणिवर्धनं भक्षणादितः ।।

[असगन्ध, शतावर, कुंठ, जटामांसी और कुटेली के फल को चौगुने दूध तथा तिल के तेल में पकाकर दो माशे प्रतिदिन खाए और अंगों पर लेप करें तो स्तन बड़े तथा कठोर होते हैं, लिंग स्थूल, दीर्घ तथा लम्बा होता है, तथा कान और हाथ बड़े होते हैं।]

तद्वच्च मुसली साज्या लेपाल्लिगस्य दार्ढ्यकृत ।
पिप्पली लवणक्षीरसितालेपोऽपि दीर्घकृत् ।।

[जटामांसी, बहेड़ा, कुठ, असगन्ध और शतावर को तेल में पकाकर लिंग पर लेप करें तो लिंग अवश्य मोटा हो जाता है।]

सूतको ह्यश्वगन्धा च रजनी गज-पिप्पली।
सिता युक्ता जलै: पिष्ट्वा मासैकं लेपयेत्तदा॥
अद्भुतं वर्धयेल्लिगं योनिकर्णस्तनानि च॥

[पारा, असगन्ध, हल्दी, गजपीपल और मिश्री को जल में पीसकर एक महीने तक प्रतिदिन लेप करें, तो लिंग, योनि, कान तथा स्तन अद्भुत रीति से बढ़ते हैं।]

योनि-शोधन तथा संकोचन

रोचनं मत्स्यपित्तं च मयूरस्य शिखां तथा।
मधुसर्पि: समायुक्तं स्त्रीवरांगविलेपनम्।
निभृते मैथुने भावे पतिर्दासो भविष्यति।
रूपयौवनसम्पन्नां नान्यामिच्छेत्कदाचन॥

[घृत, शहद, गोरोचन, मछली का पित्ता, मोर की शिखा और भिलावा—इन्हें मिलाकर तनिक-सा भाग अपनी योनि में लेप करे और फिर पुरुष से संभोग करे, तो वह उस स्त्री का दास हो जाएगा और दूसरी स्त्री रूप तथा यौवनसम्पन्न भी हो तो उसकी इच्छा नहीं करेगा।]

कुलत्थं विल्वपत्रं च रोचनं च मन:शिला।
एतानि समभागानि स्थापयेत् ताम्रभाजने।
तैलेन भगमालिप्य भर्तारमनुगच्छति।
समाप्ते मैथुने भर्ता दासो भवति नान्यथा॥

[कुल्थ, बेल का पत्ता, गोरोचन और मन:शिला (मनसिल्) इन्हें समान भाग लेकर तांबे के बर्तन में रखकर सात दिन तक तेल में पकाएं। फिर इसको अपनी योनि के अन्दर लेप करें। इसके बाद यदि स्त्री पुरुष के साथ संभोग करे, तो मैथुन बहुत देर से समाप्त होगा और उसके समाप्त होने पर पुरुष सदा के लिए उसका दास हो ही जाएगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।]

प्रियंगु शतपुष्पं च कुंकुमं वंशरोचनम्।
अश्वमूत्रेण लेपं च पुरुषाणां वशंकरम्॥

जो स्त्री घोड़े के मूत्र में मालकंगनी, सौंफ, केसर तथा वंशलोचन (तवाशीर) मिलाकर योनि के अन्दर लेप करे, वह संभोग

को देर तक चलने वाला बनाकर पुरुषों को वश में कर लेती है।

निम्बकाष्ठस्य धूपेन धूपयित्वा भगं पुनः।
या नारी रमयेत् कान्तं तं च सा दासतां नयेत्॥

[जो स्त्री योनि को नीम की लकड़ी का धुआं देकर उसके बाद संभोग करती है, वह संभोग को देर तक आनन्ददायी बनाकर पुरुष को वश में कर लेती है।]

स्तनों के कठोर करने के उपाय

[एरंड का तेल, मछली का तेल और बेल (बिल्व) के पत्तों का रस एक में मिलाकर स्तनों पर मर्दन करने से स्तन नीचे नहीं ढलकते, कठोर हो जाते हैं।]

श्रीपर्णी-रस-कर्काभ्यां तैलं सिद्धं तिलोद्भवम्।
तत्तैल तिलकेनापि स्तनस्योपरि दापयेत्।
काठिन्यं वृद्धतां यातः पतितौ वोत्थितौ च तौ॥

[तिल के तेल में श्रीपर्णी (खम्भारी) के रस और कर्क (बिच्छू) को पकाकर स्तन पर लेप करने से स्तन कठोर और बड़े हो जाते हैं तथा लटके हुए स्तन ऊपर उठ जाते हैं।]

वृद्धायाः कन्यकायश्च त्वबलायाः पयोधरौ।
श्वेताब्द कुसुमं कृष्णाधेनोः पयसि सांस्थितम्।
पिष्ट्वा स्तनयुगे देयं भवेत् पीनपयोधरौ॥

[काली गौ के दूध में सफेद मोथा पीसकर स्तनों पर लेप करने से वृद्धा, तरुणी या कन्या के लटके हुए स्तन ऊपर उठ जाते हैं और मोटे हो जाते हैं।]

वचाश्वगन्धा-संयुक्तं चाश्वरीपत्रकं तथा।
गजपिप्पालिकायुक्तं सद्योऽमलजलेन च।
पेषयित्वा विधानेन लेपयेत् स्तनमण्डले।
नयते तु कदाचित् वै चाम्रतालफलं तथा॥

[बच, असगन्ध की जड़ और पत्र तथा गजपीपल को ताजा स्वच्छ जल में पीसकर स्तनों पर लेप करे तो शीघ्र ही दोनों कुच आम और ताड के फल के समान कठोर हो जाते हैं।]

गम्भारिपत्रनीरं च तत् समं तिल-तैलकम् ।
समानं जलभागं च दत्वा पाकं समाचरेत् ।
तैलशेषं परिज्ञाय वस्त्रेण शोधयेत् कुचौ।
दिवा प्रलेपनादेव लोहत्वं जायते चिरात् ।।

[गम्भारी के पत्तों का रस, उसके बराबर तिल का तेल और इन दोनों के बराबर पानी मिलाकर पकावे और जब पानी और रस जल जाए और केवल तेल शेष रह जाए, तो उसे वस्त्र से छान ले। इसे प्रतिदिन स्तनों पर मलने से स्तन सदा के लिए लोहे के समान कठोर हो जाते हैं।]

योनि-संस्कार

प्रक्षालयन् निम्बकषायतोयैर्निशाज्यकृष्णागुरुगुग्गुलूनाम् ।
धूपेन योनिं निशि धूपयित्वा नारी प्रमोदं विदधाति भर्तुः ।।

[नीम के कड़वे जल से योनि को धोकर रात्रि में नीम, हल्दी, घी, काला अगर तथा गुग्गुल का धुआं योनि को देवे। इसके अनन्तर जब स्त्री मैथुन करवाए तो पुरुष को बहुत अधिक आनन्द देती है।]

प्रक्षाल्य निम्बस्य भगः जलेन, तस्यैव वल्केन विलेपयेच्च ।
त्यजेयु रत्याश्चिरकालभूतं, गन्धं वरांगस्य न संशयोऽत्र ।।

[योनि को नीम के पत्तों के पानी (अर्क) से धोकर उसके बाद नीम के पत्तों की छाल का लेप बनाकर योनि के अन्दर लीप दें। इससे चिरकाल से योनि में से आनेवाली दुर्गन्ध दूर हो जाती है और योनि सच्चे अर्थों में प्रिय तथा अति सुन्दर अंग बन जाती है, इसमें सन्देह नहीं।]

निशाद्वयं पंकज-केशरं च, निष्पीड्य देवद्रुमतुल्यभागम् ।
अनेन लिप्तं मदनातपत्रं, प्रयाति संकोचमलं युवत्याः ।।

[दोनों हल्दी, कमल का केसर (पराग), देवदारु (दियार) की लकड़ी—इन तीनों का समान भाग पीसकर योनि के भीतर लेप करने से स्त्री की योनि संकुचित (तंग) और निर्मल हो जाती है।]

संधानकी-पुष्प-फल-त्रिकेन, शम्बत्वचा साररसं घृतेन ।
लिप्त्वा वरांगं मधुकेन तुल्यं, वृद्धाप्यपिकन्येव भवेत् परन्ध्री

[संघातकी (धाय) का फूल, त्रिफला (हरड़-बहेड़ा-आंवला), जामुन की छाल, गुद्दी और रस, घी और मुलहठी—इन्हें समान मिलाकर योनि के अन्दर लेप करने से वृद्धा स्त्री की भी योनि कुमारी कन्या के समान सुन्दर तथा संकुचित हो जाती है ।]

इन्दीवरव्याघ्रिवचोषणानां, पुरंगमारासनयामिनीनाम् ।
लेपश्च नार्यः स्मररन्ध्रसंस्थः संकोचयत्याशु हठेन रन्ध्रम् ।।

[नीला कमल, कटेली, बच, काली मिर्च, कनेर, असना (सनाय) और हल्दी का समान भाग मिलाकर स्त्री की योनि के अन्दर लेप करने से योनि तुरन्त सिकुड़ जाती है.।]

या शक्रगोपं स्वयमेव पिष्ट्वा, विलिम्पति स्त्रीवरांगदेशम् ।
आहत्यदेशं कठिनं च गाढं भवेत् न चात्रास्ति विचारचर्चा ।।

[बीरबहूटी को पीसकर जो स्त्री योनि पर लेप करती है, उसकी योनि कठोर और गुदगुदी हो जाती है ।]

स्त्रियों को स्खलित करने की औषधियां

यद्यप्यष्टगुणाधिको निगदितः कामांगनानां सदा ।
नो याति द्रवतां तथापि झटिति स्त्रीकामिनां संगमे ।
तस्माद्भेषजसंप्रयोगविधिना संक्षेपतो द्रावणम् ।
किंचित् प्रलवयामि नीरजदृशां प्रीत्या परं कामिनाम् ।।

[पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में आठ गुना कामवासना कही गई है। फिर भी पुरुषों के द्वारा संभोग किए जाने पर स्त्रियां शीघ्र स्खलित नहीं होतीं। इसलिए संक्षेप में कामिनी और कामियों की परस्पर प्रीति के लिए स्त्रियों को स्खलित करने की औषधियों का वर्णन करता हूं।]

सिन्दूर चिंचाफलमाक्षिकानि तुल्यानि यस्या मदनातपत्रे ।
प्रलिप्य तस्याः पुरुषप्रसंगात् प्रागेव वीर्यच्युतिमातनोति ।।

[जिस स्त्री की योनि में सिन्दूर, इमली का बीज और शहद इनके समान भाग का लेप किया जाए और उस योनि में लिंग का प्रवेश कराया जाए और तब वे दोनों संभोग करें, तो वह स्त्री

पुरुष से भी पहले संभोग की चरम सीमा पर पहुंच जाती है। अर्थात् पुरुष इतनी देर तक संभोग करता रहता है कि स्त्री खलास हो जाए तो हो जाए, परन्तु पुरुष खलास होने में नहीं आता।]

व्योषं रजः क्षौद्रसमन्वितं वा क्षिप्तं यदि स्यात्स्मरयन्त्र गेहे।
द्रवं भजेत् सा सहसैव नारी, दृष्टः सदायं किल योगराजः ॥

[मधु (शहद) में त्रिफला चूर्ण मिलाकर स्त्री की योनि के अन्दर पुरुष अपनी उंगलियों से अच्छी तरह मल दे। उसके बाद मैथुन करे तो स्त्री पुरुष के साथ ही स्खलित हो जाएगी। यह योगराज (ओषधियों का राजा) सदा सफल होता देखा गया है।]

पिप्पली चन्दनं चैव, बृहती पक्वतिन्तिडी।
एषां लिंगे प्रलेपेन द्रवेन्नारी न संशय ॥

[पीपल (पिप्पली-मघा), चन्दन, कटेली और पक्की इमली—इनका लेप बनाकर लिंग पर लेप कर दे। इसके बाद संभोग करे तो स्त्री स्खलित हो जाती है, इसमें सन्देह नहीं।]

अगस्त्य पत्रद्रवसंयुतेन मध्वाज्यसम्मिश्रितटंकणेन।
लिप्त्वा ध्वजं यो रमतेंऽगनानां स शुक्रमाकर्षति शीघ्रमेव ॥

[जो अगस्त्य के पत्तों के रस में घी, शहद और सुहागा मिलाकर अपने लिंग पर इसका लेप कर ले और फिर स्त्री से संभोग करे तो वह स्त्री को आकर्षित, मुग्ध करके उसे शीघ्र ही स्खलित कर लेता है।]

सलोध्रधत्तूरकपिप्पलीनां क्षुद्रोपणक्षौद्र विमिश्रतानाम्।
लेपेन लिंगस्य करोति रेतश्च्युतिं विपक्षप्रमदाजनस्य ॥

[लोध, धतूरा, पिप्पली, कटेली और पिपलामूल के चूर्ण को शहद में मिलाकर लिंग पर लेप करने के बाद जो पुरुष स्त्री के साथ मैथुन करता है, वह स्त्री को अपने साथ ही स्खलित करने में सफल होता है।]

तुरगसलिलमध्ये भावितं क्षेत्रभाषम्,
मरिचमधुकतुल्यां पिप्पलीं पेषयित्वा।
परिरमति विलिप्य स्वीयलिंगं नरो यः,

प्रभवति वनितानां काककल्लोलसानः ॥

[असगन्ध के काढ़े में उड़द (माष) तथा मुलट्ठी बराबर-बराबर भाग पीसकर अपने लिंग पर लेप करें और फिर अनेक स्त्रियों के साथ मैथुन करके भी उन्हें स्खलित करेगा।]

बिल्वपुष्पं सकर्पूरं मुण्डीपुष्पं च पेषितम्।
लिंग-लेपेन रामाणां द्रावो भवति संगमे ॥

[बेल (बिल्व) के फूल और मुण्डी के फूल तथा कर्पूर (मुश्क काफूर) बराबर-बराबर मात्रा में लेकर पीस लें और लिंग पर उसका लेप करके मैथुन करें तो संभोग में स्त्रियों को हराकर स्खलित कर सकता है।]

वृहतीफलमूलानि पिप्पलोमरिचानि च।
मधुरोचनया सार्द्धं लिंगलेपे द्रवान्विताः ॥

[कटेली का फल और जड़, पीपल, काली मिर्च तथा गोरोचन—इन्हें पीसकर सभी को मिलाकर लिंग पर लेप करके स्त्रियों से समागम करें, तो वे शीघ्र स्खलित हो जाती हैं।]

मरिचकनकबीजैः पिप्पली लोधचूर्णैः।
विमलमधुविमिश्रैर्मानवो लिप्तलिंगः।
स्मरति रति-विलासे कष्ट साध्यां च नारीम्,
समुचितरतिरागां सचिदध्यादवश्यम् ॥

[काली मिर्च, धतूरे का बीज, पिप्पली और लोध को पीसकर शहद में अच्छी तरह मिला लें। फिर इसका लिंग पर लेप करें। इससे जो स्त्री जबर्दस्त कामिनी हो, अत्यन्त कठोर तथा देर तक मैथुन करने में भी न स्खलित होती हो, वह भी स्खलित हो जाएगी।]

सर्वेषां द्रवयोगानां मन्त्रराजं मयोदितम्।
जपेदष्टोत्तरशतम् तंत्रयोगस्य सिद्धये ॥

[सब प्रकार के स्त्री को स्खलित करने के उपायों मे मेरा बताया एक मन्त्र-राज (श्रेष्ठ मन्त्र) भी है। संभोग-योग अर्थात् संगम को सफल बनाने के लिए उस मंत्र को एक सौ आठ बार जपना चाहिए।] वह मंत्र इस प्रकार है—

ॐ नमो भगवते रुद्राय उड्डामरेश्वराय स्त्रीणां मदं द्रावय द्रावय स्वाहा ठः ठः।

तन्त्र-साधना में त्याज्य नवयुवक साथी

१. जिसका कुल क्रिया से हीन (बेकार) हो।
२. जिसमें सज्जनता न हो।
३. जो अध्ययन से विमुख हो।
४. जिसके शरीर पर बड़े-बड़े लोम हों।
५. जिसे खूनी या वादी बवासीर हो।
६. जिसे राजयक्ष्मा (क्षय रोग) हो।
७. जिसे दमा, खांसी आदि श्वास रोग हों।
८. जिसका हाज़मा बिगड़ा रहता हो, दस्त लगे हों।
९. मिरगी, पागलपन, सनकीपन आदि दोष हों।
१०. श्वेत कुष्ठ, दलित कुष्ठ आदि रोग हों।
११. जो वचन का पक्का न हो, झूठा हो और अपनी आदतें बदलने को तैयार न हो।
१२. पीले अंगों, पीले शरीर, पीले चेहरे वाला हो।
१३. जो बकवादी हो और जिसकी बातों में सार न हो।
१४. जिसकी निन्दा फैली हुई हो।
१५. जो धन उपार्जन करने में फिसड्डी हो या आर्थिक रूप में पराधीन हो।
१६. जो पशु जैसी प्रवृत्ति वाला हो, जिसे कीर्ति प्रिय न हो।
१७. जो हिंसा, चोरी आदि में दण्ड प्राप्त कर चुका हो।
१८. जिसके मन में संसारिक जीवन के प्रति अनुराग न हो।
१९. जो साहित्य, संगीत, चित्रमूर्ति आदि कलाओं से द्वेष करता हो—इनकी रुचि न रखता हो।
२०. जो बुरे व्यवसाय (चोरी, डाका, भ्रष्टाचार, रिश्वत) आदि अपवित्र कार्य करता हो।
२१. जिसके संगी-साथी बदनाम हों।
२२. जिसके परिवार के लोग भारी जुर्म में दंडित हों।

उपर्युक्त दोषों वाले व्यक्तियों को अपना तान्त्रिक संभोग-साधना का साथी नहीं बनाना चाहिए।

तन्त्र-साधना में त्याज्य नवयुवती साथिन

नीचे लिखी कन्याओं का तन्त्र में निषेध है—

१. जो अधिक सोनेवाली (सुस्त, दरिद्री) हो।
२. जो अधिक रोने वाली या जल्दी रोनेवाली हो।
३. जिसका गन्दा या भद्दा-सा नाम हो।
४. जिसे छिपाकर रखा गया हो।
५. जिसका किसी परिचित से संबंध हो या रह चुका हो।
६. जिसकी मोटी नाक हो।
७. जो पुरुष (मर्द) जैसी रूप-आकार की हों।
८. जो दोनों पैर चौड़े करके (या टांगें फैलाकर) चलती हो।
९. जिसके कन्धे झुके हुए हों।
१०. जिसके उरोज (स्तन) पूरी तरह उभरे हुए न हों।
११. जिसका मस्तक बहुत अधिक बड़ा (लंबा-चौड़ा) हों।
१२. जिसके स्तन (ढिलके) लटके हुए हों।
१३. जिसका कोई भाई न हो, और उसने माता-पिता का अग्नि-संस्कार (दाह-संस्कार) किया हो।
१४. जो गर्भवती हो।
१५. जो गूंगी हो।
१६. जो खुसरा हो (न स्तन उभरे हों, न योनि विकसित हो)।
१७. चिट्टे (फिट्टे हुए) रंगवाली हो।
१८. जो सफेद दागों से युक्त हो।
१९. जो बहुत ही अधिक स्थूल (मोटी) हो।
२०. जो भयंकर आकार वाली हो।
२१. जिसके शरीर और मुंह से दुर्गन्ध आती हो।
२२. जिसका सिर भद्दा, बेडौल या बालों से रहित (गूंजा) हो।
२३. जो व्यभिचारिणी के रूप में बदनाम हो।
२४. जो अपने से बहुत छोटी आयु की हो।
२५. जिसके हाथ-पैर से पसीना बहता रहता हो।

८

कुण्डलिनी सिद्धि

कुण्डलिनी को जगाना : योगासन, प्राणायाम, मुद्रा आदि के अभ्यास केवल कुण्डलिनी को जगाने के लिए हैं। तन्त्र-मार्ग का विश्वास है कि शरीर के अन्दर निचले भाग में एक सोई हुई नाड़ी है। जब तक वह सुप्त रहती है, तब तक मनुष्य अविद्या और दुःख के गढ़े में गिरा रहता है। जब कुण्डलिनी जागृत होती है, तो वह धीरे-धीरे ऊपर चढ़ती है और सहस्रार (मस्तक) में जाकर शिव के साथ मिल जाती है। इसे ही योग-समाधि कहते हैं।

पुरुषों में कुण्डलिनी लिंग और गुदा के बीच के स्थान पर और स्त्रियों में योनि और गुदा के मध्य रहती है। यह नाड़ी साढ़े तीन चक्कर लगाकर सांप की तरह कुण्डली मारे रहती है। जब यह साधना द्वारा जागृत होती है तो सीधी हो जाती है और सुषुम्ना के मार्ग से ऊपर चढ़ती है।

सुषुम्ना को मेरु रज्जु भी कहते हैं। इसका ऊपर वाला सिरा जो मोटा होता है, लघु मस्तिष्क के नीचे रहता है। श्वास-उच्छवास्, रक्त-परिभ्रमण, हृदय-गति, पाचन-क्रिया (भोजन को पचाने का काम) आदि के केन्द्र यहीं रहते हैं। सुषुम्ना रीढ़ की हड्डी के बीच में रहती है।

कुण्डलिनी वास्तव में सूक्ष्म नाड़ियों का समूह है। इन्हीं नाड़ियों के भिन्न-भिन्न स्थानों पर कुछ ग्रन्थियां भी हैं, जिनसे स्राव निकलता रहता है। योगी और तन्त्र-मार्गी उन्हें चक्रस्थान कहते हैं। इन्हें बहुत महत्त्वपूर्ण माना जाता है। चक्रस्थान के नाड़ी-

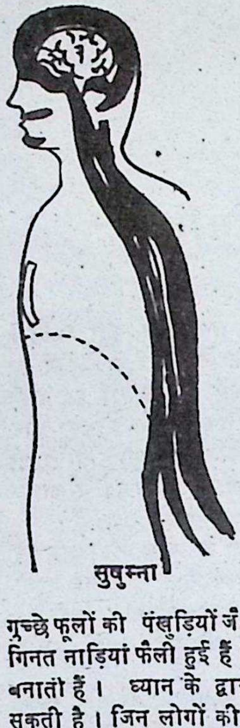

सुषुम्ना

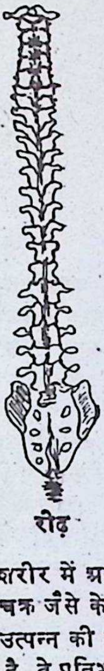

रीढ़

गुच्छे फूलों की पंखुड़ियों जैसे दिखाई देते हैं। सारे शरीर में अनगिनत नाड़ियां फैली हुई हैं जो रीढ़ के पास आकर चक्र जैसे केन्द्र बनाती हैं। ध्यान के द्वारा इनमें अधिक फड़कन उत्पन्न की जा सकती है। जिन लोगों की कुण्डलिनी जागृत होती है, वे प्रतिभाशाली हैं। योगाभ्यास करने से या ध्यान की एकाग्रता से ये चक्र जागते हैं। चक्रों का वर्णन सामने के पृष्ठ पर दी गई तालिका में दिखाया गया है।

जहां-जहां चक्र हैं, वहां-वहां शरीर को अणु-अणु को चलानेवाली—उन्हें मस्तिष्क से आज्ञा या सूचना देने और अंग से प्राप्त सूचना मस्तिष्क (दिमाग) तक पहुंचाने वाली नाड़ियों के गुच्छे हैं। रज-वीर्य को बनानेवाले, मेधा (विशेष बुद्धि), स्मरणशक्ति आदि शक्तियां इन चक्रों में ही स्थित हैं। इनको जगाने से

सहस्त्रार	आज्ञा-चक्र	विशुद्ध चक्र	अनाहत चक्र	मणिपुर चक्र	स्वाधिष्ठान चक्र	मूलाधार चक्र		चक्रों के नाम
मस्तक	भौंहों के बीच	कण्ठ	हृदय	नाभि	पेड़ू	आधार	१	स्थान
१०००	२	१६	१२	१०.	६	४	२	दल
रंगहीन-प्रकाश	श्वेत	धूम्र	अरुण	नील	सिन्दूर	लाल	३	वर्ण
सत्यलोक	तप:लोक	जन:लोक	महर्लोक	स्वर्लोक	भुवर्लोक:	भू:लोक	४	लोक
विसर्ग	ह, क्ष	अससे अ:	के से ६	३ से फ	व से ल	व से ल	५	अक्षर
शून्यतत्त्व	महत्त्व	आकाश	वायु	अग्नि	जल	पृथ्वी	६	तत्त्व
बिन्दु	नाद	हस्ती	मृब	मेष	मकर	हाथी	७	वाहन
तुरीय-चेतना	स्वप्न चेतना	शब्द	स्पर्श	रूप	रस	गंध	८	गुण
परब्रह्म	नारीश्वर-लिंग	सदाशिव	ईशान-रुद्र	वृद्ध-	ब्रह्मा	गणेश	९	देव
महाशक्ति	हाकिनी	शकिनी	काव्यिनी	लाकिनी	शाकिनी	डाकिनी	१०	शक्ति
प्रकाशपुंज	लिंगाकार	वृत्ताकार	षटकोण	त्रिकोण	चंद्राकार	चतु-	११	यन्त्र
चित्त	बुद्धि	वर्ण	त्वचा	चक्षु	रसना	लिंग	गुदा	ज्ञानेन्द्रिय

शक्तियां बहुत बढ़ जाती हैं। योगी प्रत्याहार, धारणा और ध्यान की सिद्धि इन्हें ही जगाकर प्राप्त करते हैं। कुण्डलिनी को जगा सकने वाला मनुष्य जहां चाहे जा सकता है, जो चाहे कर सकता है। वह सब प्रकार के विघ्न-बाधा से मुक्त हो जाता है।

तान्त्रिक गुरु इन चक्रों को जगाने पर बहुत जोर देते हैं। संभोग की अपरा शक्ति भी इन चक्रों को जगाने से विलक्षण रूप में प्रकट होती है।

अष्ट सिद्धि (आठ प्रकार की सिद्धियां)

सिद्धियां आठ प्रकार की हैं—अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, ईशित्व, वशित्व, प्राप्ति तथा प्राकाम्य।

१. अणिमा—इस सिद्धि को प्राप्त करनेवाला मनुष्य जितना चाहे शरीर को हल्का कर सकता है। वह अपने शरीर को इतना हल्का बना लेता है कि पहाड़ की चढ़ाई-उतराई से कभी नहीं थकता। चाहे जितना चल सकता है। इस सिद्धि की ऊंचाई पर पहुंचकर, तन्त्र-मार्गियों का विश्वास है कि मनुष्य आकाश में भी विचरण कर सकता है।

२. महिमा—इस सिद्धि से मनुष्य अपने शरीर को (उदाहरणत: कद को, छाती को, बांहों को, जांघों को) बढ़ा सकता है। सूखा-सड़ा शरीर किस काम का? उसके व्यक्तित्व का विकास होता है। उसकी कीर्ति बढ़ती है। प्रभाव भी बढ़ता है।

३. लघिमा—इस सिद्धि द्वारा मनुष्य अपना मोटापा कम कर सकता है। श्री प्रमदत्त ब्रह्मचारी ने लिखा है—

"अति स्थूल स्त्री-पुरुषों का जीवन-क्रम घट जाता है अर्थात् वे हीनायु होते हैं। वे कोई काम झपाटे से नहीं कर सकते; क्योंकि उनमें वेग की—फुर्ती की कमी हो जाती है। ऐसे स्त्री-पुरुष सन्तानोत्पादन में भी असमर्थ हो जाते हैं। थुलथुला—मोटा शरीर होने पर उसमें बल की कमी आ जाती है। उन्हें पसीना अधिक आता है और उसमें भेद का अंश कम होने के कारण उनके पसीने में दुर्गन्ध रहती है। खाये हुए आहार से मेद अधिक बनता है, अतएव धातु क्षीण रहते हैं। अतएव, शारीरिक शक्ति की पूर्ति की उसे

आवश्यकता प्रतीत होती है और अधिक भूख और अधिक प्यास लगती है। अति स्थूल मनुष्य को निद्रा भी अधिक आती है। उसकी आवाज भारी हो जाती है। उसके मुख से निकले हुए शब्द स्पष्ट उच्चारण युक्त नहीं होते। उसमें भूख और अग्नि की प्रबलता के कारण और भी दोष बढ़ते हैं। वायु-विकार बढ़ जाते हैं। ये बढ़े हुए दोष उसके जीवन-क्रम का क्रमशः ह्रास करते रहते हैं। मेद-वृद्धि के कारण वायु कुपित होता है और ऐसे रोगों को उत्पन्न करता है, जिनका दूर होना कठिन होता है। अति स्थूल लोगों को प्रमेह और मधुमेह सताता रहता है। फोड़े-फुंसी और भगंदर का विकास ऐसे लोगों को अधिक होता है। कैन्सर जैसे विकार का खतरा होता है। शरीर थुलथुला, ढीला और बेडौल होता है। ऐसों में उत्साह की कमी होती है और उन्हें जीवन भार-रूप होने लगता है।"

योगाचार्य ए० सी० चौधरी का मत है कि मोटापा संभोग-संबंधों में बाधक है। वे कहते हैं कि—"स्थूलकाय नर-नारियों को काम-सम्बन्धों अर्थात् रति-क्रीड़ा और संभोग में भी मोटापे के कारण बाधाएं उपस्थित होती हैं। प्रिया का बार-बार चुम्बन करें तो दम फूल जाता है। आलिंगन करें तो एक-दूसरे को बांहों में नहीं बांध सकते। मिलकर नृत्य का आनन्द वे नहीं ले सकते। प्रजनन-अंगों से अंग मिलाने या प्रवेश कराने में तोंद बाधक बनकर आ खड़ी होती है। फलतः जीवन का पूर्ण आनन्द उन्हें नहीं प्राप्त होता। रति-क्रीड़ा एवं मैथुन का पूर्ण आनन्द तो उन्हें तभी प्राप्त हो सकता है जबकि उनकी तोंद घट जाए। यों भी स्थूल शरीर में आकर्षण नहीं होता। स्त्री तो सहज स्वभाव स्थूल पुरुष को सहन भी कर लेती है, परन्तु पुरुष काम-सम्बन्धी आनन्द के अन्य मार्ग खोजने लगता है। शरीर बहुत मोटा होने पर स्त्रियों में बंध्यापन आ जाता है। यदि स्त्री गर्भवती हो जाए तो मोटापे के कारण उसे काफी दुख उठाना पड़ता है। काम-शास्त्रियों ने मोटे लोगों के लिए कई प्रकार के संभोग-सम्बन्धी आसन भी बतलाए हैं, प्रायः उनसे कोई विशेष लाभ नहीं होता।"

उपरिलिखित अवतरणों से पता चलता है कि लघिमा का

कितना अधिक महत्त्व है।

४. गरिमा—इसका अर्थ है गौरवशाली व्यक्तित्व। इस सिद्धि को प्राप्त करके मनुष्य इतना भारी हो जाता है, अर्थात् प्रभावशाली हो जाता है कि कोई उसके पद या स्थान से उसे तिलमात्र हटा नहीं सकता। इसी सिद्धि के द्वारा वीर अंगद ने रावण की सभा में चुनौती देते हुए कहा था कि मेरा पांव कोई हटा नहीं सकता। गरिमा से व्यक्तित्व तेजस्वी बनता है और दूसरे लोग आज्ञा मानने और पीछे चलने में शान समझते हैं।

५. ईशित्व—इसका अर्थ है कि इतना मोहक रूप धारग कर लेना कि जिसे देखते ही मनुष्य मोहित हो जाएं। राम ने जब जनकपुरी में प्रवेश किया था तब ऐसी मोहिनी डाल दी कि जिस रूप को देखते ही सारा नगर मोहित हो गया था और सीता ने मन में संकल्प कर लिया था कि इन्हींके गले में वरमाला डालूंगी।

जिन निज रूप मोहिनी डारी।
कीन्हे सुबस सकल नर-नारी॥

जिसे ईशित्व प्राप्त हो जाता है उसे देखते-देखते लोगों के नयन नहीं थकते। उनसे अलग होने को जी नहीं चाहता। बालक-बालिका, युवक-युवतियां, बूढ़े नर-नारी सब पीछे-पीछे फिरने लगते हैं। भावार्थ यह है कि जिस सिद्धि द्वारा मनुष्य संसार को मोहित कर ले, उसे ईशित्व कहते हैं। ईशित्व का एक रूप और भी है कि हाथ नीचे (मांगने के लिए) न हों बल्कि ऊंचे (दान के लिए) उठें।

६. वशित्व—इस सिद्धि के दो रूप हैं—(१) अपने मन को और इन्द्रियों को वश में करना, (२) वशीकरण अर्थात् वह सिद्धि जिससे स्त्री-पुरुष तथा देवी-देवता भी वश में हो जाएं। इस सिद्धि के कारण ही गोपियां कृष्ण के पीछे-पीछे फिरती थीं। यहां तक कि अनेक गोपिकाएं ऐसी वशीभूत हो गई थीं कि उन्होंने कुल की लाज तक बिसार दी थी। मनुष्यों पर ही नहीं, पशु-पक्षियों तक इतना प्रभाव पड़ा हुआ था कि मुरली की तान सुनकर गौएं दौड़ी आती थीं। पशु मौन व्रत धारण करके कृष्ण की

वंशी सुनते थे। जब कृष्ण जी गोपियों के साथ नाचने लगते थे, तो उनकी रासलीला देखकर मोर भी नाच उठते थे। गोपियां इतनी वशीभूत हो जाती थीं कि जो कुछ श्रीकृष्ण उनसे कराना चाहते थे, वहीं करने लगती थीं।

७. प्राप्ति—जो वस्तु अप्राप्त हो, अर्थात् किसी को न मिल सके उसे प्राप्त कर दिखाना, असंभव को संभव कर दिखाना ही 'प्राप्ति' सिद्धि का फल होता है। बाढ़ में तैरना, आग और कांटों पर चलना, किसीको बचाने के लिए आग में कूद पड़ना, जल पर चलना, बिना सवारी के सवारीवालों से और बिना शस्त्र के शस्त्रवालों से जीतना, चाहने मात्र से किसी भी भाषा, विद्या या ज्ञान को प्राप्त कर लेना, किसी भी पद को चाहने मात्र से प्राप्त कर लेना, मनचाही धन-संपत्ति प्राप्त करना, खुले हाथों दान करना आदि प्राप्ति नाम सिद्धि का ही परिणाम है।

रावण रथी विरथ रघुवीरा

[रावण रथ पर सवार था; परन्तु राम पैदल ही थे। फिर भी राम की जीत 'प्राप्ति' सिद्धि के कारण हुई।]

८. प्राकाम्य—संसार में स्त्री-पुरुषों के साथ मेलजोल और तालमेल से, मान-सम्मान से और प्रतिष्ठा से, स्नेह और प्रेम से रहना 'प्राकाम्य' नामक सिद्धि है। कामवासना की पूर्ति में पूर्ण तृप्ति भी इसी सिद्धि का परिणाम है।

इन सभी सिद्धियों को प्राप्त करना योग पर निर्भर है। योग का अर्थ है—चित्तवृत्ति का निरोध। योग के आठ अंग हैं—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।

किसी अच्छे ग्रन्थ से तथा सद्गुरु से इन आठों सिद्धियों को प्राप्त करने की विधि सीख लेनी चाहिए।

तन्त्र-मार्ग की सिद्धियों में योग भी बहुत सहायक है। चित्त की पांच प्रवृत्तियां हैं—प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। ये पांचों बातें सब प्रकार की सिद्धियों में बाधक हैं। उन्हें दूर करके ही मनुष्य आठों प्रकार की सिद्धियां प्राप्त करने में सफल हो सकता है।

९

प्रेम-क्रीड़ा के विविध प्रकार

प्रेम—कामवासना को प्रकट करने की अनेक चेष्टाओं को प्रेम कहा जाता है, परन्तु हमें प्रेम तथा वासना के अलग-अलग रूप को समझ लेना चाहिए। कारण यह है कि ऐसा संभव है कि प्रेम हो, पर वासना न हो, यद्यपि यह स्थिति बहुत विरल और दुर्लभ है। ऐसा भी संभव है कि वासना—विषय-भोग इच्छा हो, परन्तु प्रेम न हो। हम यह कह सकते हैं कि वासना और मित्रता का मेल ही प्रेम है। एक अन्य विद्वान ने प्रेम को आकर्षण की अनुभूति बताया है, जिसमें अपने को समर्पित कर देने की भावना हो। एक अन्य विचारक का कथन है कि प्रेम अहं की तुष्टि है जो बाद में समर्पण का रूप धारण कर लेती है और इसका सम्बन्ध शारीरिक मिलन से हो जाता है।

यौन सम्बन्धों के बारे में भिन्न-भिन्न लोगों की इच्छाएं, प्रवृत्तियां और चेष्टाएं एक-दूसरे से इतनी भिन्न होती हैं कि प्रेम-क्रीड़ा के विषय में सबके लिए एक ही विधि नहीं बनाई जा सकती। प्रत्येक जोड़े को प्रेम-क्रीड़ा आरम्भ करने से पूर्व अवश्य ही एक-दूसरे की प्रवृत्तियों, आदतों और रुचियों को भली भांति समझ लेना चाहिए। तभी वे एक-दूसरे को अधिकतम आनन्द देने में—एक साथ आनन्द प्राप्त करने में सफल हो सकते हैं। संभोग तभी आनन्ददायी हो सकता है, यदि स्त्री और पुरुष—दोनों ही इसके लिए मन और शरीर से तैयार हो चुके हों। इस विषय में 'उड्डीसतन्त्र' का यह कथन कभी नहीं भुलाना चाहिए—

यद्यप्यष्टगुणाधिको निगदित:
कामांगनानां सदा,
नो याति द्रवतां तथापि झटिति
स्त्री कामिनां संगमे ।

[यद्यपि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में आठ गुनी कामवासना कही गई है, तथापि कामियों के साथ संगम में स्त्री झटपट द्रवित नहीं होती ।]

इसका अर्थ यह है कि स्त्री झटपट संभोग के लिए तैयार नहीं हो जाती—इसके लिए पुरुष को पहले देर तक रति-क्रीड़ा (सहवास की तैयारी) करनी पड़ती है, जिसे हम प्रेम-क्रीड़ा भी कह सकते हैं ।

संभोग से पूर्व की तैयारी कैसी हो ? इसके विषय में कोई विशेष बंधे हुए नियम नहीं हैं । यह तो व्यक्ति की रुचि, परिस्थिति, स्वभाव और समय पर निर्भर करता है । फिर भी प्रेम-क्रीड़ा के विविध पहलुओं का यहां वर्णन किया जाएगा ।

दर्शन

सबसे पहले आपस का संकोच दूर करना चाहिए । दोनों को मानसिक रूप से एक-दूसरे के निकट आना चाहिए । दोनों को प्रीति प्रकट करनी चाहिए । यह शब्दों से पहले आंखों द्वारा अधिक प्रकट की जा सकती है, जिसे 'दर्शन अनुराग' कहते हैं । दोनों को संगम के प्रति रुचि प्रकट करनी चाहिए । आंखों से हर्ष प्रकट करना चाहिए—एक-दूसरे के निकट होने का हर्ष । मन ही शरीर को उत्तेजित होने की प्रेरणा देता है, अत: मन में उल्लास अवश्य होना चाहिए और उसे आंखों के रास्ते एक-दूसरे पर प्रकट किया जाता है । आंखों-आंखों इशारा हो जाना चाहिए कि आज दोनों आनन्द के उपभोग की चरमसीमा को छूने का प्रयत्न करनेवाले हैं ।

एक नवयुवक या नवयुवती के लिए भिन्न-लिंगी व्यक्ति के सुन्दर शरीर को देखने से बढ़कर आनन्ददायी अन्य कोई विषय नहीं हो सकता, इसलिए एक-दूसरे के वस्त्र हटाने का प्रयत्न करना

चाहिए। यदि सहवास के कमरे में आमने-सामने दो बड़े आकार के दर्पण हों, तो दोनों के निर्वस्त्र शरीर एक-दूसरे के लिए हर्ष-उत्सव हो सकते हैं। एक-दूसरे के शरीर की रूप-रेखाओं को, अंग-प्रत्यंग को सराहना की दृष्टि से देखना चाहिए। वस्त्र-आभूषणों से रहित, नग्न शरीर की प्राकृतिक शोभा कामवासना को उत्तेजित करने का अद्भुत साधन है। इस समय दोनों को एक-दूसरे के सामने अपना अंग-अंग खोल देना चाहिए और कुछ भी छिपाकर नहीं रखना चाहिए। दूसरे के एक-एक अंग को देखकर आंखों से इस प्रकार प्रशंसा-भरी दृष्टि से देखना चाहिए, मानो सौन्दर्य के सजीव भंडार को देख रहे हों। एक-दूसरे की आंखों के सामने रुकावट नहीं पैदा करनी चाहिए ताकि आंखें उस महान् कलाकार की सुन्दर कला को बेरोकटोक देख सकें। मनुष्य के लिए अपने भिन्न-लिंगी के शरीर से बढ़कर सौन्दर्य की वस्तु और क्या हो सकती है? आंखों को तृप्ति देनेवाला और कौन-सा दृश्य हो सकता है? पुरुष को यह समझ लेना चाहिए कि स्त्री के अन्तर्मन में कहीं यह इच्छा छिपी रहती है कि पुरुष उसके छिपे सौन्दर्य को देखे और सराहना करे। ऋतुमती (मासिक स्राव वाली) होने से ही स्त्री अपने मन के किसी कोने में इस इच्छा को पालती रहती है कि उसके दिन-दिन बढ़ते अंग-सौन्दर्य को वह किसीको दिखलाए। वह विकसित कमल जैसे उरोजों को किसीके सामने खोलकर रखे और उसकी दृष्टि से सराहना पाए। पुरुष जब स्त्री के अंग-प्रत्यंग को सराहना की दृष्टि से देखता है तो स्त्री के अहं की तुष्टि होती है—तब स्त्री को इतनी प्रसन्नता होती है कि वह गद्गद् हो जाती है। यहीं से स्त्री का द्रवित होना (संगम के लिए पिघलना) शुरू होता है। हर एक स्त्री अपने अंग-प्रत्यंग को पूर्णतया सुन्दर मानती है, इसके अपवाद बहुत कम मिलेंगे। इस-लिए पुरुष जब अपनी दृष्टि से उसके अंग-प्रत्यंग की सराहना करता है तो स्त्री की चिरकाल से मन में पाली हुई इच्छा पूर्ण होती है। प्रिय की आंखें यदि स्त्री के अंग-प्रत्यंग को 'पूजा' की दृष्टि से देखती हैं तो वह फूली नहीं समाती। इसी से स्त्री के मन में वासना की एक लहर-सी उठती है। वह वासना की लहर स्त्री की आंखों

से प्रकट हुए बिना नहीं रहती और उसे देख पुरुष अपने को भाग्यशाली समझता है।

स्पर्श

इसके बाद स्पर्श की बारी आती है। पुरुष स्त्री की उंगली पकड़ता और उंगली पकड़कर पहुंचा पकड़ता है। वह उंगली को अपनी उंगलियों की लपेट में लेकर सहलाता है। फिर सारे हाथ की उंगलियों को सहलाता है। स्त्री भी उसके हाथ को अपने हाथ में दाब लेती है। हाथ के हल्के से स्पर्श से जो क्रिया आरम्भ होती है, वह धीरे-धीरे अन्य अंगों पर भी जाती है। गले के पिछले भाग से लेकर आगेवाले भाग तक और फिर छाती तक हाथ पहुंचता है। और पुरुष अपना हाथ धीरे-धीरे स्त्री के अंग-प्रत्यंग पर फेरता है। स्त्री भी इसका उत्तर देती है और पुरुष के अंग-प्रत्यंग पर अपना हाथ फेरती है। परन्तु पुरुष को यह ध्यान रखना चाहिए कि लिंग पर स्त्री का हाथ न लगने दे, क्योंकि भावुकता के आवेश में स्त्री का हाथ यदि पुरुष के काम-अंग पर लगता है, तो उसके शीघ्र स्खलित होने का भय होता है। अतः स्त्री यदि लिंग के साथ क्रीड़ा करने का प्रयत्न करे, तो किसी बहाने टाल जाना चाहिए। प्रकृति ने पुरुष और स्त्री की यौन-भावनाओं में कुछ अन्तर रखा है। पुरुष जब प्रिया के बारे में सोचता है, उसे सामने पाता है, उसके अंगों का स्पर्श करता है, तो वह मानसिक तथा शारीरिक रूप से, स्त्री की अपेक्षा पहले उत्तेजना प्राप्त करता है, जबकि स्त्री को उत्तेजित होने में देर लग जाती है। यह एक स्वाभाविक बात है। पुरुष को उस समय अपना अगाध प्रेम प्रकट करना चाहिए और जल्दबाजी बिल्कुल नहीं करनी चाहिए। उसे स्त्री की चाहत को जैसे भी हो बढ़ाना चाहिए, उसकी लज्जा, भय और संकोच को मिटाने का प्रयत्न करना चाहिए।

प्रश्न (वार्तालाप)

वात्स्यायन ने कहा है, "संगम में वार्तालाप या प्रश्न का बहुत महत्व है। जब नायिका आए तो उसका स्वागत-सम्मान करके

मधुर वार्तालाप करना चाहिए। यदि वर्षा आ गई हो और रास्ते में वह भीग गई हो, तो स्वयं अपने हाथ से उसके वस्त्र बदलवाकर उसके शृंगार को ठीक करने में अपने हाथ से सहायता करनी चाहिए।" तब से लेकर 'स्पर्श' तक मीठी-मीठी बातें जारी रहनी चाहिए। मीठी-मीठी बातों में पुरुष स्त्री से अनेक प्रश्न पूछ सकता है तथा उत्तर सुनकर और (नये) प्रश्न पूछ सकता है। चाहत को बढ़ाने में मधुर शब्दों का बहुत महत्त्व है। पुरुष और स्त्री अपने मधुर शब्दों से एक-दूसरे के आनन्द में कई गुना वृद्धि कर सकते हैं। ऐसे समय किसी ऐसी बात को नहीं छेड़ना चाहिए कि जिसका प्रेम या संयोग से सम्बन्ध न हो। एक-दूसरे की त्रुटि की बात, एक-दूसरे के शरीर के किसी अंगों की आलोचना या एक-दूसरे के व्यवहार की किसी कमी की बात सहवास की तैयारी में रुकावट पैदा कर सकती है। इससे रुचि कम होने के साथ उत्तेजना भी कम हो सकती है। बस, उत्साह, हर्ष और स्फूर्ति की ही बातें करनी चाहिए। दोनों में से किसीको भी कोई चुभती बात, चाहे वह कितनी ही सच्ची हो, नहीं कहनी चाहिए; बल्कि पूर्ण रूप से अपने शरीर और मन को 'संगम' पर ही केन्द्रित रखना चाहिए।

नवयुवक जब अल्हड़ बछेड़ी को सामने देखता है तो उसे एकदम कुचल डालना चाहता है, परन्तु उसे चाहिए कि अपने शब्दों से नवयुवती को पहले विश्वस्त करे। उसे चाहिए कि नवयुवती के एक-एक अंग की प्रशंसा करे। अधरों की, बालों की, भौंहों की, आंखों की, चितवन की, ग्रीवा की, उरोजों की, योनांगों की, जांघों की, नितम्बों की—भावार्थ यह है कि उसकी तारीफ करके उसे भावविभोर कर दे। उसे यह बताए कि कामवासना ही सृष्टि का आधार है। इसीमें मनुष्य के जीवन का आनन्द है। मनुष्य के लिए कामवासना की पूर्ति अनिवार्य है और इसके बिना जीवन फीका, अधूरा और उदासीनता-भरा है। जब एक लड़की लड़कपन की सीमा को पार करके जवानी की वादियों में प्रवेश करती है तो वह अपने अंग-अंग पर प्रतिदिन चढ़ते रंग-रूप को देखकर आप ही अपने पर मुग्ध होती है, या फिर वह उसपर मुग्ध होती है, जो उसके अंग-प्रत्यंग की प्रशंसा करे। यह प्रशंसा नवयुवती के अंग-

प्रत्यंग को एक अजीब मस्ती से भर देती है। इसका कारण यह है कि काम का सम्बन्ध मनुष्य शरीर से है। जब नवयुवक नवयुवती से कहता है, "तुम्हारे अधर नई कोंपल-से हैं, बांहें नए पौधे की शाखाएं-सी हैं, नयन कमल जैसे हैं, भौंहें कमान जैसी हैं, स्तन सेब जैसे हैं, जांघें केले के खंभे जैसी हैं, चाल हथिनी जैसी है और···तो नवयुवती के गालों पर लाली दौड़ जाती है। उसके गाल लाल हो जाते हैं और चेहरे पर रक्त की लालिमामयी लहर-सी दौड़ पड़ती है।

इस प्रकार की प्रशंसा करनेवाले नवयुवक से युवती कभी निराश नहीं होती और उसके मन में चाहत जागती है। इसी प्रकार नवयुवती भी नवयुवक के अंग-प्रत्यंग की प्रशंसा कर सकती है—घुंघराले बालों की, चौड़े मस्तक की, सुन्दर भौंहों की, तेजस्वी नेत्रों की, चौड़ी छाती की, भुजदंडों की, कद-काठ की, पौरुष की, और···की। जो एक के पास है, वह दूसरे के पास नहीं—दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं।

नवयुवक को नवयुवती के सौन्दर्य के सामने झेंपना नहीं चाहिए और न अपने व्यक्तित्व से उसे दबाना चाहिए। नवयुवक को चाहिए कि वह उसे आश्वासन दे कि वह उसकी सलाह को मानेगा, अपनी कोई गलती भी होगी, तो उसे सुधारेगा और उसे असीम आनन्द देगा। नवयुवक के लिए नवयुवती का हठ, दम्भ और मूर्खता सहन करना कठिन होता है, अतः नवयुवती को चाहिए कि यत्नपूर्वक अपने को चतुर, चुस्त, समझदार और बुद्धिमती प्रकट करे। अपनी बात चीत से उसे मोहित करे, न कि बुत की तरह चुपचाप रहे। जैसे नवयुवती अपनी प्रशंसा चाहती है, उसी प्रकार नवयुवक भी अपनी प्रशंसा चाहता है। नवयुवती अपने उरोजों की प्रशंसा सुनकर सबसे अधिक विह्वल हो जाती है और पुरुष अपनी पुंस्त्व-शक्ति (मर्दानगी) की प्रशंसा सुनकर भाव-विभोर हो जाता है। अपनी प्रशंसा सुनकर वह कठिन-से-कठिन काम करने को तैयार हो जाता है। वह प्रेम पाने के लिए बड़े-से-बड़ा त्याग करने को तैयार हो जाता है। नवयुवक को वश में करने की दवा है—प्रशंसा। यदि नवयुवती अत्यधिक भावुक, चिड़चिड़ी, गुस्सेबाज, असन्तोषी

तथा लगातार शिकायत पर शिकायत करनेवाली हो, तो नवयुवक की कामवासना मन्द होने लगती है। समय और स्थान देखकर अपनी शिकायत भी करने में कोई हानि नहीं है, परन्तु शिकायत करनी चाहिए तरीके से और प्रेम में लपेटकर। कोरी बहस यौन-सम्बन्धों के लिए खतरनाक है। यौन-सम्बन्धों में तो उनमुक्त हंसी-मजाक से रस मिलता है। मधुर वाणी से जहां हृदय खिलता है, वहां कटुवचन से मन सिकुड़ता है। दोनों को किसी प्रकार की चिन्ता की बात भी एक-दूसरे के सामने नहीं रखनी चाहिए, क्योंकि इससे कामवासना का आवेश कम हो जाता है। कुछ नवयुवकों और नवयुवतियों की कामोत्तेजना तभी जोश में आती है जब वे यौन अंगों के गंवारू नाम एक-दूसरे के सामने कहें। कोई-कोई नवयुवती खुले-आम जिन शब्दों को मुंह पर नहीं ला सकती, संगम के समय वह उन्हें बार-बार दोहराकर अपने मन की भड़ास निकालती है। इसी प्रकार कई नवयुवक भी, जो ऊपर से भोले-भाले और मासूम दिखाई देते हैं, यौनांगों के अच्छे या भद्दे नाम बार-बार नवयुवती के कान में दोहरा कर ही उत्तेजित होते हैं तथा नवयुवती को उन्मत्त बना देते हैं। इसीलिए कहा गया है कि प्रीति की रीति निराली है।

तन्त्र-विद्या में ऐसे अनेक मंत्र भी आए हैं, जिनमें मोहिनी शक्ति होती है। क्या मंत्रों में वास्तव में शक्ति होती है? तान्त्रिकों का मत है कि मन्त्रों में बड़ी शक्ति होती है। वे इसे शब्द-ब्रह्म या नाद-ब्रह्म कहते हैं। उनका मत है—मंत्र द्वारा जिस वस्तु की कामना की जाती है, वह शब्द की शक्ति द्वारा उपचेतन की शक्तियों को जागृत करने में समर्थ होती है।

वशीकरण मंत्र

(१) ॐ नमः कपालरुद्राय सर्वलोकवशीकराय, अनाथनाथाप्रतिहत बलवीर्य पराक्रम-प्रभावाय।

(२) आ अं आं इ ई उं ऊं ॠं ॠं फट्।

(३) ॐ ह्रीं रक्ष रक्ष कुरु कुरु···मन वशमानय स्वाहा।

[खाली जगह पर अपने प्रिय या प्रिया का नाम रख दें।]

(४) ऊं राजस्य मुखं विश्वराजस्य स्वाहा।

[यह मंत्र पढ़कर बाएं हाथ में तेल लेकर तीन बार फिर इस मंत्र को पढ़ें और फिर इस तेल को अपने बालों में लगा लें। फिर यह जिसको देखेगा, वह इसके वशीभूत हो जाएगी।]

(५) ऊं चामुण्डे जय जय...वश्य वश्य स्वाहा।

[खाली जगह प्रिय या प्रिया का नाम रख दें।]

(६) ऊं नमः कामदेवाय सहस्रदल सहस्रदृशस्त्रियं प्रियदर्शनाम् उत्कंठितां कुरु स्वाहा।

[स्त्री को वश में करने का मंत्र।]

(७) अहो नाथ तुच्छ मन्त्रयतां पंचनं उच्चड पानी हो नीलद्युति योगिनी कामिनी वंधां सुखेन सांजरने सेरास्था स्वाहाः।

[पुरुष वशीकरण मन्त्र।]

(८) सह्वल्लीं करवल्लीं काम पिशाच...कामग्राह्यस्वप्नेन मम रूपेण नखं विदारय न द्रावय स्वेदेन बन्धनं श्री फट्।

[जिस स्त्री को वश में करना हो खाली स्थान पर उसका नाम लेता हुआ इस मंत्र का जाप करे। मंत्र सिद्ध होगा।]

सुगन्ध, रंग और प्रकाश

मन को प्रसन्न करने में सुगंध का बहुत महत्त्व है। यजुर्वेद में लिखा है—

सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्

सुगन्धि से शरीर की पुष्टि बढ़ती है। शरीर और मन को प्रेम-क्रीड़ा के लिए उत्तेजित करने में सुगन्ध बहुत सहायक होती है। यही कारण है कि धूप, अगरबत्ती, फूल और फूलों के बने गहनों (बाजूबन्द, हार, वेणी आदि) का प्रयोग काम-कला-कुशल पुरुष अवश्य ही करते हैं। वे अपने हाथों से जब प्रेयसी के अंग-प्रत्यंग को सुगन्धित फूलों से सजाते हैं या उनके अंगों पर रुचि के इत्र आदि लगाते हैं तो स्त्री को अपूर्व आनन्द प्राप्त होता है। तन्त्र-मार्गी स्त्री के कुचों के चूचुकों पर खस, चन्दन आदि का लेप करते

हैं या विविध रंगों के चन्दनों से उसके उरोजों (स्तनों) पर चित्रकारी करते हैं। सुगंध वही लेनी चाहिए जो स्त्री को पसन्द हो और अपने आप को भी अरुचिकर न लगती हो।

स्नान से, सुगंधित तेल से, इत्र से फूलों से, सुगन्धित तांबूल आदि से अपने शरीर को स्वच्छ, निर्मल तथा सुगंधिमय बनाकर स्त्री-पुरुष अपने शरीर को चाहने योग्य बना सकते हैं। ऐसे शरीर के पास होने में, आलिंगन में, चुम्बन में आनन्द की अनुभूति होती है। कई बार स्नानागार में प्रेमी युगल इकट्ठे स्नान करके, एक-दूसरे के शरीर को मल-मलकर स्नान कराएं, तो उन्हें विचित्र सुख मिलता है। मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय (मीठा, खट्टा, नमकीन, कड़वा, तीखा, कसैला)—इन छः रसों की गंध भी भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। युवक-युवती के अंगों की भी अलग-अलग गंध होती है और रस भी अलग-अलग होता है। नयनों को 'सलोना' कहा जाता है और अधरों को मधुर माना जाता है।

व्यक्ति के शरीर की गन्ध का दूसरा स्रोत है—मुख। मुख और गले को चिकना बनाए रखने के लिए अनेक श्लैष्मिक ग्रन्थियां द्रव (स्राव) निकालती रहती हैं। जब मनुष्य किसीका मुख चूमता है, तो उसे आकर्षित करने वाली गन्ध स्मरण रहती है और फिर बार-बार उसे चूमने को मन कहता है; परन्तु कई बार, कुछ व्यक्तियों के मुख से सुगन्ध की बजाय दुर्गन्ध आती है, इसीलिए इलायची, लवंग, केशर आदि से युक्त ताम्बूल का प्रयोग कामियों में प्रचलित है।

पुरुष के वीर्य में कामवासना को उत्तेजित करनेवाली एक तीव्र गन्ध होती है। स्त्रियों के अधिकांश यौन-अंग भीतरी हैं। योनि की भीतरी दीवारों में कुछ मुलायम ग्रन्थियां हैं, जिनसे भिन्न प्रकार की गन्ध द्रवित होकर बाहर आती रहती है जो योनिमार्ग को गीला करती रहती है। गर्भाशय की भीतरी दीवारों की ग्रन्थियों से भी एक प्रकार का रस द्रवित होता है। कामोत्तेजना के समय गर्भाशय में आकुंचन की लहरें उठती हैं और यह द्रव गर्भाशय-मुख से होकर योनिमार्ग में आता है और योनि की दीवारों

की ग्रन्थियों से द्रवित होनेवाले रस (स्राव) के साथ आ मिलता है। एक स्वस्थ योनि हर समय थोड़ा-थोड़ा रिसने वाले इस द्रव से चिकनी बनी रहती है। यह ज़रा-ज़रा योनिमार्ग से भी बाहर आता रहता है जिससे नारी-गंध उत्पन्न होती है। कामवासना जब बहुत अधिक उत्तेजित हो जाती है तो यह द्रव अधिक मात्रा में बहने लगता है। इस गंध का काम है—पुरुष को कामोत्तेजित करना। हर महीने स्त्री की डिब ग्रन्थि से एक अंडा निकलता है और नली में होता हुआ बच्चेदानी में पहुंचता है। संभोग के बाद अगर इस अंडे से शुक्राणु मिल जाते हैं तो गर्भ ठहर जाता है। स्त्री को चाहिए कि स्नान करते समय अपनी योनि को साफ करे। भीतरी भगोष्ठ और बाहरी भगोष्ठ साफ करने चाहिए और भगनासा के इर्द-गिर्द मैल हो तो उसे भी साफ कर देना चाहिए।

पुरुष को चाहिए कि लिंग मुंह के ऊपर की त्वचा को पीछे हटाकर उसपर आए सफेद-से मल को धो डाले।

स्त्री तथा पुरुष द्वारा इस प्रकार की सफाई करने के बाद जो गन्ध शेष रह जाती है वह इतर लिंगी के लिए आकर्षण का ही कारण बनती है, निकर्षण का नहीं।

बाहरी सुगन्ध (तेल, धूप, अगरबत्ती, इत्र आदि की गंध) के बारे में यह ध्यान रखना चाहिए कि कोई गंध किसीको प्रिय होती है तो किसीको अप्रिय। इसलिए उसी गंध का प्रयोग करना चाहिए जो दोनों को प्रिय हो

आलिंगन के भेद

अविवाहित युवक-युवतियों में आठ प्रकार के आलिंगन होते हैं—

(१) नवयुवक या नवयुवती किसी बहाने एक-दूसरे के अंग को छू देते हैं। जैसे—रुमाल या पुस्तक देने के बहाने, नवयुवक नवयुवती के स्तन को छू दे। हस्तरेखा देखने के बहाने, हाथ को अपने एक या दोनों हाथों में लेकर दबाए।

(२) नवयुवक या नवयुवती कोई अंग उंगली, कोहनी आदि

चुभो दे।

(३) आते-जाते, उठते-बैठते कंधे से कंधा, जांघ से जांघ या पैर से पैर रगड़ दे।

(४) नवयुवक जब नवयुवती को एकान्त में पाए तो दीवार, खम्भे या पेड़ के सहारे खड़ी को आलिंगन पाश में बांध ले। उसके उरोजों से अपनी छाती मिलाकर भींच ले।

(५) बात करते हुए हंसते-हंसते उसकी पीठ ठोंक दे और 'शाबास' कहे। या मक्खी-मच्छर उड़ाने के बहाने उसकी जांघ पर हाथ मार दे।

(६) नवयुवती नवयुवक के पीछे जाए। जब देखे कि और कोई नहीं देख रहा, तो पीछे से जाकर नवयुवक की आंखें दोनों हाथ से बन्द करने के साथ-साथ अपने उरोजों से उसकी पीठ को छू दे। नवयुवक इसी तरह नवयुवती के पीछे जाकर सामने से या पीछे से उसके कुचों को पकड़कर आलिंगन कर ले।

(७) कहीं दल बांधकर जा रहे हों तो नवयुवक नवयुवती का हाथ एक क्षण के लिए पकड़कर छोड़ दे। कहीं अंधेरी जगह या पेड़ आदि की झाड़ या झाड़ी आदि आ जाए, तो नवयुवती के गले में पल-भर बांह डालकर छोड़ दे, या स्तनों का अग्रभाग छू दे या पकड़कर कोमलता से मरोड़ दे। अथवा भीड़भाड़ में अपने शरीर के साथ उसका शरीर रगड़ दे।

(८) जब नवयुवक, नवयुवती किसी मकान, कमरे, कुटिया, झोंपड़ी अथवा बेलों के झुरमुट में अकेले हों तो स्तनों से वक्ष मिलाकर प्रगाढ़ आलिंगन करें।

संभोग-समय के आलिंगन

(१) जैसे बड़े पेड़ को बेल, बल खाती हुई लिपट जाती है, उसी प्रकार प्रिया अपने प्रिय से लिपट जाए और चुम्बन के लिए अपना मुख झुका दे या मन्द-मन्द सी-सी करती हुई प्रिय का मुख चूम ले।

(२) प्रिया अपने दोनों पैरों को प्रिय के पैर पर रख ले। अपने कुचों को उसके वक्ष से सटाकर, बांहों में उसे लपेट ले।

(ये दोनों आलिंगन खड़े होने की स्थिति में हैं।)

(३) जहां प्रिय लेटा हुआ हो, वहीं प्रिया करवट के बल लेटकर अपने स्तनों से पुरुष की छाती को भींच दे। दोनों बांहों से प्रिय को कस ले।

(४) प्रिया एवं प्रिय करवट लेकर आमने-सामने लेटें। प्रिय अपनी एक जांघ अथवा दोनों जांघों को प्रिया की जांघों में फैला दे और जोर से भींच ले।

(५) कामान्ध होकर प्रिय अपनी प्रिया के साथ लेटकर टांगों में टांगें, बांहों में बांहें फैलाए और हृदय से हृदय जुड़ाए। ऐसे लिपटकर एक हो जाएं जैसे दूध और पानी।

(६) प्रिय करवट के बल लेटे और प्रिया उसके पीछे जाकर करवट के बल लेट जाए और अपने स्तनों को प्रिय की पीठ पर टिकाकर भींच ले। अपने हाथ से प्रिय की छाती पर हाथ फेरे। अथवा प्रिय अपनी प्रिया के पीछे जाकर लेट जाए और अपनी छाती उसकी पीठ से चिपकाकर हाथ आगे लाए और एक स्तन या दोनों पकड़ ले।

(७) प्रिय पीठ के बल लेटा हो। प्रिया उसके ऊपर औंधी लेटकर सारे शरीर को आलिंगन में बांध ले।

(८) प्रिया सारे वस्त्र उतार डाले। पलंग पर लेट जाए प्रिय भी निर्वसन होकर उसके ऊपर लेट जाए—नयनों से नयन, ओठों से ओंठ, मस्तक से मस्तक मिला दे।

संवाहन

एक-दूसरे के अंगों को छेड़ना, कोंचना, मलना, मसलना, दबाना, मुट्ठीचापी करना, प्रिय द्वारा स्तनाग्र को और प्रिया द्वारा शिश्नाग्र को छेड़ना आदि भी कामवासना को उग्र रूप देने में उत्तेजित करने के उपाय हैं। कई तान्त्रिक आचार्यों का कहना है कि संवाहन की क्रिया, संभोग से पूर्व कई घंटे तक जारी रहनी चाहिए।

चुम्बन

अधर, कपोल, गर्दन, हाथ, स्कन्ध, कुच आदि चुम्बन स्थान

हैं। आलिंगन, संवाहन और चुम्बन में पहले क्या करें और पीछे क्या करें—इसका कोई नियम नहीं।

यों तो समस्त शरीर में चुम्बन स्थान हैं, क्योंकि सर्वत्र मांस है, तथापि चुम्बन के मुख्य स्थान हैं—मस्तक, पलकें, अलकें (बालों की लटें), गाल, नयन, उरोज, स्तनाग्र (चूचियां), ओंठ, मुख का भीतरी भाग। चुम्बन के मुख्य प्रकार ये हैं—

(१) नव-परिचित प्रिय एकाएक दोनों हाथों से प्रिया मुख पकड़कर उसके अधर पर अपना अधर धर दे। प्रिया लजा जाए।

(२) प्रिय जब अधर पर अधर धर दे तो प्रिया अपने अधर को हल्के से फरकाए (अत्यंत कोमल चुम्बन)।

(३) प्रिय जब अधर पर अधर धर दे तो प्रिया उसके अधर को अपने दांतों में दबा ले।

(४) जिसके साथ पहले संभोग हो चुका हो, उसे पकडकर प्रिय जोर का चुम्बन ले ले जिसमें चूमने की आवाज भी हो।

(५) दोनों चुम्बन की प्रतियोगिता करें कि पहले कौन चूमता है। यह चुम्बन प्रतियोगिता विभिन्न अंगों की हो सकती है और घंटों चलाई जा सकती है।

(६) प्रिय प्रिया को उसकी सहेली के सामने बरबस पकड़ ले और दोनों हाथों से उसका मुख पकड़कर जबर्दस्ती तडातड़ चुम्बन ले और प्रिया उसके हाथों को अपने दांतों से काटकर अपना मुख छुड़ा ले।

(७) प्रिय-प्रिया आमने-सामने बैठ जाएं और ओंठ से ओंठ मिलाकर चूमें।

(८) एक अपनी जीभ दूसरे की जीभ से मिलाकर चूमते रहें।

(९) प्रिय अपनी प्रिया को बाईं ओर बिठलाकर गर्दन टेढ़ी करके उसके कपोल या अधर को चूम ले।

(१०) प्रिय या प्रिया पीछे से आकर अपने साथी का मुख अपनी ओर घुमाकर चूम ले।

(११) दोनों एक-दूसरे को चूमते हुए अधरों को दांतों से दबाकर पीडा पहंचाएं।

(१२) बाज़ी (शर्त) लगाकर चूमें कि पहले जो चूम ल वह जीता।

(१३) प्रश्नोत्तर चुम्बन इस प्रकार होता है कि प्रिय ने प्रिया को चूमा और प्रिया ने उसके उत्तर में एक बार चूमा। देर तक चुम्बनों में प्रश्नोत्तर जारी रहें।

(१४) जीभ से जीभ लड़ाने का भी मुकाबला चुम्बन में शामिल है।

(१५) स्तनाग्रों (चूचियों) को, स्तनों के ऊपर-नीचे के भाग कों, नाभि को, भौंहों के मध्य भाग को, कंधे को, जांघ को, योनि को, लिंग को, पैर के अंगूठे को, हाथों की उंगलियों को चूमना।

(१६) दर्पण में, दीवार पर प्रिय या प्रिया की परछाई पड़ रही हो, उसे चूमना और प्यार प्रकट करना।

(१७) हवाई चुम्बन—दूर से ही प्रिय या प्रिया को चुम्बन फेंक कर मारना।

(१८) प्रिया को उसका चित्र दिखाकर चित्र को चूमना, किसी बच्चे को गोद में उठाकर उसे चूमने के बहाने प्रिया को चूमने का इशारा करना आदि चुम्बन के हज़ारों प्रकार होते हैं।

स्त्री को कामोत्तेजित करने की बाहरी क्रियाएं

यदि प्रथम बार का संभोग हो तो पुरुष को चाहिए कि स्त्री को अपनी बाईं तरफ लिटाए। मीठी-मीठी बातें करें। धीरे-धीरे बातों में लगाकर उसकी चोली खोल दे। स्तनों पर हाथ फेरता-फेरता धीरे-धीरे नाड़ा खोल दे या साड़ी की गांठ खोल दे। यदि स्त्री रोके तो पुरुष प्रेम का प्रदर्शन करे, आंखों से आग्रह करे, रिझाए, मनाए। चुम्बन लेकर उसे काम-विह्वल कर दे। काम-वासना बढ़ जाने पर जब लिंग उत्तेजित हो जाए तो पुरुष को चाहिए कि स्त्री की जांघों को सहलाए, कूल्हों को थपथपाए, स्तनों को मुट्ठी में भर ले, उंगली से चूचुक (निपल) को छेड़े। कांखों (बगलों) में गुदगुदी करे। यदि स्त्री प्रथम बार संभोग के लिए

तैयार की जा रही हो तो वह लज्जावश अपनी दोनों जांघें सटा लेती है। इस प्रकार वह योनि को छिपा लेती है। ऐसे मौके पर स्त्री की दोनों जांघों के बीच में हाथ डालकर उन्हें अलग-अलग करना चाहिए। कई बार युवती अपने उरोजों (स्तनों) को बांहों से ढक लेती है। पुरुष को चाहिए कि उसके गले तथा बगलों को गुदगुदाए। इससे वह पुरुष के हाथ को रोकने के लिए स्तनों पर से बांहें हटा लेगी। इस प्रकार पुरुष को स्तन पकड़ने का अवसर मिल जाएगा। पुरुष को चाहिए कि स्त्री की नाभि की सुन्दरता की प्रशंसा करता हुआ उसके पेट पर हाथ फेरे और पेट पर हाथ फिराता-फिराता नीचे तक ले जाए और योनि को मसलने लगे। यदि स्त्री उसका हाथ योनि से हटाए तो कहे कि 'अच्छा, जांघों पर हाथ फिराने दो।' वह राज़ी हो जाएगी। जांघों पर हाथ फिराते-फिराते बार-बार योनि पर हाथ ले जाए और उसे सहलाने लगे और कभी प्यार से थपथपाने लगे। यदि स्त्री अपने दोनों हाथों से योनि को छिपा ले तो पुरुष को चाहिए कि स्त्री के केश पकड़ ले और दूसरे हाथ से उसकी ठोड़ी ऊपर उठाकर चुम्बनों की तड़ातड़ झड़ी लगा दे। बीचोबीच में उसके स्तनों की घुंडियों को छेड़ता रहे।

प्रथम संभोग के समय स्त्रियों के नयन मद-उन्माद से मुंदने लगते हैं अथवा वे लाज के कारण आंखें बन्द करने लगती हैं। उस समय पुरुष को चाहिए कि बहुत मीठे वचन बोले। स्त्री को सांत्वना दे। उसकी झिझक दूर कर दे।

स्त्री को उत्तेजित करने की भीतरी क्रियाएं

जब पुरुष का लिंग उत्तेजित हो जाए और काम-क्रीड़ा के कारण स्त्री की योनि में से स्राव बहने लगे (वह गीली हो जाए) तब पुरुष को चाहिए कि बातों में लगाकर योनि में लिंग प्रविष्ट करा दे। फिर मधुर बातों से, चुटकुलों से, इधर-उधर की छोटी-छोटी कहानियों से स्त्री को प्रसन्न करने का प्रयत्न करे। आचार्य सुवर्णनाभ ने कहा है कि संभोग करते समय स्त्री जिस अंग की ओर

देखे उसी अंग को प्यार से चूमना, मसलना, सहलाना, दबाना या नाखून चुभोकर उत्तेजित करना चाहिए। उस अंग के प्रति अधिक प्यार प्रदर्शित करना चाहिए। प्रायः स्त्रियां स्तनों के चूचुकों (घुंडियों) की तरफ देखती हैं और स्तनों तथा चूचुकों को चूमने या चूसने से वे तुरन्त उत्तेजित हो जाती हैं और मैथुन के लिए 'तैयार' हो जाती हैं। स्त्री के हाव-भावों, चेष्टाओं, आकार, इंगित (इशारे), चेष्टा, आंखों और चेहरे पर आए भावों को जानने-समझने के लिए यह आवश्यक है कि कमरे में मन्द प्रकाश हो। धीमा-धीमा प्रकाश वैसे ही आह्लादक होता है। इसमें वैसे ही मस्ती-सी होने लगती है।

जब स्त्री के अंग फड़कने लगें, शरीर शिथिल होने लगे, आंखें मुंदने लगें, बोलना कठिन हो जाए, लाज बिल्कुल न रहे, भाव-विह्वलता प्रकट होने लगे, तब पुरुष को चाहिए कि घर्षण-क्रिया का वेग बढ़ा दे।

जब स्त्री की वासना-पूर्ति चरम सीमा पर पहुंच जाती है तो वह अपने हाथों को जोर-जोर से पटकती है, पसीना-पसीना हो जाती है, पुरुष को दांतों से काटने लगती है, नाखूनों से नोचने लगती है, जोर-जोर से पैर पटकने लगती है। यदि पुरुष का वीर्य स्त्री के चरम सीमा पर पहुंचने से पहले ही स्खलित हो जाए तो पुरुष को चाहिए कि स्त्री को छोड़कर अलग न हो जाए, बल्कि योनि में एक या दो उंगलियां डालकर इस तरह हिलाए जैसे हाथी अपनी सूंड हिलाता है।

घर्षण की दस विधियां

१. पुरुष को चाहिए कि योनि में एक या दो उंगलियां डालकर तब तक हिलाए, जब तक योनि से द्रव न बहने लगे। जब योनिद्वार गीला और कोमल हो जाए, तभी लिंग को धीरे-धीरे योनि में प्रविष्ट कराना चाहिए। पहले धीरे-धीरे और फिर अधिक वेग से, लिंग का तीन-चौथाई भाग बाहर खींचते हुए घर्षण करना चाहिए। लिंग से पहले तीन बार हल्के-हल्के घर्षण करने के बाद

चौथी बार जोर का घर्षण करे। थोड़ी देर बाद एक बार हल्का घर्षण करे और एक बार प्रबल घर्षण करे। इसे उपसृप्तक कहते हैं।

२. दूसरी विधि यह है कि पुरुष अपने उत्थित लिंग को हाथ से पकड़ योनि के अन्दर प्रविष्ट कराए और हाथ से लिंग को गोलाई में घुमाए। इसे मंथन कहते हैं।

३. पुरुष को चाहिए कि स्त्री को पलंग पर आड़ी लिटाए। उसकी टांगें पलंग से नीचे लटका दे। फिर खड़ा होकर योनि में लिंग को प्रविष्ट कराए। फिर लिंग को काफी बाहर तक खींचकर, थोड़ी-थोड़ी देर में हूल देकर लिंग को अन्दर घुसाए। लिंग के इर्द-गिर्द के भाग को जोर से रगड़ दे। इसे हूल कहते हैं।

४. पीठ के बल लेटी स्त्री के नितंबों के नीचे तकिया रखें। तब लिंग को योनि में प्रविष्ट कराकर जांघों के ऊपर जांघें टकराएं। इसे अवमर्दन कहा जाता है।

५. योनि में लिंग के प्रवेश के उपरान्त, एक घर्षण करे और फिर रुक जाए। फिर घर्षण करे और रुक जाए। इस तरह के घर्षण में शीघ्र-शीघ्र के और छोटे (हल्के) धक्के नहीं होते। इसे पीड़ितक कहा जाता है।

६. योनि में लिंग प्रविष्ट कराने के उपरान्त उसे बाहर बहुत दूर तक खींच लिया जाता है। केवल शिश्नमुंड ही योनि में रह जाता है। फिर योनि के अन्दर इतने वेग और जोर से घर्षण किया जाता है कि ऊंची उठाई जंघाएं एकदम नीचे गिरा दी जाती हैं। इसे निर्घात कहते हैं।

७. योनि में लिंग को प्रविष्ट करने के उपरान्त एक ही तरह धक्के लगाए जाते हैं। इसे वराहघात कहा जाता है।

८. योनि में लिंग प्रविष्ट कराने के उपरान्त, एक बार दाईं तरफ और दूसरी बार बाईं तरफ घर्षण किया जाता है। इसे वृषाघात कहा जाता है।

९. पुरुष लिंग को बाहर खींचे बिना ही, चिड़े की तरह शीघ्र-शीघ्र एक-दो-तीन-चार, इस क्रम से धक्के लगाते हुए संभोग करे। इसे चटकविलसित कहते हैं।

१०. पुरुष अपना लिंग पूर्णतया स्त्री-योनि में प्रविष्ट करा दे। स्त्री अपनी दोनों जांघों को परस्पर सटाकर भींच ले, योनि को सिकोडकर लिंग को उसमें दबा ले। इसे संपुट कहते हैं।

पुरुष को संभोग करते-करते उन चेष्टाओं को ध्यान में रखना चाहिए, जिनसे स्त्री को ज़्यादा आनन्द मिलता है।

स्त्री ऊपर होने पर घर्षण के भेद

जब स्त्री ऊपर हो, पुरुष नीचे—तब नीचे लिखे घर्षण अधिक आनन्ददायी होते हैं—

१. स्त्री अपनी योनि को सिकोड़ कर पुरुष के लिंग को देर तक दाबे रहे। इसे संदंश कहते हैं।

२. पुरुष पीठ के बल लेटे। स्त्री ऊपर से आकर धीरे से लिंग को योनि में प्रविष्ट कराए। फिर पुरुष के नितंबों (चूतड़ों) के नीचे सिरहाने रखे। फिर स्त्री अपनी योनि को लट्टू या चक्की की भांति चक्कर में घुमाए। इसे भ्रमरक कहते हैं।

३. पुरुष पीठ के बल लेटे। स्त्री ऊपर आकर अपनी योनि में लिंग लेने के उपरान्त हिलना शुरू कर दे—ऊपर-नीचे और आगे-पीछे। इतने में पुरुष नीचे से झूले की तरह आगे-पीछे या दाएं-बाएं अपने जघन को ज़ोर-ज़ोर से हिलाने लगे। पुरुष का अभिनय करती हुई स्त्री जब थक जाए तो उसी स्थिति में पुरुष ऊपर आ जाए और स्त्री को नीचे कर दे। (लिंग योनि से बाहर न निकलने पाए।) तब पुरुष खूब ज़ोरदार घर्षण देर तक करता रहे। जब दोनों स्खलित हो जाएं, तो पुरुष अपना मस्तक स्त्री के मस्तक पर रखे, ओठों से ओंठ मिला दे, जांघों से जांघें मिला दे और स्त्री को कसकर आलिंगन में बांधकर देर तक शान्त पड़ा रहे। स्त्री भी हिले-जुले बिना शान्त पड़ी रहे। इसे प्रेंखोलित कहते हैं।

साधारणत: स्त्री लाज के कारण मन की भावनाओं और इच्छाओं को मुंह से नहीं कहती, परन्तु जब वह पुरुष के समान अभिनय करती है—कामवासना के आवेश में, मर्द की तरह मैथुन करती है, तब उसके मन के भाव पुरुष पर प्रकट हुए बिना नहीं रहते।

स्त्री की जैसी रुचि, प्रवृत्ति, इच्छा और लालसा हो—वैसी ही चेष्टाएं वह पुरुष का अभिनय करते हुए किया करती है। पुरुष को इसीसे समझ लेना चाहिए कि वह क्या चाहती है। बाद में पुरुष उन्हीं चेष्टाओं को अपनाकर स्त्री को अधिक प्रसन्न तथा तृप्त कर सकता है।

पुरुष का अभिनय किनके लिए मना है ?

१. रजस्वला (जिसका मासिक स्राव जारी हो)।

२. सद्यःप्रसूता (जिसने अभी-अभी सन्तान को जन्म दिया हो)।

३. गर्भवती (जिसे गर्भधारण किए दो मास बीत चुके हों)।

४. लम्बे डील-डौल और बहुत भारी शरीर वाली स्त्री।

५. श्वास के रोग वाली।

तन्त्र के अनुसार स्त्रियों के कामोत्तेजना के स्थान

कृष्ण पक्ष	अंग	शुक्ल पक्ष
पड़वा (प्रथमा) तिथि	मस्तक	पूर्णिमा
द्वितीया	ललाट	चतुर्दशी
तृतीया	आंखें	त्रयोदशी
चतुर्थी	ओंठ	द्वादशी
पंचमी	ठोड़ी	एकादशी
षष्ठी	कण्ठ	दशमी
सप्तमी	कोख	नवमी
अष्टमी	उरोज (स्तन)	अष्टमी
नवमी	हृदय (कलेजा)	सप्तमी
दशमी	नाभि	षष्ठी
एकादशी	योनि (भग)	पंचमी
द्वादशी	जांघ	चतुर्थी
त्रयोदशी	पांव की पिंडलियां	तृतीया

चतुर्दशी	पांव, तलुव।	द्वितीया
अमावस्या	पांव का अंगूठा	पड़वा (प्रथमा)

यह स्त्री के रजोनिवास का स्थान-चक्र है। ऊपर लिखे चक्र में दिखाए गए अंग को गुदगुदाया जाए, छेड़ा जाए या बार-बार चूमा जाए, तो स्त्री की कामवासना बहुत उत्तेजित हो उठती है (भड़क उठती है)। पहले अंग को धीरे-धीरे सहलाना आरम्भ करना चाहिए। परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं कि अन्य अंगों को गुदगुदाना, सहलाना, छेड़ना या चूमना न चाहिए। तन्त्र-विद्या के विद्वानों का मत है कि तिथि के अनुसार इस अंग में काम का निवास अधिक रहता है, इसलिए उसे बार-बार और अधिक छेड़ना चाहिए। बाकी अंगों को सहलाने, मलने, छेड़ने, गुदगुदाने, चूमने की मनाही नहीं है।

१०

मैथुन के विचित्र प्रकार
या
सम्भोग के विविध आसन

विविध आसनों के कारण

पुरुष के लिंग को अनेक प्रकार की औषधियों से, रसायनों से तथा अन्य विधियों से दीर्घ तथा स्थूल किया जा सकता है, किन्तु स्त्री का योनिमार्ग संकुचित अथवा विस्तीर्ण करना कठिन होता है; अतः संभोग से पूर्ण आनन्द प्राप्त करने के लिए अनेक आसनों की खोज की गई है। संभोग के विविध आसनों से स्त्री के योनि-मार्ग को अधिक तंग या छोटा, अधिक चौड़ा या लम्बा, टेढ़ा या तिरछा किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त संभोग-रस में विविधता लाने के लिए भी इनका उपयोग किया जाता है। जिस तरह एक ही कपड़ा पहनते रहने से मन ऊब जाता है, उसी प्रकार, एक ही आसन से संभोग करते रहने से उसमें एकतानता आ जाती है, कोई नवीनता नहीं रहती। तीसरे, कई आसन ऐसे हैं जिनमें संभोग करने से गर्भ नहीं ठहरने पाता। यदि गर्भ न ठहरने देना हो तो उन्हीं आसनों का प्रयोग करना चाहिए। और यदि गर्भ ठहराने (गर्भाधान) की इच्छा हो, तो इसके लिए अन्य निश्चित आसन हैं। कामशास्त्र में इसे 'संवेशन के विविध प्रकार' और तन्त्रविद्या में इसे 'काम-साधना की विभिन्न स्थितियां' कहा गया है।

संभोग के विविध आसनों को जानने से पूर्व पुरुषों तथा स्त्रियों की विभिन्न श्रेणियों के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए।

पुरुषों के प्रकार	स्त्रियों के प्रकार
१. शशक	१. पद्मिनी
२. मृग	२. चित्रणी
३. वृषभ	३. शंखिनी
४. अश्व	४. हस्तिनी

पुरुषों की श्रेणियां

१. शशक—इसका कद न अधिक लम्बा होता है न छोटा। इसका शरीर तथा मुखड़ा सुन्दर होता है। नयन विशाल होते हैं। इसे संगीत, चित्र, कविता, नाटक आदि ललित-कलाओं का शौक होता है। कम खाता है। शांत तथा मधुर स्वभाव वाला होता है। लिंग की लम्बाई लगभग छः अंगुल (उत्तेजित अवस्था में) होती है। इसके साथ पद्मिनी का जोड़ा अच्छा रहता है।

२. मृग—इसके लोचन कमल जैसे होते हैं। शरीर से कमल के पराग जैसी सुगंध आती है। शरीर सुडौल, फुर्तीला होता है। वह प्रसन्नचित्त, मधुरभाषी, तेजस्वी, धर्मप्रिय, शशक से लम्बे कद का तथा व्यवहारकुशल एवं कर्मप्रवीण होता है। नृत्य, गीत तथा नाटक इसे प्रिय होते हैं। लिंग सात अंगुल (उत्तेजित अवस्था में) होता है।

३. वृषभ—वृष श्रेणी का पुरुष सिंह के समान पराक्रमी, वली तथा कठोर-स्वभाव वाला होता है। देह गठी हुई तथा भरी होती है। वृष अधिक खुराक खाने वाला तथा कफ (श्लेष्म) प्रकृति वाला होता है। यह कामी होता है और रमणी को देखते ही उत्तेजित हो जाता है। ऐसा पुरुष स्त्रियों को प्रिय होता है। यह लज्जारहित, वासनामय तथा संभोग में कठोर होता है। उत्तेजित अवस्था में लिंग आठ-नौ अंगुल होता है।

४. अश्व—यह तीव्र वेगवान होता है। प्रत्येक काम को झपाटे से करता है। इसका हाज़मा बहुत तेज होता है। ठोस पदार्थ खाने का चाव रखता है। कद ऊंचा, लम्बी और पुष्ट बांहें, लंबी व मोटी उंगलियां, शरीर पुष्ट और तांबे के वर्ण वाला—ये इसके

लक्षण होते हैं। अश्व श्रेणी का पुरुष बहुत अधिक कामी, क्रोधी, असत्यभाषी तथा खुरदरा होता है। बोली कठोर होती है, बर्ताव भी कठोर होता है। संभोग में सब श्रेणी के पुरुषों से बाज़ी मार ले जाता है। लिंग की लंबाई (उत्तेजित अवस्था में) बारह अंगुल तक।

स्त्रियों की श्रेणियां

१. **पद्मिनी**—इसका कद लंबा होता है। कमर पतली होती है। नितंब कुछ भारी होते हैं। स्तन न बहुत छोटे न बहुत बड़े। हाथ-पैर मध्यम आकार के होते हैं। नासिका तीक्ष्ण तथा नयन मृगी के समान होते हैं। यह लजीले स्वभाव की, प्रियतम को प्राणपण से प्रेम करने वाली, कोमलांगी, अल्पभाषिणी तथा उदार होती है। स्त्रियों की श्रेणियों में इसे सर्वोत्तम माना जाता है। इसका कोई भी अंग भद्दा नहीं होता। इसका शशक पुरुष से जोड़ा ठीक रहता है।

२. **चित्रणी**—इसके नयन कमान जैसे होते हैं। इसकी देह से मधु (शहद) जैसी गंध आती है। विचित्र वस्तुओं, वस्त्रों तथा विचित्र संभोग में इसकी रुचि होती है। संभोग की अपेक्षा काम-क्रीड़ा में इसका मन अधिक रमता है।

३. **शंखिनी**—इसका कंठ शंख जैसे आकार का होता है। देह पर रोम अधिक होते हैं। जल्दी नाराज़ हो जाती है। इसका शरीर गठा हुआ होता है। यह नयनों के बाण चलाने में, हंस-हंसकर बोलने में, पुरुष को पहले बुलाने में अग्रसर होती है। मैथुन की नाना विधियों और विविध आसनों में बहुत कुशल होती है। यह मुखर और वाक-पटु (बातचीत में चतुर) होती है। इसमें चंचलता बहुत होती है। चटपटी चीज़ों को खाना, बातें बनाना, काम से जी चुराना ये इसके लक्षण होते हैं। वृषभ पुरुष के साथ इसका जोड़ा अच्छा रहता है।

४. **हस्तिनी**—यह मोटी और छोटे कद की होती है। इसके ओष्ठ एवं उरोज छोटे होते हैं। नितम्ब व जांघें भारी होती हैं। इसकी देह से गज जैसी गन्ध आती है। कई बार यह दुर्गंध होती

यह तथा आगामी ६ तांत्रिक आसन उरिया भाषा की उन्नीसवीं सदी की एक पाण्डुलिपि से लिए गए हैं।

है। अधिक चर्बी के कारण इसका शरीर अधिक उष्ण होता है। इसकी कामवासना बहुत तीव्र तथा हर समय मस्तिष्क पर छाई रहती है। अश्व पुरुष ही इसे सन्तुष्ट करने में समर्थ होता है।

संभोग की स्थितियां

संभोग की मुख्य पांच स्थितियां होती हैं—

१. स्त्री पीठ के बल पलंग पर या ज़मीन पर गद्दा बिछाकर लेट जाए और पुरुष ऊपर से आकर प्रवेश के उपरान्त औंधा लेटकर संभोग करे।

२. स्त्री करवट के बल लेट जाए और पुरुष भी उसके सामने मुंह करके प्रवेश और आलिंगन के बाद संभोग करे।

३. स्त्री पीठ के बल लेट जाए और पुरुष पैरों के बल, घुटनों के बल या नितंबों के बल बैठकर संभोग करे।

४ स्त्री दीवार के सहारे या आदमकद दर्पण के सामने खड़ी हो जाए और पुरुष सामने से या पीछे से सम्भोग करे।

५. स्त्री गाय आदि पशुओं की भांति घुटनों के बल लेट जाए, उसका मुंह पलंग या ज़मीन की ओर रहे और पुरुष पीछे से सांड की भांति प्रवेश करके संभोग करे।

इसके विविध भेद निम्नलिखित हैं—

1. मृगी यदि वृष या अश्व (बड़े आकार वाले पुरुषांग) से संभोग करे, तो पीठ के बल लेटकर अपनी जांघों को फैलाकर चौड़ा कर ले। ऐसा करने से भग चौड़ी हो जाएगी तथा प्रवेश बिना किसी कष्ट के होगा।

२. यदि स्त्री हस्तिनी हो और पुरुष शशक या वृप हो, तो स्त्री का कामांग दीर्घ और स्थूल हो और पुरुष का अंग छोटा हो, स्त्री पीठ के बल लेटकर, प्रवेश के बाद दोनों जांघों को सटाकर भींच ले।

३. यदि समरत हो अर्थात् स्त्री और पुरुष के यौन अंग समान आकार के हों, तो स्त्री अपनी जांघें सहज रूप में रखे, टांगें लंबी फैलाए रहे। जांघों को दूर करने या फैलाने की आवश्यकता नहीं।

४. यदि स्त्री अश्विनी श्रेणी की हो और उसके साथ अश्व श्रेणी के पुरुष का संगम हो तो वह पीठ के बल जमीन पर लेटकर अपनी जांघें चौड़ी कर ले। यदि पुरुष शशक जाति का हो तो दोनों जांघें सटाकर पुरुषांग को भींच ले। यदि वृष के साथ संभोग करे तो अपनी टांगें सहज रूप से फैलाए रहे, अर्थात् न दूर-दूर फैलाए और न भींचे। साधारण स्थिति में रहने दे।

ऊपर की सभी स्थितियों में संभोग आरम्भ होने पर स्त्री को चाहिए कि अपने दोनों हाथों से पुरुष की पीठ को कसकर पकड़ ले और प्रत्येक घर्षण के साथ उसे अपनी ओर खींचे।

ऊपर लिखी स्थितियों में स्त्री अपने घुटने समेट कर भी संभोग-रत हो सकती है। ऐसी दशा में वह घुटने मोड़ लेगी और उसके पैर जमीन पर रहेंगे।

अथवा

पुरुष उसकी दोनों टांगों को अपनी दोनों बांहों पर रखकर संभोग करेगा।

अथवा

पुरुष स्त्री की टांगों को अपने कंधों पर रखकर संभोग करेगा।

विशेष—यदि पुरुष का अंग छोटा हो, अर्थात् स्त्री हस्तिनी हो और पुरुष शशक या वृषभ जाति का हो, तो पुरुष को चाहिए कि अपनी एक उंगली या दो उंगलियों से योनि के बाहरी भगोष्ठों, भीतरी भगोष्ठों और भगनासा को देर तक मसले, सहलाए और छेड़छाड़ करे। छेड़छाड़ स्त्री की इच्छा के अनुसार कोमलता से, या कठोरता से होनी चाहिए। उसके उपरान्त अपनी एक उंगली या दो उंगलियां स्त्री की योनि में डालकर देर तक उत्तेजित करे, तब संभोग करे।

यदि पुरुष वृषभ अथवा अश्व जाति का हो, और स्त्री मृगी हो, तो स्त्री अपनी योनि को फैलाने के लिए तीन आसन अपना सकती है, ताकि उसे संभोग के दौरान पीड़ा न हो। उनका वर्णन इस प्रकार है—

१. स्त्री अपने सिर के नीचे तकिया न रखे और नितंबों के नीचे तकिया रखकर उन्हें ऊंचा उठा ले। इससे योनि फैल जाएगी और तंग योनि वाली मृगी को संभोग में कष्ट नहीं होगा।

२. यदि पुरुष वृषभ हो और स्त्री मृगी हो या चित्रणी हो, तो पुरुष को चाहिए कि स्त्री की जंघाओं को ऊपर उठाकर अपनी बांहों पर या कंधों पर रख ले और सीधा या तिरछा होकर लिंग प्रवेश कराए। योनि के विस्तार के कारण, बड़े आकार के लिंग से भी कष्ट न होगा।

३. यदि पुरुष अश्व जाति का हो और स्त्री मृगी जाति की हो, तो पुरुष को चाहिए कि स्त्री की दोनों जांघों के बीच में बैठ जाए तथा स्त्री की टांगों को अपनी कांखों (बगलों) में दबा ले। इससे योनि काफी फैल जाएगी तथा लिंग का प्रवेश सुगम हो जाएगा। और घर्षण आनन्ददायी होगा।

४. स्त्री जब बड़वा (घोड़ी) हो या हस्तिनी हो और पुरुष शशक हो तो योनि बड़ी और लिंग छोटा होने के कारण स्त्री को कुछ आनन्द नहीं आता। इसके लिए चार आसन निम्नलिखित हैं—

१. स्त्री पीठ के बल लेटकर टांगें सीधी फैला ले। पुरुष लिंग प्रवेश के उपरान्त उसके ऊपर लेटकर अपनी टांगें सीधी फैलाए। स्त्री अपनी जांघों से जांघें सटाए रहे। पुरुष भी अपनी जांघों से जांघें सटाए रहे। अथवा टांगों में टांगें फैलाकर कैंची मार ले।

अथवा

२. स्त्री करवट के बल लेट जाए। पुरुष सामने से आकर या पीठ की तरफ से लिंग प्रवेश करे और बराबर लेट जाए। इसमें पुरुष अपनी बाईं बांह पर स्त्री का सिर (गर्दन) रखे और दाएं हाथ से उसके स्तनों को मसलता रहे।

अथवा

३. स्त्री पीठ के बल लेटे और पुरुष उसके ऊपर लेटकर या बैठकर संभोग करे। कभी-कभी बड़वा या हस्तिनी पुरुष को पीठ के बल लिटाकर, उसके नितंबों के नीचे तकिया रखकर

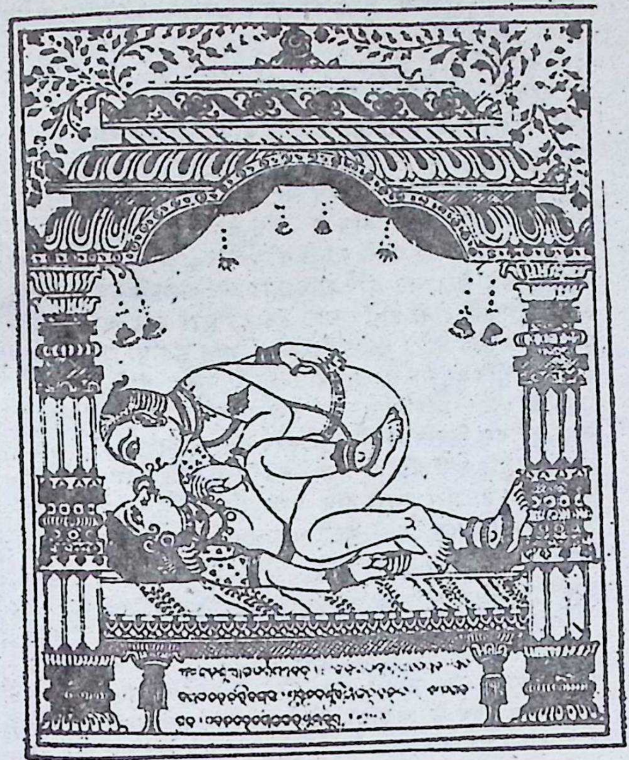

योनि में लिंग प्रवेश के बाद पुरुष के ऊपर सीधी लेट जाती है और अपनी टांगों में पुरुष की टांगें फैलाकर भींचकर संभोग करती है।

४. कई बार संभोग के दौरान वड़वा या हस्तिनी शशक या अश्व से संभोग में लगने पर योनि मार्ग को तंग करने के लिए प्रवेश के बाद अपनी एक जांघ पर दूसरी जांघ रखकर कस लेती है।

५. ज्यों ही योनि में लिंग का प्रवेश हो, त्यों ही स्त्री योनि में लिंग को कठोरता से भींच ले। जैसे वड़वा (घोड़ी) करती है।

६. स्त्री अपनी दोनों जांघों की ऊपर उठा ले अथवा पुरुष पीठ के बल लेट जाए और स्त्री ऊपर से आकर पुरुष के ऊपर लेटकर अपनी दोनों टांगें ऊपर उठाकर और उन्हें एक-दूसरे में फंसाकर संभोग करे। इससे योनिमार्ग बहुत तंग हो जाता है।

७. यदि (६) में बताई विधि से पुरुष नीचे और स्त्री ऊपर हो और स्त्री अपनी टांगें फैलाकर पुरुष के कंधों तक ले जाए, तो इस स्थिति में भी योनिमार्ग तंग हो जाएगा।

८. यदि स्त्री पीठ के बल लेटकर एक टांग पलंग पर सीधी पड़ी रहने दे और दूसरी टांग पुरुष की छाती पर रख दे या उसके कंधे पर रख दे तो इससे एक अन्य विचित्रता पैदा होगी। फिर टांग बदली जा सकती है। ऐसी दशा में पुरुष बैठकर संभोग करेगा।

९. यदि स्त्री पीठ के बल लेटकर पुरुष को टांगों के बीच में बैठाकर प्रवेश कराए और पुरुष नितंबों या पैरों के बल बैठकर संभोग में लग जाए। तब स्त्री एक टांग फैलाए रहे और दूसरी टांग पुरुष के कंधे पर रख दे। फिर कंधे वाली टांग को नीचे लाकर दूसरी टांग कंधे पर रखकर इस प्रकार एक टांग को हटाए दूसरी को रखे ऐसा बार-बार जल्दी-जल्दी करे।

१०. स्त्री पीठ के बल लेट जाए और पुरुष भी लिंग प्रवेश के बाद उसके सामने बैठ जाए। अब स्त्री संभोग के दौरान एक पांव को पुरुष के सिर से ऊपर ले जाए, दूसरा पांव नीचे रख ले

श्रौर फिर पहला पांव नीचे रखकर दूसरा पांव ऊपर ले जाए श्रौर इस प्रकार स्त्री जल्दी-जल्दी पांव बदलती हुई संभोग करे।

११. स्त्री पीठ के बल लेट जाए। जब पुरुष योनि में लिंग का प्रवेश कर चुके तो स्त्री चौकड़ी मारने की स्थिति में टांगें समेटकर पुरुष की नाभि से लगा दे।

१२. यदि स्त्री पीठ के बल लेटे, पुरुष बैठकर लिंग प्रविष्ट कराए। स्त्री अपनी दोनों जांघें उठाकर एक पर दूसरी जांघ रखकर कस ले (भींच ले)

१३ पुरुष बैठ जाए। टांगें फैलाए रहे। स्त्री उसकी श्रोर मुंह करके लिंग प्रवेश के बाद श्रपनी टांगें सामने फैला ले।

१४. पुरुष बैठ जाए। स्त्री सामने मुंह करके लिंग प्रवेश के बाद उसकी जांघों पर बैठ जाए। पुरुष श्रपनी टांगें समेट चौकड़ी मार ले। (पद्मासन)

१५. पुरुष बैठ जाए, स्त्री श्राकर श्रपनी पीठ की श्रोर से लिंग प्रवेश कराके बैठ जाए। इसमें वह श्रपनी टांगें सामने फैला सकती है या फिर चौकड़ी मार सकती है।

१६. स्त्री निर्वसन होकर, निर्वस्त्र पुरुष के सामने बैठ जाए, पुरुष योनि में लिंग प्रविष्ट कराए श्रौर स्त्री पुरुष की पिछली तरफ घूम जाए। इसे तन्त्र में परावृतक कहते हैं। यह बहुत कठिन श्रासन है श्रौर केवल श्रभ्यास से ही किया जा सकता है।

जल के श्रन्दर संभोग

एकान्त नदी, नहर, सागर श्रादि में जहां बहुत कम गहरा जल हो तो लेटकर, घुटनों से नीचे हो तो बैठकर श्रौर कमर से ऊपर हो तो खड़े होकर संभोग किया जा सकता है। लिंग का प्रवेश स्त्री के सामने से या पीछे से या श्रदल-बदलकर किया जा सकता है। श्राचार्य सुवर्णनाभ का मत है कि स्थल की श्रपेक्षा जल में संभोग करना श्रधिक सुगम, विचित्र तथा श्रानन्ददायी होता है। श्राजकल यूरोप में श्रौर हमारे देश में भी बाथ-टब में संभोग को बहुत श्रानन्ददायी माना जाता है।

आचार्य वात्स्यायन का मत है कि विचित्रता के लिए कभी वर्ष में एकाध बार भले ही जल में संभोग कर लिया जाए, परन्तु जल में अधिक बार सभोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि इससे वायु के रोग होने का भय रहता है।

पुरुषायित किसे कहते हैं ?

जब स्त्री पुरुष की भांति चेष्टाएं करती है, तो उसे पुरुषायित कहते हैं।

पुरुषायित के कई कारण हो सकते हैं

१. **स्त्री का अपना अभिप्राय**—कई बार पुरुष मैथुन करते-करते निढाल हो जाता है। स्त्री का मतलब अभी पूरा नहीं हुआ होता। स्त्री उससे छेड़खानी करके उसे पुनः उत्तेजित करती है और स्त्री के चुम्बन, आलिंगन, धौलधप्पे तथा छेड़छाड़ से पुरुष दोबारा उत्तेजित हो जाता है। अब स्त्री उसे पीठ के बल लिटाकर स्वयं पुरुष के समान भिन्न-भिन्न आसनों से, जो ऊपर विस्तार से बतलाए गए हैं, वह संभोग करती है।

२. **पुरुष का अपना अभिप्राय**—कई बार पुरुष अपनी इच्छा से स्त्री को ऐसा अवसर देता है। वह स्त्री की रुचियों और इच्छाओं को जानने-पहचानने के लिए, अपने अभिप्राय से उसे अपने ऊपर चढ़ाकर पुरुष का अभिनय करने का अवसर देता है। यह जानने का पुरुष को पूरा अवसर मिल जाता है कि वह स्त्री किस-किस प्रकार से अधिक प्रसन्न हो सकती है।

३. **नवीनता का अभिप्राय**—कई बार नीचे पड़कर संभोग कराने की एकतानता से स्त्री ऊब जाती है। उसके लिए वह उल्टी क्रिया का आयोजन करती है। कई स्त्रियों को वैसे ही पुरुषवत् आचरण करने में आनन्द प्राप्त होता है। पुरुष की भांति ही वह चुम्बन लेती है, नाखून चुभोती है, धौलधप्पा मारती है, दांतों से काटती है, योनि में लिंग प्रवेश कराने के बाद घर्षण भी जोरदार करती है और पुरुष को दबाती, कुचलती-सी संभोग में सर्वथा नवीनता ला देती है।

४. **पुरुष कुतूहल**—कई बार पुरुष को कुतूहल होता है।

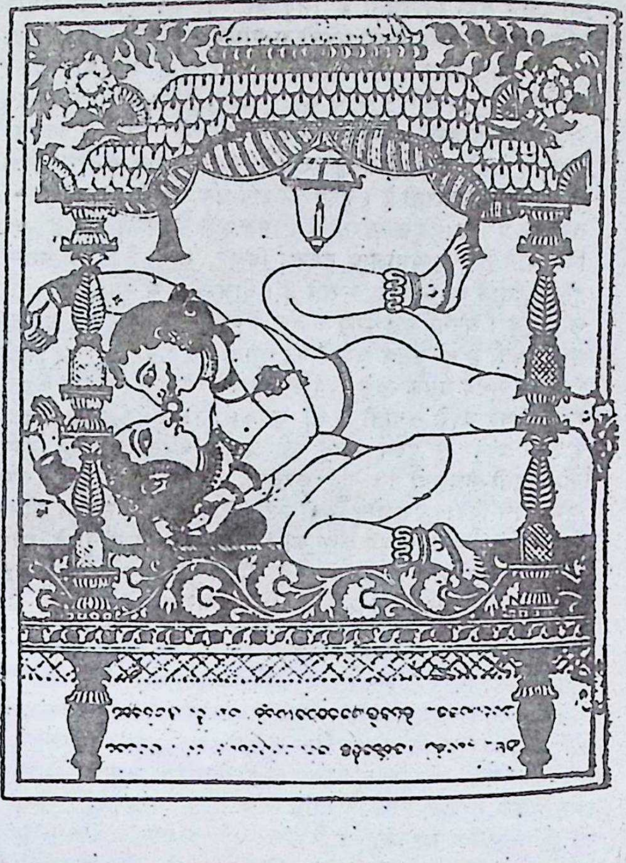

विचित्रता तथा विविधता के लिए वह स्त्री को पुरुष के समान अभिनय का अवसर देकर अपनी अत्यधिक कोमलता प्रकट करता है और इस प्रकार स्त्री को पुरुष का पूरा-पूरा अधिकार देकर उसे अपने ऊपर मोहित करके सदा के लिए मुट्ठी में कर लेता है।

५. तान्त्रिक पुरुषायित—तन्त्रमार्ग में स्त्री शक्ति का अवतार मानी जाती है। वह पुरुष के ऊपर चढ़कर संभोग करती है। गर्व प्रकट करती है। पुरुष का अंग-अंग दबाती, कुचलती है। तब वह प्रचण्ड मैथुन करती है। तब स्त्री के केशों में लगे फूल गिर जाते हैं। पुष्पमालाएं टूटकर बिखर जाती हैं। वह प्रसन्न होकर हंसती या अट्टहास करती है। बीच-बीच में लम्बे सांस लेने लगती है। अपना मुख पुरुष के मुख के पास ले जाकर जब उसका मुख चूमती है तो उसके अधरों को चूसती हुई दांतों से काट देती है। उस समय उसके स्तन पुरुष के वक्ष को दबाते हैं। संभोग करती हुई जब वह धक्के लगाती है, तो उसका सिर इधर-उधर हिलता है। हर प्रकार से पुरुष बनने का प्रयत्न करती हुई वह पुरुष को दबाती-कुचलती है। गर्व करती है। व्यंग्य करती है कि तुम मुझे नीचे गिराकर संभोग किया करते थे, आज मैं उसका बदला ले रही हूं। अन्त में जब काम का आवेश शान्त हो जाता है और पुरुष का वीर्य स्खलित हो जाता है, तो वह पुरुष के ऊपर ही लेट जाती है और उसे प्रगाढ़ आलिंगन में भींचकर प्रेम के हावभाव का प्रदर्शन करती है।

११

संभोग या संगम

कामावेग के आधार पर संभोग के प्रकार

इसमें जो विवाद पाया जाता है वह इस प्रकार है—

संभोग करते समय पुरुष में काम का आवेग कभी कम होता है, कभी मध्यम होता है और कभी प्रचण्ड होता है। इस प्रकार काम के आवेग के आधार पर संभोग तीन प्रकार का होता है—(१) मन्द—जब पुरुष में काम का आवेग कम हो, मैथुन करते समय प्रेम की उत्तेजना कम उमड़ी हो, तो लिंग कम उत्तेजित होता है, घर्षण कम होता है और वीर्यपात भी कम होता है। मंद वेग मैथुन वाला पुरुष कामावेग में मदमस्त हुई स्त्री द्वारा दांतों से काटा जाना, नाखून चुभोए जाना पसन्द नहीं करता। (२) मध्यम—जब पुरुष में काम का आवेग मध्यम हो, तब वह थोड़ा-बहुत दन्तक्षत तथा नखक्षत सहन कर लेता है। इसके लिंग का उत्थान मध्यम होता है, तथा योनि में लिंग के प्रवेश के बाद इसके धक्के भी मध्यम होते हैं (३) प्रचण्ड—कभी-कभी ऋतु-परिवर्तन में, अत्यधिक प्रसन्नता की कोई घटना होने पर या अन्य किसी कारण से पुरुष को अत्यधिक प्रहर्षण होता है। तब उसका लिंग अत्यधिक कठोर हो जाता है। सारे शरीर में काम का आवेग सनसनी दौड़ाने लगता है, आंखों और गालों में रक्त का तीव्र संचार होने लगता है, रोमांच होता है, लिंग अत्यन्त कठोर तथा अधिकतम आकार का हो जाता है। पुरुष का मन होता है कि संभोग में स्त्री को कुचल डाले, अधिकतम कामशक्ति से मैथुन करे। ऐसे समय वह स्त्री को हर प्रकार से उत्तेजित करता है।

कई बार उसके अधर, ओंठ, ग्रीवा, कंधे, जांघ, योनि, नितम्ब आदि पर दांत गड़ाकर काट खाता है। वह स्त्री द्वारा किए गए कठोर नखक्षत व दन्तक्षत को भी सह लेता है और उसे हर प्रकार से अत्यधिक उत्तेजित करके योनि में लिंग प्रवेश करता है और घर्षण के धक्कों से आंधी-तूफान ला देता है। इसीलिए इसे प्रचंड वेग कहते हैं।

कामवासना के आवेग के आधार पर, पुरुषों की भांति स्त्रियों में भी मैथुन तीन प्रकार का माना गया है—(१) मन्दवेग, (२) मध्यवेग, (३) प्रचंडवेग।

१. मन्दवेग वाली स्त्री चुम्बन, आलिंगन, स्तन-स्पर्श, मधुर शब्द आदि में ही आनन्द मानती है। उसका संभोग ऐसा होता है जैसे फूलों की खुशबू सूंघना। यह ख्याल रखते हुए कि उसकी पंखुड़ी को ज़रा भी खरोंच न आए, संभोग किया जाए, या न किया जाए, मन्द वेग वाली स्त्री सन्तुष्ट रहती है। उसे हल्की-हल्की काम-क्रीड़ा में ही अधिक आनन्द की अनुभूति होती है। यदि संभोग किया जाए, तो पुरुष ही चेष्टा करता है।

२. मध्यवेग वाली स्त्री चुम्बन, आलिंगन के साथ स्तनों का मसलना व मर्दन भी चाहती है। संभोग में जितना भाग पुरुष लेता है, उसके बराबर वह भी बदले में चेष्टाएं करती है।

३. प्रचण्डवेग वाली स्त्री बाढ़वाली नदी के समान होती है। वह कामवती संभोग में अपने शरीर के अंग-प्रत्यंग को कुचल देना चाहती है। वह पुरुष से बढ़-चढ़कर काम-चेष्टाएं करती है, पुरुष के धक्के के जवाब में अधिक जोरदार धक्का उसका होता है।

जिस प्रकार आवेग के आधार पर संभोग के भेद किए गए हैं, उसी प्रकार संभोग में लगने वाले समय के आधार पर भी मैथुन के तीन भेद किए गए हैं—(१) शीघ्ररत, (२) मध्यरत और (३) चिर रत।

१. शीघ्ररत—जब तक वीर्य स्खलन न हो जाए, तब तक पुरुष संभोग में लीन रहता है। वीर्य स्खलित होने पर वह शिथिल हो जाता है। शीघ्ररत वाले पुरुष का वीर्य शीघ्र स्खलित हो जाता है।

२. मध्यरत—मध्यरत वाला पुरुष संभोग में मध्यम समय लगाता है।

चिर रत—यदि स्त्री-पुरुष दोनों पूर्णतया स्वस्थ हों, पूर्णतया अनुरक्त हों, पूरी तरह देर तक काम-क्रीड़ा करने के बाद मैथुन में लगे हों, पुरुष में वीर्य को धारण करने की (पतन से रोकने की) शक्ति हो तो वे जितनी देर चाहें, संभोग के चरम ग्रानन्द की ग्रनुभूति प्राप्त कर सकते हैं।

ग्राचार्य वात्स्यायन ने संभोग के विभिन्न स्तर इस प्रकार बनाए हैं—

रस

रति

भाव

राग

वेग

समाप्ति या चरम सीमा।

संभोग के ग्रानन्द में स्त्री का योगदान

तन्त्र-विद्या में स्त्री को बराबर का दर्जा दिया गया है। तन्त्र हमें बताता है कि एक-दूसरे के सहयोग से ही स्त्री ग्रौर पुरुष को पूर्ण ग्रानन्द की प्राप्ति होती है; ग्रर्थात् तन्त्र के लिए संभोग-चेष्टा से रहित कर्त्तव्य मात्र नहीं है। यदि स्त्री चेष्टा नहीं करती तो ग्रक्सर पुरुष को निराशा होती है। प्रेम ग्रौर संभोग सुखदायी होना चाहिए ग्रौर इसके लिए स्त्री को भी बराबर सक्रिय होना चाहिए। संभोग-सुख के लिए स्त्री-पुरुष की चेष्टाग्रों का ग्रापस में तालमेल ग्रावश्यक है, क्योंकि दोनों का काम एक-दूसरे को संतुष्ट करना है। यदि दोनों सक्रिय न हों, खासकर स्त्री प्रेम-क्रीड़ा ग्रौर संभोग में निश्चेष्ट-निष्क्रिय रहे तो इसका ग्रंतिम परिणाम यह भी हो सकता है कि स्त्री 'ठंडी' हो जाए (उसे कामोत्तेजना होनी ही बन्द हो जाए) ग्रौर पुरुष नपुंसक हो जाए। कामवासना की तृप्ति में तालमेल का बहुत महत्त्व है। कामवासना सम्बन्धी ग्रसंतोष प्रेम की जड़ें काटने वाला सिद्ध होता है। ग्रधिकतर पुरुषों

के असन्तोष का कारण यह होता है कि स्त्रियां अपनी ओर से काम-चेष्टाएं (हरकतें) नहीं करतीं। तन्त्र-विद्या इस अज्ञान को दूर कर देती है। उसमें स्त्री के लिए यह आवश्यक बताया गया है कि वह पुरुष की प्रत्येक चेष्टा का प्रत्युत्तर दे—जवाबी कार्यवाही करे। उसे चाहिए कि पुरुष की हर एक चेष्टा के उत्तर में अपनी ओर से चेष्टा करे और प्रेम, काम-क्रीड़ा तथा संभोग का सारा उत्तरदायित्व पुरुष पर ही न डाल दे। अपने को निर्जीव पुतले की भांति पुरुष के सामने निर्वसन डालकर ही अपने कर्त्तव्य की इति-श्री न समझ ले। जो स्त्री निष्क्रिय रहती है, पुरुष जो कुछ करे, उसे करने देती है, स्वयं अपनी तरफ से कुछ नहीं करती—वह संभोग के आनन्द को अपूर्ण बनाती है। यदि स्त्री काम-क्रीड़ा, प्रेम-प्रदर्शन तथा संभोग में कोई उत्साह न दिखाए, तो सारा काम अधूरा रह जाता है। यदि स्त्री निष्क्रिय पड़ी रहती है, हरकत नहीं करती, वह संभोग में अपना चाव नहीं प्रकट करती—ठंडी बनी रहती है और संभोग की चरम सीमा पर पहुंचकर भी वह अपनी तरफ से उसमें भाग नहीं लेती, तो पुरुष के लिए आनन्ददायी नहीं हो सकती। इसमें पुरुष के अभिमान को भी चोट पहुंचती है, क्योंकि जैसे वह प्रेम का प्रतिदान चाहता है, वैसे ही काम-चेष्टाओं का भी प्रतिदान चाहता है। कई बार निष्क्रिय स्त्री के साथ संभोग करने पर पुरुष समझने लगता है कि उसमें पुंस्त्व (मर्दुमी) सम्बन्धी कुछ कमी है कि वह स्त्री को संभोग के लिए पूरी तरह उत्तेजित नहीं कर सका। जब पुरुष स्त्री को सचेष्ट कर सकता है, उसकी कामवासना को पूरी तरह भड़का सकता है, उत्तेजित कर सकता है, काम-क्रीड़ा का जवाब काम-क्रीड़ा से पाता है, संभोग में स्त्री को बराबर सक्रिय पाता है, तो उसका मैथुन सम्बन्धी आत्म-विश्वास जागता है और स्त्री को सच्चा यौन-साथी समझने लगता है। तब उसे संभोग में पूर्ण आनन्द की प्राप्ति होती है और संगम सच्चे अर्थों में 'संगम' बनता है। जो स्त्री सक्रिय और सचेष्ट यौन-साथी की तरह काम-क्रीड़ा और संभोग-क्रिया में सब प्रकार से पहल करती है, वह संभोग आनन्द की चरम सीमा तक ले जाने में सफल होती है। तब उन दोनों का मैथुन पूर्ण सन्तुष्टि प्रदान

करता है। रति-रंग में अनाड़ी स्त्री अपने प्रियतम को खो बैठती है। एक विद्वान ने कहा है कि अठानवें प्रतिशत पुरुष नामर्द नहीं होते यदि उनकी साथी स्त्रियां काम-क्रीड़ा और संभोग में निपुण हों। जो स्त्री पुरुष को प्यार से, छेड़छाड़ से उत्तजित करती है, काम-क्रीड़ा में बढ़-चढ़कर भाग लेती है, संभोग में बराबर की भागीदार बनकर अनेक प्रकार की चेष्टाओं द्वारा पुरुष को मैथन की चरम सीमा तक ले जाती है, वह मैथुन को पूर्णतः आनन्ददायी बनाने में सफल होती है। सक्रिय रति-साथी को पाकर पुरुष को बहुत प्रसन्नता होती है। स्त्री की जवाबी कार्यवाही से, हरकतों से पुरुषों को अधिक सुख मिलता है—स्त्री को यह बात नहीं भूलनी चाहिए।

इसके विपरीत यदि स्त्री संभोग को लगातार टालती रहती है, तो पुरुष का 'अहं' जागता है और वह चिढ़ जाता है। जो स्त्री काम-क्रीड़ा और संभोग की इच्छा प्रकट करती है, जो पति की छेड़छाड़ का जवाब छेड़छाड़ से देती है, जो काम-क्रीड़ा में बराबर सक्रिय रहती है और संभोग के समय पुरुष की हरचेष्टा का उत्तर अपनी चेष्टा से देती है, वह पुरुष के हृदय में हर समय बसने लगती है। जो स्त्रियां मैथुन-क्रिया में चरम सीमा का आनन्द नहीं प्राप्त करतीं, उसका ज्यादातर यही कारण होता है कि वे अपनी तरफ से हरकत नहीं करतीं। संपूर्ण संभोग का यही अर्थ है कि पुरुष और स्त्री के शरीर का अंग-अंग, अणु-अणु थिरक उठे। स्त्री के ठंडी होने का कारण शारीरिक इतना नहीं जितना मानसिक है। जो स्त्री मैथुन को अपवित्र या गंदी चेष्टा समझती है, जो यौन-अंगों के प्रयोग को बुरी बात मानती है, जिसके मन में अपने अंग पुरुष के सामने न खोलने की गांठ-सी पड़ जाती है, उसे तन्त्र-विद्या का उपदेश है कि अपने विचारों को बदल डाले। पुरुष को भी चाहिए कि स्त्री के मन से लाज, शर्म, लज्जा, संकोच, भय दूर करके उसे काम-क्रीड़ा तथा मैथुन-क्रिया की पूरी-पूरी शिक्षा दे। कुछ ही दिन में वह देखेगा कि स्त्री 'ठंडी' कैसे रह सकती है? लेकिन जो पुरुष समझता है कि मैथुन में स्त्री को नहीं, उसे ही सुख मिलता है, वह स्त्री को मैथुन में कुशल बनाने की चेष्टा कैसे कर सकता है? तान्त्रिक मत में इसीलिए लिंग-पूजन से भी

पूर्व योनि-पूजन की महत्ता है। स्त्री को अपने यौन-अंगों में बल, सामर्थ्य, सहनशक्ति, लचक और मांसपेशियों आदि के संकोचन की विधि सीखनी चाहिए। काम-क्रीड़ा तथा संभोग में नस-नाड़ियों और मांसपेशियों की चेष्टाएं बहुत जरूरी होती हैं। स्त्रियों को अपना अनाडीपन दूर करना चाहिए। उन्हें अपने को 'घटिया मानव' या 'दूसरे दर्जे का मानव' समझना छोड़ देना चाहिए। तन्त्र-विद्या की यही शिक्षा है। तभी तो तन्त्रमार्गी उसे शक्ति मानकर उसकी पूजा करते हैं। अपना अनाड़ीपन दूर करके ही स्त्री तन्त्रमार्गी की सच्ची साथिन बन सकती है। जो स्त्री संभोग में, अपनी मांसपेशियों को नियन्त्रित करके अपनी इच्छानुसार चला सकती है, वह अपने साथी तन्त्रसाधक को चरमसीमा के आनन्द तक ले जा सकती है। काम-चेष्टाओं में भाग लेना ही नहीं, पूरी तरह भाग लेना आवश्यक है। उस समय चित्त से कुण्ठा, सन्देह, भय आदि भाव सर्वथा दूर हो जाने चाहिए। किसी भी काम में सफलता के लिए मन की तैयारी आवश्यक है। तन्त्र-विद्या में सफल होने के लिए मन की तैयारी भी आवश्यक है। यदि चरम-सीमा का संभोग-सुख न मिले तो सारी चेष्टाएं व्यर्थ हैं।

चरम सीमा के बाद

संभोग की चरम सीमा (पूर्ण मैथुन) के अनुसार, पुरुष में वीर्य-स्खलन के परिणामस्वरूप प्रबल मांमपेशी संकुचन तथा नस-नाड़ी संकुचन होते हैं। इसी प्रकार स्त्री के गर्भाशय व योनि आदि में मांसपेशी तथा नस-नाडी का संकुचन होता है। कई व्यक्तियों में ये संकुचन कम प्रकट तथा कई व्यक्तियों में अधिक प्रकट होते हैं किन्तु होते सबमें हैं। पुरुष तथा स्त्री—दोनों में ही स्खलन के ठीक बाद एक प्रकार की शान्ति, तृप्ति तथा शिथिलता आती है। वीर्य-स्रवण के फौरन बाद ही पुरुष को अपना लिंग योनि से बाहर नहीं निकाल लेना चाहिए अपितु स्त्री को चाहिए कि योनि को सिकोड़ कर लिंग को धीरे से दबाकर उसे योनि के अन्दर ही थोड़ी देर रोककर रखे। इससे यह लाभ होता है कि दोनों में अभिन्नता और तल्लीनता बढ़ती है और दोनों का रति-सम्बन्ध दृढ़ होता है।

तन्त्र-विद्या में काम और संभोग

तन्त्र-विद्या में कामवासना और संभोग को उसी प्रकार मन की तथा यौनांगों की स्वाभाविक भूख माना जाता है, जैसे पेट को भोजन की भूख। जैसे मनुष्य गान और नृत्य से मन को प्रसन्न करता है, वैसे ही काम की नाना क्रीड़ाओं और संभोग के विविध विलासों से मन को प्रसन्न करने की इच्छा स्वाभाविक है—प्राकृतिक है—स्वस्थ कामना है। यदि प्रेम-क्रीड़ा तथा मैथुन-क्रिया को ठीक ढंग से किया जाए, तो जीवन को आनन्द से परिपूर्ण बनाया जा सकता है। संभोग तो पशु भी करते हैं; परन्तु मानव में प्रजनन केवल शरीर की तुष्टि के लिए ही नहीं, बल्कि मानसिक और आत्मिक तुष्टि के लिए होता है, अतः इसमें प्रेम और प्रणय जितना घनिष्ठ और प्रगाढ़ होगा, आनन्द भी अधिक होगा। तन्त्र-विद्या केवल यही नहीं बताती कि जीवन में संभोग मना नहीं है, बल्कि इसे सभी अच्छे कार्यों की तरह एक अच्छा कार्य मानती है और इसके अभाव में जीवन को अपूर्ण मानती है। प्रेम-क्रीड़ा तथा संभोग से न केवल मानव-जीवन का पूर्ण विकास होता है, अपितु उसकी शारीरिक, मानसिक तथा भावनात्मक उन्नति होती है। इससे जीवन सक्रिय, सजीव तथा मस्ती-भरा बनता है। तन्त्र-मार्ग में शरीर के हर एक भाग को प्रेम की परिधि में माना जाता है, न किसीको छोड़ने योग्य माना जाता है और न किसीको अछूत। प्रेम, प्रेम-क्रीड़ा तथा संभोग के दौरान शरीर के जिस भी भाग से आनन्द प्राप्त हो सके, अधिक-से-अधिक प्राप्त करना चाहिए। प्रबल संभोग-शक्ति और उसे प्रकट करना सहज, स्वाभाविक, प्राकृतिक है, बल्कि यह शरीर और मन की पूर्ण स्वस्थता का चिह्न है। मानव के जीवन-विकास की यह नींव है। स्त्री और पुरुष खुल्लमखुल्ला प्रेम-क्रीड़ा और संभोग करें और इसमें लाज, संकोच, भय को बाधा न बनने दें, तभी प्रेम और संभोग का पुष्प खिल सकता है। अपनी इच्छा पर कोई रोक लगाने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इससे मन में कुण्ठा आती है और व्यक्ति का जीवन-विकास भली प्रकार नहीं हो पाता। प्रेम, काम-

चेष्टा व मैथुन को अधिक-से-अधिक आनन्ददायी बनाकर ही जीवन से सुस्ती, मुर्दनी, उदासी और अस्वस्थता को दूर किया जा सकता है और तभी जीवन सुखदायी हो सकता है। प्रेम-क्रीड़ा तथा संभोग-सुख के मार्ग में आनेवाले सभी नियम (मास में एक बार का नियम आदि) हानिकर हैं। तन्त्र-विद्या साधन पर बल देती है और उसमें यह ज्ञान प्रदान किया गया है कि अपने जीवन को अनेक प्रकार से नियमित तथा नियंत्रित करके, अपनी काम-वासना की तुष्टि के लिए उचित समय, स्थान आदि की व्यवस्था की जा सकती है और इसे कुकृत्य के रूप में न लेकर 'उत्सव' के रूप में लेना चाहिए, और अपने जीवन का सर्वतोमुखी विकास करना चाहिए। तन्त्र-विद्या ने तो कामवासना की विधि-वत् तथा तान्त्रिक पद्धति से की गई संतुष्टि को पूजा का रूप दे दिया है, जिसमें संभोग से समाधि तक पहुंचने की व्यवस्था की गई है।

१२

संज्ञाशून्यता की स्थिति में संभोग

प्रेरणा, हार्दिक जिज्ञासा और अभ्यास में रुचि जिस व्यक्ति में हो, उसे ही तन्त्र के इस गुप्त रहस्य में प्रवेश करने का प्रयत्न करना चाहिए। यह मानसिक शक्ति का अनन्त स्रोत है। शरीर, मन, बुद्धि और चित्त—ये सब मनुष्यों के एक समान विकसित नहीं होते। मस्तिष्क तो सबके पास होता है, परन्तु उसकी शक्ति सब व्यक्तियों में एक समान नहीं होती। तन्त्र-विद्या द्वारा शरीर, मन, बुद्धि और चित्त को अधिक सूक्ष्म, तीक्ष्ण तथा शक्तिशाली बनाया जा सकता है। इनके सूक्ष्म होने पर मानसिक शक्ति बढ़ जाती है और अद्भुत संकल्प-शक्ति उत्पन्न होती है।

संकल्प-शक्ति बढ़ने पर मनुष्य में सम्मोहन-शक्ति आ जाती है। इस शक्ति के प्राप्त होने पर, संभोग को पूर्ण आनन्दमय तथा देर तक जारी रहनेवाला बनाया जा सकता है। तन्त्र-मार्गी संभोग को एक खेल नहीं मानते, बल्कि वे इसे एक साधना मानते हैं। इस 'पूर्ण आनन्द' की सिद्धि के लिए वे प्रयत्न करते हैं। अविकसित या अपूर्ण विकसित मस्तिष्क वाले भी तन्त्र-मार्ग पर चलते हुए अपने मस्तिष्क की शक्तियों को पूर्णतया विकसित कर सकते हैं। तन्त्र-विद्या में मन को मन से पकड़ने की विद्या सिखलाई जाती है। यह तो सभी मानते हैं कि मन की स्वाभाविक शक्ति को विशेष प्रयोजन के लिए उपयोग में लाया जा सकता है; पर कैसे ?—इसका उत्तर केवल तन्त्र-विद्या के पास है। यह अद्भुत और रहस्यमयी विद्या है। परन्तु आज त्वरा का युग है—एक दौड़-सी लगी हुई है। तन्त्र-साधना के लिए किसीके पास समय नहीं है। संभोग को चिरस्थायी (देर तक टिकने वाला) बनाने के

लिए तन्त्र के समान और कोई मार्ग नहीं है।

आज की दौड़ के कारण सौ में से बारह पुरुष ऐसे होते हैं जो तुरन्त स्खलित हो जाते हैं। सौ में सोलह ऐसे होते हैं जो दो मिनट तक वीर्य को रोककर रख सकते हैं। चालीस प्रतिशत ऐसे होते हैं जो तीन मिनट में स्खलित हो जाते हैं। तेंतालीस प्रतिशत पुरुष ऐसे होते हैं जो पांच से पंद्रह मिनट के अन्दर स्खलित हो जाते हैं। शेष सत्रह प्रतिशत पन्द्रह मिनट से अधिक वीर्य को रोके रख सकते हैं। उनमें से कुछ ही ऐसे हैं, जो अधिक देर तक (वीर्य-निरोध) स्तम्भन किए रखने में सफल हो सकते हैं।

इस दुर्बलता को दूर करने का उपाय केवल तन्त्र-विद्या के पास है। तन्त्र-विद्या के अनुसार मनुष्य अपनी ओजशक्ति को जगा सकता है। इस शक्ति को जगाकर वह मन के विकल्प, अपराध-भावना, हीन भावना, हड़बड़ी और निराशा को समाप्त कर सकता है। तन्त्र के अनुसार साधना करने पर, मनुष्य की सुषुम्ना नाड़ी में इस प्रकार शक्ति का विस्फोट होता है, जिससे मनुष्य अपने यौन-अंगों को वश में कर सकता है—उनको अपनी आज्ञा के अनुसार चला सकता है।

संभोग आखिर क्या है ? पुरुष में—यौन इन्द्रियों के दायरे में उत्तेजना पहुंचने पर स्नायुओं में एक प्रतिक्रिया होती है, जो रीढ़ के निचले भाग में पहुंच जाती है। यहां पर परिचालन-केन्द्रों (चक्रों) के साथ इसका संयोग स्थापित हो जाता है। और वहां से भेजी हुई स्नायु-उत्तेजनाओं के कारण अण्डकोष के इर्द-गिर्द अण्डग्रन्थि संकुचित हो जाती है जिससे लिंग उत्तेजित हो जाता है।

स्त्री में—यौन इन्द्रियों के क्षेत्र में उत्तेजना पहुंचने पर स्नायुओं में एक प्रतिक्रिया होती है जो रीढ़ की हड्डी के निचले भाग में पहुंच जाती है। यहां पर परिचालन-केन्द्रों (चक्रों) के साथ इनका संयोग स्थापित हो जाता है और वहां से भेजी हुई स्नायु उत्तेजनाओं के कारण गर्भाशय की मांसपेशियां सिकुड़ जाती हैं, जिससे योनि उत्तेजित हो जाती है।

अब समस्या इतनी ही है कि इस उत्तेजना को देर तक टिकने वाली कैसे बनाया जाए ? तन्त्र-विद्या में इसका उत्तर है संज्ञा-

शून्यता की स्थिति में संभोग। यह बहुत ही सूक्ष्म विषय है और पूरी तरह सावधान चित्त से इसे समझने की आवश्यकता है। शीघ्रपतन के दोष को दवाइयों के द्वारा कभी दूर नहीं किया जा सकता। दवाइयों से सुधार के बदले विषैले तत्व शरीर में भर जाते हैं, जिनसे बाद में शरीर की बहुत हानि होती है। तन्त्र-विद्या तो व्यक्ति में आत्मविश्वास, निर्भयता, स्वतन्त्र-बुद्धि, महत्त्वाकांक्षा और एक लक्ष्य जगाकर उसे इस साधना में सफल होने का मार्ग दिखाती है। जिनकी संकल्पशक्ति दुर्बल है और आत्मविश्वास क्षीण है, प्रायः ऐसे लोग ही देर तक संभोग में लगे रहने में असफल होते हैं। तन्त्र-मार्ग पर चलकर उन्हें अपूर्व आत्मविश्वास और अदम्य संकल्पशक्ति प्राप्त होती है। यह ताकत कहीं बाहर से नहीं आती, अपने अन्दर स्थित शक्ति को ही जगाया जाता है।

साबर तन्त्र म लिखा है, "मन की प्रकृति सदैव किसी-न-किसी कार्य में लगे रहने की है। यह कभी स्थिर नहीं रहता। क्षण-क्षण में दौड़ता रहता है। अभी एक काम में लगा हुआ है, तो उसी समय दूसरा कार्य इसको सूझा और उस पहले काम को छोड़कर, बल्कि फेंककर वह दूसरे काम में लगा।"

यही बात वीर्य के शीघ्र पतन में होती है। बड़े चाव से पुरुष संभोग में लगता है, पर चंचल मन इस काम को फेंककर नौकरी, व्यापार, मकान, भय, चिन्ता, धन, लोभ आदि का विचार आते ही जल्दी से वीर्य को फेंककर और खेल खत्म करके दूसरे काम की ओर लगता है। साबर तन्त्र में आगे लिखा है—

"जिस प्रकार सर्प और दुमुहिए एक स्थान पर कभी नहीं रहते, उसी प्रकार मन भी एक लक्ष्य पर कभी नहीं ठहरता। यदि मन एक लक्ष्य पर ठहर जाए तो फिर उनको इधर-उधर घूमने और भागने की आवश्यकता नहीं रहती। इसीलिए विद्वानों ने मन को 'चंचलता' की उपाधि दी है।···मन ही तो मनुष्य के शरीर में सब इन्द्रियों का राजा है और वही अपनी इच्छानुसार इन्द्रियों से सदैव कार्य लेता या कराता है। कभी-कभी विचारहीन होकर वह ऐसा कार्य कर बैठता है जिसके कारण आत्मा को कष्ट होता है।···इन्द्रियों पर शासनकर्ता मन है।

सुख और दुःख का अनुभव केवल मन को हुआ करता है। इसीलिए पूर्वजन मन पर अपना आधिपत्य जमाया करते थे। संभोग में सबसे श्रेष्ठ, मन पर अधिकार करना ही उत्तम साधन बताया गया है और सब प्रयोगों में मन को एकाग्र करना पड़ता है। चित्त की चंचलता को रोकने के लिए अनेक विधान तन्त्र-शास्त्रों में आए हैं। चित्त की चंचलता घर में नहीं रुक सकती, क्योंकि घर में हर समय मनुष्यों की भीड़भाड़ रहती है। यहां तक कि रात को सोते समय भी किसी बच्चे के रोने का शब्द कानों में पड़ जाता है, जिससे मन उछटकर रोने के शब्द की ओर आकर्षित हो जाता है। इसलिए चित्त की चंचलता रोकने के निमित्त सबसे अच्छा स्थान निर्जन वन होता है। उसमें भी ऐसे स्थान को ढूंढ़ा जाए जहां पर किसी भी प्रकार का शब्द कानों में न आए। ऐसे स्थान पर कोई आश्रम, मंदिर, धर्मशाला, सराय (होटल) आदि हो। जो स्थान चित्त में स्वयं प्रफुल्लता पैदा करनेवाला हो वहां अद्‌भुत दृश्य आंखों के सामने घूमने लगेगा। ऐसे स्थान पर अपने मन को वश में करने की साधना करनी चाहिए।"

मन को वश में करके ही अपनी यौन-इन्द्रियों को वशवर्ती बनाया जा सकता है। सबसे पहला काम है मन को बांधना, इसकी चंचलता समाप्त करना, उसे इधर-उधर भटकने से रोकना और अपने लक्ष्य पर 'कील' देना।

जितना अच्छा घोड़ा हो, उतनी ही बढ़िया लगाम होनी चाहिए। इसी प्रकार जितने शक्तिशाली अंग हों, उतनी ही मन की दृढ़ता चाहिए ताकि इन्द्रियों को काबू में रखा जा सके। जो बात अन्य इन्द्रियों पर लागू होती है, वही बात यौन-इन्द्रियों पर लागू होती है।

हाथी पर बैठा महावत लोहे के छोटे से अंकुश को उसकी गर्दन पर चुभोता है। इससे महावत जिधर चाहता है, उधर ही हाथी को चलाता है। बालिश्त-भर का अंकुश भारी-भरकम हाथी को वश में कर लेता है। इसी तरह मनुष्य के मन का दृढ़-संकल्प इन्द्रियों को वश में कर लेता है। इन्द्रियों को वश में करके मनुष्य तेजस्वी बन जाता है। इन्द्रियां जिसके वश में नहीं, वह

निस्तेज हो जाता है। वह दुर्बल हो जाता है। इन्द्रियां आराम चाहती हैं। संभोग जैसे प्रिय विषय में भी वे जल्दी काम खत्म करके आराम चाहती हैं। जो व्यक्ति इनपर अंकुश रखकर इन्हें काम में लगाता है, वही पूर्ण संभोग की स्थिति और आनन्द की चरम सीमा प्राप्त करने में सफल होता है।

यदि आप बूढ़े नहीं हो गए, तो आप स्तम्भन की शक्ति प्राप्त कर सकते हैं। बूढ़ा कौन है? बूढ़ा वह है जो कहे, "मैं अब आगे कोई नया काम नहीं सीख सकता।" जो हमें शान या काम, नयी विधि सीखना चाहता है, वह हमेशा जवान है, चाहे उसकी उम्र साठ साल ही क्यों न हो गई हो। जो मन को इधर-उधर भागने देता है, एक जगह टिकाकर नहीं रख सकता, वह दुर्बल हो जाता है। वह अपना तेज गंवा बैठता है। मन चंचल होकर कभी इस इच्छा में, कभी उस इच्छा में दौड़ता है। दुर्बल और चंचल मन मनुष्य को जगह-जगह भटकाता है। वह उसे लक्ष्यवेध नहीं करने देता—वह उसे ठीक निशाना नहीं लगाने देता।

वेद में एक मंत्र आया है—"हे ईश्वर! हमारी महत्त्वाकांक्षा को खूब दीप्त कर।" महत्त्वाकांक्षा का मोती निष्ठुरता की सीपी में रहता है। अपने मन को ढीला मत छोड़िए, उसके साथ निष्ठुरता से पेश आइए। बस, यही बात है। आपको जो कुछ चाहिए, उसका मोल दीजिए। आपको पूर्ण संभोग-सुख प्राप्त करना है, तो इसके साधन एकत्र मत कीजिए, गुरु ढूंढ़िए, साधना कीजिए, लगातार मन को स्थिर करने का अभ्यास कीजिए। आप अपने लक्ष्य को प्राप्त करना चाहते हैं, तो उसके लिए मूल्य दीजिए, अर्थात् त्याग कीजिए। समय दीजिए, मेहनत कीजिए, ध्यान दीजिए, पैसा खर्च कीजिए, नम्रता खर्च कीजिए, तन्त्र साथी की विनती कीजिए, उसकी सहायता लीजिए। उसे सफलता की विधियां बताइए और पूर्ण संभोग के आनन्द की अच्छाइयां बताइए। पूर्ण संभोग में सफलता के लिए दृढ़ संकल्प की, दृढ़ इच्छा-शक्ति की, पक्के इरादे की जरूरत है। जितना महत्त्वपूर्ण काम होता है, त्याग भी उतना ही अधिक करना पड़ता है। यदि काम पूरा नहीं होता, तो इसका कारण त्याग की कमी होती है। जहां त्याग पूरा

हुआ, वहां उद्देश्य या मकसद भी पूरा हो जाता है।

बहुत-से लोग संभोग के पूर्ण आनन्द को प्राप्त करने में केवल इसलिए असफल हो जाते हैं कि वे आलसी होते हैं। श्रम, कर्म, प्रयत्न, उत्साह और साहस—ये हैं वे गुण जिनसे सफलता प्राप्त की जाती है। मनुष्य-शरीर में आलस्य सबसे बड़ा शत्रु है। और तन्त्र-विद्या आलस्य की सबसे बड़ी शत्रु है। यह अंग-अंग को, नहीं-नहीं शरीर के अणु-अणु को चैतन्य, जागृत और सजीव कर देती है। आलसी सोचता है, "मैं क्यों प्रयत्न करूं? क्यों थकूं? क्यों कष्ट उठाऊं? आराम का मज़ा क्यों न लूं?" आसानी और आराम की इच्छा भी हर साधना में भारी बाधा है। कई बार मन का संशय भी संभोग की पूर्णता में बाधक बनता है। मन में संशय के कारण ही हमारे हाथ से वह आनन्द निकल जाता है, जिसे हम प्राप्त कर सकते थे।

अब आगे की पंक्तियों को और भी ध्यान से पढ़िए और सूक्ष्म बुद्धि से इनका भाव समझने का प्रयत्न कीजिए।

मन को इस प्रकार प्रशिक्षित कीजिए कि जैसे आप चाहते हैं, मन वैसी ही प्रतिक्रिया करे। अपने अन्दर संकल्प (दृढ़ निश्चय) की शक्ति पैदा कीजिए। इस संकल्प-शक्ति को दुर्बल न होने दीजिए। आत्मविश्वास को क्षीण न होने दीजिए।

इसका एक साधन है—चेतन निद्रा। चेतन निद्रा में मनुष्य बाहर से जागा रहता है, परन्तु अन्दर से सोया हुआ होता है। वह संभोग के अंगों के अलावा अन्य इन्द्रियों का जगत् से सम्बन्ध-विच्छेद कर देता है—इन्द्रियों को अन्य सभी विषयों से हटा लेता है। वह ज़रा-ज़रा तन्द्रा की अवस्था में हो जाता है। उसके नयन आधे मुंदे रहते हैं और आधे खुले। उसे न अपने अन्दर का पता रहता है, न बाहर का। दुनिया की दृष्टि से वह बेहोश रहता है, परन्तु अन्दर से वह जागा रहता है और स्वप्न तथा संस्कारों का दर्शन करता है। बाहर की नींद और भीतर की जागृति—यह है समाधि की अवस्था। योगमार्ग में इसे 'सहज समाधि' की स्थिति कहते हैं। इस स्थिति में तन्त्र-साधक अपनी साथिन के यौन-अंगों और अपने यौन-अंगों को एक-दूसरे में ओत-प्रोत रहने देता है, परन्तु हाथ से

उसे छूता नहीं, नाक से गंध सूंघता नहीं, आंखों से उसे देखता नहीं, मुख से कोई शब्द नहीं कहता, स्थिर रहता है—हिलता-डुलता नहीं और इस स्थिति में वह अपनी इष्टदेवी की मूर्ति का ध्यान करता है—एकाग्रचित्त से उसीके ध्यान में लीन हो जाता है। सूफी लोग इस स्थिति को 'हाल' कहते हैं। इस स्थिति में मनुष्य यह नहीं समझता कि शक्ति का स्वामी 'मैं' हूं, बल्कि यह समझता है कि परम शक्ति की इच्छा का मेरे मन शरीर और इन्द्रियों पर अधिकार है। साधक केवल बुद्धि से ऐसा नहीं समझता, बल्कि साधना द्वारा वह इस सत्य का अनुभव करता है—वह अपने को 'देशकालातीत' अनुभव करता है। इस अवस्था में न चेष्टा रहती है न निश्चेष्टता, न प्रकाश रहता है न अन्धकार, न पंचतत्त्व रहते हैं न सृष्टि, न नकारात्मक स्थिति होती है न सकारात्मक। शेष रहता है—शिव-शक्ति का संगम—अद्वैत—अर्धनारीश्वर रूप। इसे पश्चिमी विद्वान सेल्फ हिप्नोटिज्म कहते हैं।

शरीर को चेतन निद्रा और त्राटक द्वारा एकदम कठोर, जड़वत् मजबूत बनाया जा सकता है। तंत्र के आचार्य अंगों को या यौन-अंगों को—जैसी भी आवश्यकता हो, जड़वत्, कठोर तथा मजबूत बनाने की विधि सिखला देते हैं। इसमें मन को आदेश दिया जाता है—"अब तुम शरीर को कड़ा करो, और कड़ा, और कड़ा, और कड़ा। हां,ठीक। बदन को कड़ा करते जाओ। लकड़ी की तरह। लोहे की तरह। एकदम लोहे की तरह। शरीर को कड़ा बना लो। हां, और कड़ा, थोड़ा और कड़ा। कड़ा, एकदम कड़ा।"

इसके उपरान्त मन को आदेश दिया जाता है, "अब शरीर को शिथिल करो, धीरे-धीरे शिथिल करो। शिथिल करते जाओ। अपनी मांसपेशियां शिथिल करो, और शिथिल करो। और शिथिल करो।" अब तुम्हें जागना है। एकदम स्वाभाविक तरीके से।

जागने पर तुम्हें हल्कापन अनुभव होगा, स्फूर्ति की अनुभूति होगी। शरीर पूर्णतया स्वस्थ दशा में होगा। अधिक स्वस्थ, अधिक स्फूर्ति, अधिक आनन्दमय।

तन्त्र और उपासना

देवी कवच

शरीर के भीतरी-बाहरी प्रत्येक अंग, मन, बुद्धि आदि की रक्षा के लिए—निर्भय यात्रा के लिए—परम ऐश्वर्य, धन-लाभ के लिए—युद्ध में विजय के लिए—यश, कीर्ति तथा शोभा के लिए देवी कवच का पाठ करना चाहिए।

त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्द्धिनि।
प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता ॥१॥

[हे देवी! तुम्हारी ओर देखना भी कठिन। शत्रुओं का भय बढ़ानेवाली जगदम्बे! मेरी रक्षा करो। पूर्व दिशा में इन्द्र की शक्ति मेरी रक्षा करे। अग्निकोण (आग्नेय दिशा) में अग्नि देवता मेरी रक्षा करे।]

दक्षिणेऽवतु वाराही नैऋत्यां खड्गधारिणी।
प्रातीच्यां वारुणी रक्षेत् वायव्यां मृगवाहिनी ॥२॥

[दक्षिण दिशा में वाराही तथा नैऋत्य कोण में खड्गधारिणी मेरी रक्षा करे। पश्चिम दिशा में वारुणी और वायव्य कोण में मृग पर सवारी करनेवाली देवी मेरी रक्षा करे।]

उदीच्यां पातु कौमारी ऐशान्यां शूलधारिणी।
ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेत् अधस्तात् वैष्णवी तथा ॥३॥

[उत्तर दिशा में कौमारी तथा ईशान कोण में शूलधारिणी मेरी रक्षा करे। ब्रह्माणि! ऊपर की ओर से मेरी रक्षा करो और

वैष्णवी देवी नीचे (पृथ्वी) की ओर से मेरी रक्षा करे।]

एवं दश दिशो रक्षेत् चामुण्डा शववाहना।
जया मे चाग्रतः पातु विजय पातु पृष्ठतः ॥४॥

[इस प्रकार शव (लाश) की सवारी करने वाली चामुण्डा दसों दिशाओं में मेरी रक्षा करे। जया आगे से और विजया पीछे से मेरी रक्षा करे।]

अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता।
शिखामुद्योतिनी रक्षेत्, उमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता ॥५॥

[अजिता मेरे बायें भाग में और अपराजित दायें भाग में रक्षा करे। उद्योतिनी मेरी शिखा की रक्षा करे। उमा मेरे मस्तक पर विराजमान होकरमेरी रक्षा करे।]

मालाधारी ललाटे च भ्रुवौ रक्षेद् यशस्विनी।
त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये यमघण्टा च नासिके ॥६॥

[मालाधारी मेरे ललाट की रक्षा करे, यशस्विनी देवी मेरी भौंहों की रक्षा करे। भौंहों के बीच के भाग (तीसरे नेत्र) की त्रिनेत्रा रक्षा करे और यमघण्टा देवी नासिका की रक्षा करे।]

शङ्खिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वारवासिनी।
कपोलौ कालिका रक्षेत् कर्णमूले तु शाङ्करी ॥७॥

[शङ्खिनी दोनों आंखों के मध्यभाग में रक्षा करे, द्वारवासिनी देवी दोनों कानों में रक्षा करे। दोनों कपोलों (गालों) की कालिका रक्षा करे और शाङ्करी दोनों कर्णमूलों की रक्षा करे।]

नासिकायां सुगन्धा च उत्तरौष्ठे च चर्चिका।
अधरे चामृतकला जिह्वायां च सरस्वती ॥८॥

[नासिका में सुगन्धा देवी रक्षा करे, ऊपर के ओंठ की चर्चिका देवी रक्षा करे। निचले ओंठ की अमृतकला देवी रक्षा करे। और जिह्वा में विराजमान होकर सरस्वती देवी रक्षा करे।]

दन्तान् रक्षतु कौमारी, कण्ठ देशे तु चण्डिका।
घण्टिकां चित्रघण्टा च, महामाया च तालुके ॥९॥

[दांतों की कौमारी देवी रक्षा करे, कण्ठ की चण्डिका। चित्रघण्टा देवी घण्डी की तथा महामाया तालु में विराजित होकर रक्षा करे।]

कामाक्षी चिबुकं रक्षेत्, वाच मे सर्वमङ्गला।
ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे धनुर्धरी ॥१०॥

[कामाक्षी ठोड़ी की रक्षा करे और सर्वमङ्गला वाणी की। भद्रकाली ग्रीवा के भीतरी भाग की और धनुर्धरी देवी पृष्ठवंश (रीढ़ की हड्डी) में रहकर मेरी रक्षा करे।]

नीलग्रीवा बहिःकण्ठे, नलिकां नलकूवरी।
स्कन्धयोः खड्गनी रक्षेत्, बाहू मे वज्रधारिणी ॥११॥

[नीलग्रीवा देवी गले के बाहरी भाग में विराजमान होकर रक्षा करे, नलकूवरी कण्ठनली में रहकर उसकी रक्षा करे। दोनों कंधों की खड्गिनी देवी रक्षा करे और मेरी दोनों बांहों की वज्रधारिणी रक्षा करे।]

हस्तयोर्दण्डिनी रक्षेदम्बिका चाङ्गुलीषु च।
नखान् शूलेश्वरी रक्षेत्, कुक्षौ रक्षेत् कुलेश्वरी ॥१२॥

[दोनों हाथों में दण्डिनी रक्षा करे और अंगुलियों में अम्बिका रक्षा करे। नखों की शूलेश्वरी रक्षा करे और कुलेश्वरी कुक्षि (पेट) में रहकर रक्षा करे।]

स्तनौ रक्षेत् महादेवी मनःशोकविनाशिनी।
हृदये ललिता देवी उदरे शूलधारिणी ॥१३॥

[दोनों स्तनों की महादेवी रक्षा करे और शोकविनाशिनी मन की। ललिता देवी हृदय में और शूलधारिणी उदर में रहकर रक्षा करे।]

नाभी च कामिनी रक्षेत्, गुह्यं गुह्येश्वरी तथा।
पूतना कामिका मेढ्रं, गुदे महिषवाहिनी ॥१४॥

[नाभि में रहकर कामिनी देवी रक्षा करे और गुप्तेन्द्रिय की गुह्येश्वरी देवी रक्षा करे। पूतना और कामिका लिंग की रक्षा करे और महिषवाहिनी गुदा की रक्षा करे।]

कट्यां भगवती रक्षेत्, जानुनी विन्ध्यवासिनी।
जङ्घे महाबला रक्षेत् सर्वकामप्रदायिनी ॥१५॥

[कमर में विराजमान होकर भगवती रक्षा करे और दोनों घुटनों की विन्ध्यवासिनी रक्षा करे। सब कामनाएं पूरी करने वाली महाबला दोनों जांघों की रक्षा करे।]

गुल्फयोर्नारसिंही च पादपृष्ठे तु तैजसी।
पादाङ्गुलीषु श्री रक्षेत्, पादाधस्तलवासिनी ॥१६॥

[नारसिंही दोनों गुल्फों (गिट्टों) की रक्षा करे और पैरों के पिछले भाग की तैजसी देवी रक्षा करे। पैरों की अंगुलियों में श्री देवी रक्षा करे और पादतलवासिनी पैरों के तलुओं की रक्षा करे।]

नखान् द्रंष्ट्राकराली च केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी।
रोमकूपेषु कौवेरी त्वचं वागीश्वरी तथा ॥१७॥

[द्रंष्ट्राकराली देवी नाखूनों की रक्षा करे और ऊर्ध्वकेशिनी मेरे केशों की रक्षा करे। कौवेरी रोमकूपों में विराजमान होकर रक्षा करे तथा वागीश्वरी देवी त्वचा (चमड़ी) की रक्षा करे।]

रक्तमज्जावसामांसान्यस्थिमेदांसि पार्वती।
अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं च मुकुटेश्वरी ॥१८॥

[पार्वती देवी रक्त, मज्जा, वसा (चर्बी), मांस, हड्डी, मेद (हड्डियों के भीतर की चिकनाई) की रक्षा करे और कालरात्रि देवी आंतों की रक्षा करे तथा मुकुटेश्वरी पित्ता (पित्ताशय) की रक्षा करे।]

पद्मावती पद्मकोषे कफे चूडामणिस्तथा ।
ज्वालामुखी नखज्वालाम्, अभेद्या सर्वसन्धिषु ।।१६।।

[पद्मावती पद्मकोशों (मूलाधार आदि कोशों) की, चूड़ामणि कफ की रक्षा करे। ज्वालामुखी नखों के तेज (चमक) की रक्षा करे और अभेद्या देवी सारी सन्धियों (जोड़ों) में रहकर रक्षा करे।]

शुक्र ब्रह्माणि मे रक्षेत्, छायां छत्रेश्वरी तथा ।
अहंकारं मनो बुद्धि रक्षेन्मे धर्मधारिणी ।।२०।।

[ब्रह्माणी मेरे शुक्र (वीर्य) की रक्षा करे तथा छत्रेश्वरी छाया की रक्षा करे। धर्मधारिणी मेरे अहंकार, मन और बुद्धि की रक्षा करे।]

प्राणापानौ तथा व्यानमुदानं च समानकम् ।
वज्रहस्ता च मे रक्षेत् प्राण कल्याण शोभना ।।२१।

[वज्रहस्ता देवी मेरे प्राण, अपान, व्यान, उदान तथा समान (पांचों) पवनों की रक्षा करे। कल्याण से शोभित भगवती मेरे प्राणों की (विशेषत:) रक्षा करे।]

रसे रूपे च गन्धे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी ।
सत्वं रजस्तमश्चैव रक्षेन्नारायणी सदा ।।२२।।

[रस में, रूप में, गन्ध में, शब्द में और स्पर्श में (पांच तन्मात्राओं में) विराजमान रहकर योगिनी इनकी रक्षा करे तथा नारायणी देवी सत्त्व, रज, तम (त्रिगुण) की रक्षा करे।]

आयू रक्षतु वाराही, धर्म रक्षतु वैष्णवी ।
यशः कीर्ति च लक्ष्मीं च धनं विद्यां च चक्रिणी ।।२३।।

[वाराही देवी मेरी आयु की रक्षा करे, वैष्णवी देवी धर्म की। यश, कीर्ति, लक्ष्मी, धन तथा विद्या की चक्रिणी देवी रक्षा करे।]

गोत्रमिन्द्राणि मे रक्षेत्, पशून्मे रक्ष चण्डिके ।
पुत्रान् रक्षेत् महालक्ष्मीः, भार्यां रक्षतु भैरवी ॥२४॥

[हे इन्द्राणि ! तुम मेरे गोत्र की रक्षा करो, हे चण्डिके ! तुम मेरे पशुओं की रक्षा करो। महालक्ष्मी मेरे पुत्रों की रक्षा करें तथा भैरवी देवी मेरी पत्नी की रक्षा करे।]

पन्थानं सुपथा रक्षेन्मार्गं क्षेमकरी तथा ।
राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वतः स्थिता ॥२५॥

[मेरे पथ की सुपथा देवी रक्षा करे और मार्ग की क्षेमकरी देवी। राजसभा में महालक्ष्मी मेरी रक्षा करे और सर्वत्र व्याप्त रहकर विजया देवी मेरी रक्षा करें।]

रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु ।
तत्सर्वं रक्ष मे देवि, जयन्ती पापनाशिनी ॥२६॥

[हे देवी ! (उपर्युक्त) कवच में जो स्थान नहीं कहा गया, अतः रक्षाहीन है—हे जयन्ती पापनाशिनी, तुम उसकी रक्षा करो।]

पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः ।
कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति ॥२७॥

[यदि अपना भला चाहे तो कवच के बिना कहीं एक कदम भी न जाए। कवच के द्वारा सब ओर से सुरक्षित मनुष्य जहां-जहां भी जाता है·········।]

तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सार्वकामिकः ।
यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ।
परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान् ॥२८॥

[···वहां-वहां उसे धन का लाभ होता है तथा सभी कार्यों की पूर्ति और विजय की प्राप्ति होती है। जिस-जिस कामना को वह करता है, उस-उसमें निश्चित रूप से उसे सफलता प्राप्त होती है। वह पुरुष इस भूतल पर अतुल महान ऐश्वर्य को प्राप्त करता है।]

निर्भयः जायते मर्त्यः, संग्रामेस्वपराजितः ।
त्रैलोक्ये तु भवेत् पूज्यः कवचेनावृतः पुमान् ॥२६॥

[इस देवी कवच से सुरक्षित हुआ मनुष्य निर्भय हो जाता है। वह युद्ध में कभी पराजित नहीं होता। वह तीनों लोकों में पूजित होता है।]

तन्त्र-विद्या और विश्वास

तन्त्र-विद्या श्रद्धा और विश्वास पर आधारित है। तन्त्र संसार और संसार के सुख-भोगों को मिथ्या नहीं बतलाता। तन्त्र में मानव-जीवन के तीन उद्देश्य बताए गए हैं—

१. भौतिक सुख; अर्थात् सांसारिक सुख-भोग, ऐश्वर्य की प्राप्ति,

२. उपचार, परोपकार, पर-दुःख-निवारण, रोग-निवारण आदि श्रेष्ठ कर्मों तथा कर्मकाण्ड (मूर्त पूजा, उपासना), साधना द्वारा स्वर्ग की प्राप्ति,

३. अपवर्ग अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति।

यह ठीक है कि तन्त्र-मार्ग में सम्भोग (मैथुन) को साधना का अनिवार्य अंग माना गया है, परन्तु यह जीवन का अन्तिम उद्देश्य या चरम लक्ष्य नहीं है, यह तो साधना की एक सीढ़ी मात्र है।

तन्त्र में किसी कार्य को विधि-विधान और नियम से करने का बहुत महत्त्व है। यहां बाहरी उपासना, शरीर द्वारा अनेक क्रियाएं तथा कर्म करते हुए देवी की आराधना पर बहुत बल दिया गया है। केवल मानसिक पूजा ही काफी नहीं। साधक को बहुत-सी सामग्रियां लानी पड़ती हैं, बहुत-से आयोजन करने पड़ते हैं और अनेक भिन्न-भिन्न विधियों से आराध्य देवी को प्रसन्न करना होता है।

तान्त्रिक साधना के लिए मनुष्य को अत्यन्त प्रबल होना पड़ता है, शरीर से भी और मन से भी। किसी भी कार्य को शिथिलता से, आधे मन से, ढीलेढालेपन से करने वाला तन्त्र-मार्ग की साधना

में सफल नहीं हो सकता।

कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक और गुजरात से लेकर असम तक—चाहे अजन्ता हो या एलोरा, खजुराहो हो या कोणार्क, पट्टाकडल हो या मामल्लपुरम—वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला आदि के जितने भी श्रेष्ठ नमूने पाए जाते हैं, वे प्रायः सभी तन्त्र-मार्ग के साधकों की कला-कृतियां हैं। शिव और शक्ति की विभिन्न मूर्तियां नेपाल, भूटान, तिब्बत, श्रीलंका, चीन, इंडोनेशिया तक जा पहुंचीं।

ऐश्वर्यभोग, सम्भोग और इन्द्रिय सुखभोग से तृप्त हुआ मनुष्य पूर्ण विश्वास से आगे बढ़ता है। सब सुख देख लिया, भोग लिया, इसलिए काम-वासना पर वह विजय प्राप्त कर लेता है। जो काम-तृप्त नहीं होता, कामवासना उसपर छाई रहती है। सब प्रकार के कुकर्म, हिंसा और अनिष्ट काम-वासना की अतृप्ति के कारण होते हैं, अतः तन्त्र-मार्ग काम-वासना की पूर्ति की पूरी छूट देता है; परन्तु जो कामवासना की तृप्ति पर ही रुक जाता है तथा उपासना और साधना की अगली सीढ़ी पर नहीं चढ़ता, तन्त्र में उसे 'पशु' कहा गया है।

तन्त्र-साधना साधारण व्यक्ति के वश की बात नहीं है। साधना के दौरान साधक को बहुत ज़ोर के धक्के लगते हैं, प्रबल प्रकम्पन होते हैं, ताप बढ़ जाता है. उसे भयंकर मूर्तियां दिखाई देने लग जाती हैं; परन्तु यदि उसका विश्वास सच्चा है, यदि उसका मन प्रबल है, यदि उसमें दृढ़ता, निर्भयता, धीरता तथा साहस है तो वह अपनी साधना से कभी विचलित नहीं होता और अन्त में महासिद्धि प्राप्त करता है।

जब साधक को महासिद्धि प्राप्त होती है, तो उसमें इतनी शक्ति आ जाती है कि वह वशीकरण, मारण, मोहन, उच्चाटन, दृष्टिबन्ध, प्रेतविद्या, सर्पविद्या, भविष्यज्ञान, आकर्षण, मोहन-मन्त्र, घात-प्रतिघात को खेल समझने लगता है। परन्तु यही उसकी सबसे बड़ी परीक्षा का समय होता है। यदि वह महासिद्धि का दुरुपयोग करने लग जाए, तो दूसरों को बड़ी भारी हानि पहुंचा

सकता है। इसके विपरीत, यदि वह तन्त्र के विशुद्ध पथ से विचलित नहीं होता, तो अपने मन्त्र-बल द्वारा महान लोककल्याण के कार्य कर सकता है। तन्त्र-साधना द्वारा बड़े से बड़े पद को, करोड़ों रुपये के ऐश्वर्य को, मनचाही रमणी को प्राप्त करना आदि बातें महासिद्धि प्राप्त व्यक्ति के लिए तुच्छ-छोटी बातें रह जाती हैं। तन्त्र-साधना में प्राप्त सिद्धि द्वारा मनुष्य इच्छा के अनुसार आरोग्य, धन, स्त्री, सन्तान, सम्मान और ऊंचे से ऊंचा राजपद प्राप्त कर सकता है—तन्त्र में छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी कामना की सिद्धि के लिए सूक्ष्म से सूक्ष्म विधियां बताई गई हैं। यदि उन्हें ठीक विधि-विधान से किया जाए, तो कोई कारण नहीं कि सफलता न मिले। और तन्त्र-मार्ग में सांसारिक कामनाओं की पूर्ति को गलत या हेय भी नहीं माना जाता, परन्तु तन्त्र-साधना की ऊंची स्थिति में ये सब बातें गौण हो जाती हैं। तन्त्र-साधना का चरम उद्देश्य है—शक्ति का आवाहन, शक्ति का प्रत्यक्ष दर्शन और स्वयं शक्ति-रूप बन जाना।

शक्ति के बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता। संसार में जड़-चेतन में होने वाले सारे परिवर्तन शक्ति की क्रीड़ाएं हैं। उस शक्ति पर विश्वास करके ही तान्त्रिक साधक शक्तिमान बनता है। यह शक्ति क्या है? यह शिव से अभिन्न है।

देवी भागवत में देवी ने स्वयं कहा है—"मैं और शिव सदा एक हैं। मुझमें और उनमें कोई भेद नहीं है। जो वह हैं सो मैं हूं और जो मैं हूं सो वह हैं। जो भेद है, वह मनुष्यों के मतिभ्रम के कारण है।"

सृष्टि की उत्पत्ति शिव और शक्ति के संयुक्त प्रयत्न से होती है। शक्ति और शक्तिमान जब संयुक्त हो जाते हैं, तभी सृष्टि का प्रारम्भ होता है, उसी महा-अभिनय का अनुकरण जब साधक अपनी साधिका के साथ सम्भोग की स्थिति में करता है, तो वह शिवा और शिव की आराधना करता हुआ उन्हें प्रसन्न करता है।

योगिनी तन्त्र में कहा गया है—"कलियुग में तो तन्त्रोक्त मत ही शीघ्र फल देने वाला है। जप, यज्ञ, क्रिया, कर्मकाण्ड आदि

में ये ही मन्त्र उत्तम माने गए हैं। प्राचीन काल में १४००० तन्त्र ग्रन्थ थे। अनेक तान्त्रिक सम्प्रदाय प्रचलित थे, जैसे वैष्णव तान्त्रिक सम्प्रदाय, शैव तान्त्रिक सम्प्रदाय, शाक्त तान्त्रिक सम्प्रदाय, सौर तान्त्रिक सम्प्रदाय, गाणपत्य तान्त्रिक सम्प्रदाय।

इनमें सबसे प्रधान तथा व्यापक शाक्त तान्त्रिक सम्प्रदाय ही रहा।

तन्त्र-विद्या को बहुत गोपनीय बताया गया है। यह रहस्य-विद्या है, रहस्य शास्त्र है। इसके लिए पात्र में अनेक योग्यताएं होनी चाहिए। कुञ्जिका स्तोत्र शिव पार्वती से कहते हैं—

गोपनीयं प्रयत्नेव स्वयोनिरिव पार्वति !

[हे पार्वती ! तन्त्र-विद्या की साधना अपनी योनि के समान ही गुप्त रखनी चाहिए।]

तन्त्र-साधना में महासिद्धि प्राप्त होने के उपरान्त मनुष्य में अहंकार उत्पन्न होता है। वह अपनी साधना का ढिंढोरा पीटने लगता है। अपनी विद्या को चांदी के टुकड़ों के बदले बेचने लगता है या वह पशुतुल्य होकर विषय-भोग में लीन हो जाता है, अथवा पामर होकर दूसरों को हानि पहुंचाने के मार्ग पर चल पड़ता है। इसीलिए कहा गया है—

अपने मन्त्र का किसीको उपदेश नहीं देना चाहिए। न उसे सभीमें ही (सबके सामने) कहना चाहिए। और तन्त्र-विषयक शास्त्र की रक्षा अपने शरीर के समान करनी चाहिए।

जो क्रिया शिव-शक्ति द्वारा ब्रह्माण्ड में सम्पन्न हो रही है, साधक अपनी साधिका के साथ सम्भोग-लीन होकर उसी क्रिया को पिण्ड में सम्पन्न करता है। परन्तु जो कामवासना या सम्भोग को ही लक्ष्य बना लेता है, वह मूढ है। वह शिव और शक्ति का दर्शन नहीं पा सकता। शिव-शक्ति के दर्शन के लिए बहुत भारी कर्मकाण्ड सम्पन्न करने की आवश्यकता है। तन्त्र-मार्ग भोग और कामना से दबने की नहीं, बल्कि उन्हें पूरी तरह भोगकर दबाने की विद्या सिखलाता है। जो कामनाओं से दब जाता है, वह

ऊपर नहीं उठ सकता। वह तड़पता रह जाता है, व्याकुल होता है; परन्तु उसे शक्ति के दर्शन नहीं होते। वह शक्ति के दर्शन प्राप्त कर ले, तो वह स्वयं शक्तिमान हो जाएगा। परन्तु भोग-लालसा उसे अपने तुच्छ अहं से मुक्त नहीं होने देती—फिर वह सदाशिव कैसे बन सकता है!

साधना करो, शक्ति और भगवान सदाशिव का मिलन होने दो। शिव और शक्ति आपके अन्दर विद्यमान हैं। तन्त्र-मार्गी साधक जब साधिका के साथ सम्भोग-निरत होता है, तो वह अपने 'अहं' को बीच में से हटा देता है और उस मिलन को शिव-शक्ति के मिलन का रूप दे देता है। जब अहं की, कामनाओं की और भोग की भस्म हट जाती है, तब शिव-शक्ति के तेजोमय रूप के प्रत्यक्ष दर्शन पाकर साधक कृतार्थ हो जाता है। अज्ञान से मुक्ति, जन्म-बाधाओं से मुक्ति, आनन्दमय स्थिति ही मोक्ष है।

तन्त्र-मार्ग में मन्त्र-विधान

मन्त्र का प्रयोग

तन्त्र-मार्ग में विभिन्न कामनाओं को पूर्ण करने के लिए विविध मन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। तन्त्र-शास्त्रों में मन्त्रों की साधना-विधि का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। उनका पूर्ण ज्ञान उन तन्त्र-शास्त्रों के अध्ययन से ही प्राप्त किया जा सकता है। फिर भी तन्त्र-मार्ग में मन्त्र किसी सिद्ध गुरु से ही प्राप्त करने का आदेश है और मन्त्र को गुप्त रखने पर बहुत बल दिया गया है।

तन्त्र-यन्त्र-मन्त्र का प्रयोग या तो अपने हित के लिए या दूसरे के उपकार के लिए ही करना चाहिए। किसीको हानि पहुंचाने के लिए तन्त्र का प्रयोग वर्जित है। हां, प्राणों पर बन आई हो, पदच्युत होने का भय हो, मान-सम्मान खतरे में हो, तब आत्मरक्षार्थ अन्यान्य क्रियाओं का भी विधान है। तन्त्र-विद्या में

कहा गया है—

"सभी मन्त्र, यन्त्र, तन्त्र, चेटक, साधन, योग आदि केवल तभी फलदायक होते हैं, जब उन्हें शुद्ध, सात्विक तथा पवित्र भाव से किया जाए। शारीरिक पवित्रता एवं स्वच्छता भी आवश्यक है।"

मन्त्र साधन करने से पूर्व किसी अच्छे तान्त्रिक सिद्धपुरुष की शरण लेकर उसका शिष्यत्व ग्रहण करना चाहिए। उसीके पथ-प्रदर्शन में सब कार्य करने चाहिए, तभी साधक सही मार्ग पर आगे बढ सकता है।

मन्त्रों की जातियां

तन्त्र-मार्ग में मंत्रों की पृथक्-पृथक् जातियां इस प्रकार हैं—

१. एकाक्षर मन्त्र को 'कर्तरी' कहा जाता है। २. दो अक्षरों वाले मन्त्र को 'सूची' कहा जाता है। ३. तीन अक्षरों वाले मन्त्र को 'मुद्गर' कहा जाता है। ४. चार अक्षरों वाले मन्त्र को 'मुसल' कहा जाता है। ५. पांच अक्षरों वाले मन्त्र को क्रूर' कहा जाता है। ६. छह अक्षरों वाले मन्त्र को 'शृंखला' कहा जाता है। ७. सात अक्षरों वाले मन्त्र को 'क्रकच' कहा जाता है। ८. आठ अक्षरों वाले मन्त्र को 'शूल' कहा जाता है। ९. नौ अक्षरों वाले मन्त्र को 'वज्र' या 'शक्ति' कहा जाता है। १०. दस अक्षरों वाले मन्त्र को 'परशु' कहा जाता है। ११. ग्यारह अक्षरों वाले मन्त्र को 'चक्र' कहा जाता है। १२. बारह अक्षरों वाले मन्त्र को 'कुलिश' कहा जाता है। १३. तेरह अक्षरों वाले मन्त्र को 'नाराच' कहा जाता है। १४. चौदह अक्षरों वाले मन्त्र को 'भुशुण्डी' कहा जाता है। १५. पंद्रह अक्षरों वाले मन्त्र को 'पद्म' कहते हैं।

भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए भिन्न-भिन्न जाति के मन्त्रों का जाप किया जाता है। जैसे—मन्त्र छेदन में 'कर्तरी' जाति के मन्त्र का जाप किया जाता है। भंजन कार्यों में 'मुद्गर' जाति के मन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। क्षोभ में 'मुसल' जाति के मन्त्र का जाप किया जाता है। बन्धन आदि में 'शृंखला' जाति के

मन्त्र का जाप किया जाता है । छेदन-कार्यों में 'ककच' का जाप होता है । धातु-कर्म में 'शूल' जाति के मन्त्र का जप होता है । स्तम्भन आदि सिद्धि में 'वज्र' जाति के मन्त्र का जप होता है । बन्धन कर्म में 'शक्ति' जाति के मन्त्रों का जाप होता है। विद्वेषण में 'परशु' जाति के मन्त्रों का जाप होता है। सब तरह के कार्यों की सिद्धि के लिए 'चक्र' जाति के मन्त्रों का जप होता है । उत्सादन में 'कुलिश' जाति के मन्त्रों का जाप किया जाता है। शत्रु सेना में भेद के लिए 'नाराच' जाति के मन्त्रों का जाप होता है। मारण आदि में 'भुशुण्डी' जाति के मन्त्रों का जप होता है । शक्ति-कार्यों में 'पद्म' जाति के मन्त्रों का जाप होता है ।

मन्त्र-प्रकार

१. जिस मन्त्र के प्रारम्भ में नाम लिया जाए वह 'पल्लव' कहलाता है।

२. जिस मन्त्र के अन्त में नाम लिया जाए वह 'योजन' कहलाता है।

३. नाम के आरम्भ, मध्य या अन्त में मन्त्र हो तो उसे 'रोध' कहते हैं।

४. नाम के प्रत्येक अक्षर के पीछे जो मन्त्र होता है, उसे 'पर' कहते हैं ।

५. नाम के आरंभ में मन्त्र तथा अन्त में वही विलोम (उलटा) मंत्र होने से उसे 'सम्पुट' कहा जाता है ।

६. यदि प्रथम दो वर्ण मन्त्र के हों और उसके अनन्तर दो वर्ण नाम के हों तो ऐसे मन्त्र को 'विदर्भ' कहा जाता है।

७. मन्त्र के बीच में नाम हो तो वह 'वेषण' मंत्र कहलाता है।

८. नाम के मध्य में मन्त्र ग्रथित हो तो उसे 'वैयक' मन्त्र कहते हैं ।

किस कार्य में किस प्रकार के मन्त्र का प्रयोग

कार्य	मन्त्र
मारण, विद्वेषण, उच्चाटन	पल्लव

वशीकरण, शान्ति, मोहन	योजन
ज्वर, पीड़ा आदि निवारण	रोध
शान्ति कर्म	पर
कीलन, त्राटक, रक्षा आदि	स्फुट
पुष्टि कर्म	विदर्भ
वशीकरण, मोहन आदि	वैयक

ध्वनि

मन्त्रों के अन्त में प्रयोग की जाने वाली ध्वनि (आवाज) को ही ध्वान कहते हैं। भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए भिन्न-भिन्न ध्वानों का प्रयोग किया जाता है। जैसे—

ध्वान	कार्य
हुं	बन्धन, उच्चाटन, मारण
फट्	विद्वेषण कार्य
हुं फट्	भूत-प्रेत आदि की शान्ति
वषट्	शुभ कार्य
स्वाहा	यज्ञ आदि
नमः	पूजन कार्य
स्वधा	प्रवल वशीकरण
हुं	आकर्षण में
रचस	उच्चाटन-त्राटक में
वषट्	अन्धकरण आदि में

मन्त्र-जप तथा श्वास क्रिया

आग्नेय मन्त्र जागृत करने के लिए दाईं नासा से श्वास लेना चाहिए। सौम्य मन्त्र जागृत करने के लिए बाई नासा से श्वास लेना चाहिए। सभी प्रकार के मन्त्रों को जागृत करने के लिए दोनों नासारंध्रों से श्वास लेना चाहिए।

द्रव्य-शोधन मन्त्र

कोई भी वस्तु अनेक कारणों से अशुद्ध हो सकती है। मुख्य

कारण हैं—(१) मन्त्र बल से, (२) मन्त्र साधन की प्रक्रिया से, (३) विष आदि मन्त्र द्रव्य के स्पर्श से, कीट-पतंग आदि के संपर्क से, अथवा (४) अन्य किसी प्रकार से। वस्तु किसी भी कारण से अशुद्ध हो गई हो, उसे निम्नलिखित मन्त्र का १०८ (एक सौ आठ) बार जप करने से वह वस्तु शुद्ध हो जाती है।

द्रव्य-शोधन मन्त्र इस प्रकार है—

"ॐ ह्रीं त्रिपुटि त्रिपुटि कठ कठ अभिचारिक दोषं, कीट-पतंगादिस्पृष्ट दोषं, रिचादिदूषितं हन, हन, नाशय, नाशय, शोषय, शोषय, हुं फट् स्वाहा।"

कौन-सा बीज मन्त्र किस देवी-देवता का है

बीज मन्त्र	देवी-देवता
आं ह्रीं क्रौं	भुवनेश्वरी
ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः	दुर्गा
महिषमर्दिनि स्वाहा	महिषमर्दिनी
ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षिणि स्वाहा	जय दुर्गा
वद वद वाग्वादिनी स्वाहा	वागीश्वरी
ऐं क्ली नित्यक्लिन्नान्मे मुन्वस्व स्वाहा	नित्या
श्रीं ह्रीं क्लीं	त्रिपुटा
ॐ ह्रीं हुं खे च छे क्ष स्त्री हुं क्षे ह्रीं फट्	त्वरिता
ह्रीं नमो भगवती माहेश्वरी अन्नपूर्ण स्वाहा	अन्नपूर्णा
ज्वल ज्वल शूलिनि दुष्ट ग्रह हुं फट् स्वाहा	शूलिनी
श्रीं	लक्ष्मी
गं	गणेश
ग्लं	हरिद्रा गणेश
ॐ घृणि सूर्य आदित्य	सूर्य
ॐ नारायणाय नमः	विष्णु
ॐ सच्चिदेकं ब्रह्म	ब्रह्मा
ह्रीं श्रीं क्रीं परमेश्वरी स्वाहा	शक्ति
ह्रीं श्रीं क्रीं	शक्ति

परमेश्वरी स्वाहा	शक्ति
क्लीं परमेश्वरी स्वाहा	शक्ति
ह्रीं श्रीं क्लीं स्वाहा	शक्ति
ॐ ह्रीं क्लीं हूं मातंग्यै फट् स्वाहा	मातंगी

000

भारत में काल-गर्ल्ज़ के जीवन और संसार पर, रोमांचक
तथ्यों से भरपूर सनसनीखेज़ पुस्तक

कॉल गर्ल्स

डॉ० प्रोमिला कपूर

20.00

सैकड़ों अध्ययनों और साक्षात्कारों पर आधारित यह पुस्तक काल-गर्ल्स के सभी प्रकारों—कालेज की छात्राओं, अविवाहित और विवाहित लड़कियों, विधवाओं और तलाकशुदा स्त्रियों—के जीवन के सभी पक्षों पर विस्तृत प्रकाश डालती है।

"अत्यन्त पठनीय...लेखिका ने सैक्स-विषयक बातों में भी कुछ छिपाया नहीं है। हर केस, हमें सच्चाई की एक नई दुनिया देखने को मजबूर करता है।"

इलस्ट्रेटेड वीकली आफ इंडिया

"भारत में काल-गर्ल्ज़ की रोमांचक जिन्दगी और अंडरग्राउंड दुनिया पर एक महत्वपूर्ण पुस्तक यह भारत की प्राचीन सती-सावित्री धारणा का—कि यहां की प्रत्येक औरत सेक्स के भूखे मर्द की हर मांग के आगे झुक जाती है—जबरदस्त खंडन करती है।"

इंडिया टुडे

"काल-गर्ल्ज़ का वैज्ञानिक, सम्पूर्ण अध्ययन। पुस्तक इस तथ्य पर भी मनोरंजक प्रकाश डालती है कि ये लड़कियां काल-गर्ल्ज़ बनतीं क्यों हैं।"

वुमेन्स एरा

कम से कम खर्चे में अपनी या अपने परिवार के सदस्यों की बीमारियों का सही इलाज आप स्वयं कीजिए। और इसका बहुत सरल तरीका बताएगी प्रसिद्ध और अनुभवी होमियोपैथिक चिकित्सक—

डा० युद्धवीर सिंह

की महत्त्वपूर्ण संशोधित एवं परिवर्द्धित पुस्तक

सरल होमियोपैथिक इलाज

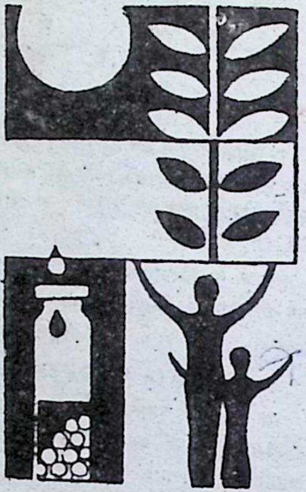

इस पुस्तक में डा० युद्धवीर सिंह ने अपने आज़माए हुए नुस्खों एवं प्रत्येक बीमारी के लक्षण और उसका प्रत्येक दवा के नाम के साथ विवरण दिया है।

15.00

आनंद पेपरबैक्स

सेक्स विशेषज्ञ डा० केवल धीर की

एक जीवनोपयोगी पुस्तक

सेक्स-तकनीक

प्रस्तुत पुस्तक विशेष रूप से उन स्त्री पुरुषों के लिए अत्यन्त उपयोगी है जो आजीवन युवा बने रहकर अपनी काम शक्ति के द्वारा चरम सुख की अनुभूति चाहते हैं। सेक्स की अधिकांश समस्याएं या 'रोग' प्रायः मानसिक होते हैं जिन्हें दूर करने के लिए औषधि सेवन की नहीं बल्कि सेक्स की यथार्थ जानकारी की आवश्यकता होती है। इस पुस्तक में बताये गये विभिन्न तरीकों से सभी स्त्री पुरुष सेक्स का वह सुख और आनंद प्राप्त कर सकेंगे जिनकी उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की होगी।

14.00

आनंद पेपरबैक्स

आनंद पेपरबैक्स के उपयोगी प्रकाशन

फिल्मों में प्रवेश कैसे?	विनोद्र तिवारी	6.00
सिंहासन बत्तीसी	मनहर चौहान	4.00
हिन्दू व्रत और पर्व	दिग्विजय	3.00
श्रीमद्भगवद्गीता	भगवान् श्रीकृष्ण	12 00
वाल्मीकि रामायण	महर्षि वाल्मीकि	14.00
महाभारत (सचित्र)	महर्षि वेदव्यास	14.00
योग द्वारा रोगों की चिकित्सा (सचित्र)	डॉ० फुलगेंदा सिन्हा	15.00
सचित्र योग विज्ञान	डॉ० फुलगेंदा सिन्हा	15.00
सरल होमियोपैथिक इलाज	डॉ० युद्धवीर सिंह	15.00
सरल प्राकृतिक चिकित्सा	आर्चाय सत्यानंद	14.00
आत्म-विश्वास से जिएं	बलराम	14.00
व्यक्तित्व का विकास	स्वेट मार्डन	15.00
सफलता का रहस्य	स्वेट मार्डन	15.00
उन्नति के शिखर	स्वेट मार्डन	15.00
निर्भय बनो उत्साह से जियो	स्वेट मार्डन	15.00
हस्तरेखाएं	पंडित आशुतोष ओझा	14.00
श्री शिव पुराण		12.00
श्रीमद् भागवत् पुराण		12.00
श्री विष्णु पुराण		12.00
श्रीमद् देवी भागवत् पुराण		12.00

अपने निकटतम पुस्तक-विक्रेता से खरीदें

या

वी० पी० द्वारा मंगवाएं।

आनन्द पेपरबैक्स

मदरसा रोड, कश्मीरी गेट, दिल्ली-110006

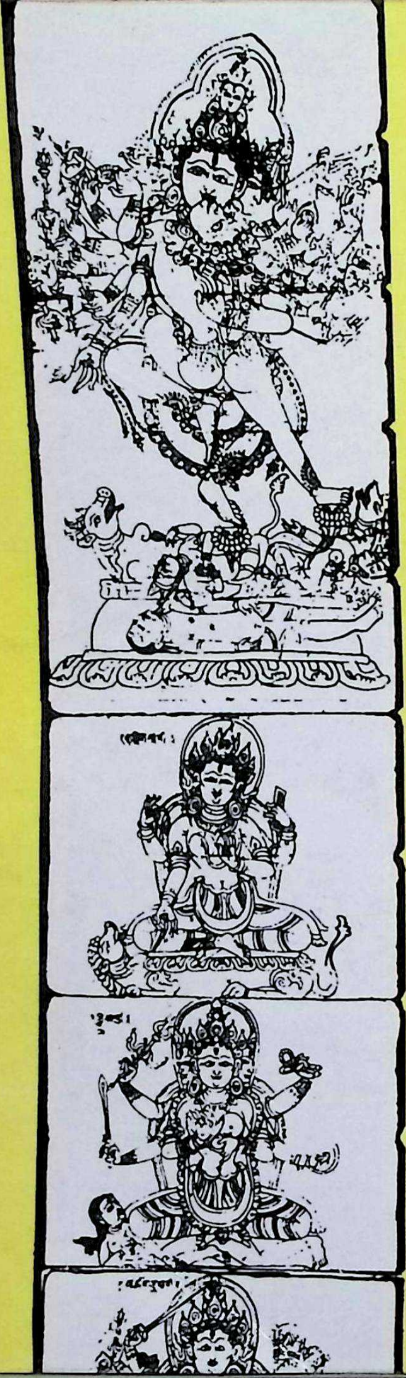

तन्त्र-विद्या

साधना सिद्धि और सैक्स

आचार्य सत्यानन्द

सांसारिक सुख-भोग, कामानन्द, ऐश्वर्य की प्राप्ति, उपचार, परोपकार, पर-दुःख निवारण, रोग-निवारण आदि श्रेष्ठ कर्मों तथा कर्मकाण्ड साधना द्वारा स्वर्ग तथा मोक्ष की प्राप्ति, ये तन्त्र-विद्या के लक्ष्य हैं; जिन्हें प्रस्तुत पुस्तक में बड़े प्रामाणिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। एक अत्यन्त रोचक तथा संग्रहणीय पुस्तक।

49 चित्रों सहित

आनंद पेपरबैक्स